CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भारत के सांस्कृतिक केंद्र

खजुराहो

कन्हैयालाल अग्रवाल

CC-0. Agamnigam Digital Preservation

भारत के सांस्कृतिक केंद्र

खजुराहो

कन्हैयालाल अग्रवाल

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

खजुराहो

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ग्रंथमाला की अन्य पुस्तकें

अजयमित्र शास्त्री

अजंता

कृष्णदत्त वाजपेयी

मथुरा

उमा पांडेय

वाराणसी

संपादक

कृष्णदत्त वाजपेयी

State Museum Library Lucknow
5240

5240

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

खजुराहो

कन्हैयालाल अग्रवाल

M

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

दि मैकमिलन कंपनी आफ इंडिया लिमिटेड
नई दिल्ली बंबई कलकत्ता मद्रास
समस्त विश्व में सहयोगी कंपनियां

© कन्हैयालाल अग्रवाल : कृष्णदत्त वाजपेयी
प्रथम संस्करण : 1980

एस जी वसानी द्वारा दि मैकमिलन कंपनी आफ इंडिया लिमिटेड के लिए प्रकाशित तथा शब्दशिल्पी द्वारा प्रगति प्रिंटर्स, दिल्ली-110032 में मुद्रित

K L Aggarwal : KHAJURAHO

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

संपादकीय

संसारप्रसिद्ध खजुराहो के मंदिर भारतीय कलाविधि के मकरध्वज हैं। ये मंदिर मध्य प्रदेश के विंध्य क्षेत्र में छतरपुर जिला में स्थित हैं। इन मंदिरों का निर्माण चंदेल वंश के शासनकाल में ईसवी नवीं शती के उत्तरार्ध से लेकर बारहवीं शती के पूर्वार्ध तक संपन्न हुआ। एक स्थानीय जनश्रुति के अनुसार खजुराहो में कुल पचासी मंदिर बनाए गए थे। इस समय केवल 25 मंदिर वहां देखने को मिलते हैं। इन मंदिरों के बनाने में दो प्रकार का पत्थर उपयोग में लाया गया : ग्रेनाइट तथा लाल बलुआ पत्थर। प्रारंभ में बने मंदिर (चौंसठ योगिनी, ब्रह्मा मंदिर तथा लाल गुआं महादेव) अधिकांशत: ग्रेनाइट पत्थर के बने हैं। शेष में दूसरे प्रकार का पाषाण प्रयुक्त हुआ है।

खजुराहो के प्राय: सभी मंदिर उत्तर भारत की 'नागर' या शिखर शैली के हैं। शैव मत के मंदिरों की संख्या सबसे अधिक है। उनके अतिरिक्त वैष्णव तथा जैन संप्रदायों के भी मंदिर यहां विद्यमान हैं। सभी मंदिरों की निर्माणशैली तथा शिल्पविधान में प्राय: समान तत्व मिलते हैं। शैव, वैष्णव या जैन मंदिर होने के नाते उनमें कुछ विशेष सांप्रदायिक मूर्तियों के अतिरिक्त तकनीक में कोई उल्लेखनीय अंतर नहीं मिलता। विभिन्न संप्रदायों के मंदिरों का आसपास निर्माण खजुराहो में व्याप्त धार्मिक सहिष्णुता का द्योतक है।

खजुराहो के ये मंदिर प्राय: ऊंची चौकी या जगती के ऊपर बनाए गए हैं। उनके चारों ओर किसी प्रकार का घेरा या दीवार नहीं है। इनका निर्माण पूर्व-पश्चिमाभिमुख धुरी के ऊपर हुआ है। जगती के ऊपर जो अंग बने हैं उनकी शास्त्रीय संज्ञाएं 'अधिष्ठान' तथा 'जंघा' हैं। उन्हें विविध अलंकरणों से सुशोभित किया गया है। जंघा की ठोस दीवार के निर्माण में विशेष कारीगरी देखने को मिलती है। प्रकाश और वायु के लिए जालीदार खिड़कियों की व्यवस्था की गई है। खिड़कियों के बीच बीच में कलापूर्ण प्रतिमाओं का विधान है। दीवार के ऊपर मंदिरों की छतों को पर्वत शिखरों के ढंग पर दिखाया गया है। इन सबका अंत सबसे ऊपरी शिखर में होता है। यह शिखर मंदिर के उस गर्भगृह के ठीक ऊपर होता है, जहां प्रधान प्रतिमा विराजमान रहती है।

खजुराहो के अधिक विकसित मंदिरों में उनकी ग्रीवा पर गोल आमलक, चंद्रिकाएं, छोटे आमलक तथा कलश मिलते हैं। शिखर शैली के इन मंदिरों की

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कल्पना इस बात की परिचायक है कि इनका निर्माण कैलाश पर्वत के आधार पर हुआ। कैलाश को शिव-पार्वती का निवासस्थल माना जाता है। मंदिरों के भीतरी भाग में गर्भगृह या मुख्य प्रतिमास्थल के अतिरिक्त जो अन्य अंग मिलते हैं उनके शास्त्रीय नाम 'अर्ध मंडप', 'मंडप' तथा 'अंतराल' हैं। मंदिर में प्रवेश करते समय ये क्रमशः पड़ते हैं। बड़े मंदिरों में मंडप का आकार विशाल हो गया है जिसे 'महा-मंडप' कहा जाता है। मंदिरों में प्रवेशद्वार को 'मकर तोरण' कहते हैं जो विविध अलंकरणों से सुसज्जित रहता है। उसके बाद ही 'अर्धमंडप' आता है जो एक लंबे मार्ग के रूप में होता है।

खजुराहो के प्रारंभिक मंदिरों में वास्तु तथा मूर्तिशिल्प का वैसा निखरा हुआ रूप नहीं मिलता जैसाकि परवर्ती मंदिरों (लक्ष्मण, पार्श्वनाथ, विश्वनाथ, कंदरीय आदि) में द्रष्टव्य है। बाद के बने हुए मंदिरों में वास्तु विषयक विभिन्न अंग उन्नत रूप में दिखाई देते हैं। प्रतिमाओं तथा अन्य अलंकरणों का स्वरूप भी उनमें परिष्कृत मिलता है। इन दोनों तत्वों का समन्वय निस्संदेह सोने में सुहागा की तरह, मणि-कांचन योग जैसा है।

भारतीय वास्तुशास्त्र के मान्य सिद्धांतों को खजुराहो के कलाकारों ने बड़ी सफलता के साथ चरितार्थ किया। भारतीय कला के इतिहास में गुप्त युग के पहले प्रायः स्थापत्य कला का महत्व था। मंदिरों, स्तूपों, विहारों आदि में वास्तु पक्ष प्रधान था। मूर्ति कला को प्रायः उन इमारतों को अलंकृत करने वाला माना जाता था। मौर्य तथा शुंगकालीन कला इसका उदाहरण है। गुप्त काल में मूर्तियों को वैशिष्ट्य प्राप्त हुआ। खजुराहो के कलाकारों ने वास्तु तथा मूर्ति दोनों कलाओं के महत्व पर यथोचित बल देकर कला को नूतनता प्रदान की। मौर्यों, शुंगों, सातवाहनों तथा कुषाणों के समय में इमारतों की भव्यता और विशालता पर बल दिया गया। गुप्तकालीन मंदिर प्रायः लघु और सादे आकार-प्रकार वाले मिलते है पर उनमें प्रतिमाओं की चारुता और भावप्रवणता दर्शनीय है। खजुराहो में दोनों तत्वों में सामंजस्य है। वहां के मंदिरों में वास्तु की भव्यता के साथ साथ विविध प्रतिमाओं का शिल्प संयोजन उत्कृष्ट ढंग का है।

खजुराहो में उपलब्ध बहुसंख्यक मूर्तियों को हम विविध वर्गों में विभाजित कर सकते हैं। पहले वर्ग में पूज्य देवप्रतिमाएं आती हैं जिनका निर्माण पूजा के लिए किया गया। ये मूर्तियां प्रायः चारों ओर से कोर कर बनाई गई। उन्हें मंदिरों के गर्भगृहों अथवा अन्य विशेष स्थलों पर प्रतिष्ठित किया गया। अधि-कांश देवप्रतिमाएं सीधे खड़ी हुई (समभंग रूप में) हैं। कुछ मूर्तियां छोटी हैं और कई बहुत विशाल हैं।

दूसरे वर्ग के अंतर्गत परिवार या पार्श्वदेवता आते हैं। ये अधिकतर बाहरी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

दीवालों पर या आलों पर बने हैं। इनमें विविध प्रकार के दिग्पालों, गणों, जैन शासन देवताओं आदि की मूर्तियां उल्लेखनीय हैं।

तीसरे वर्ग में विशेषत: वे प्रतिमाएं आती हैं जिन्हें सुरसुंदरी अप्सरा या मदनिका कहते हैं। इनकी संख्या अधिक है। इन्हें अनेक आकर्षक मुद्राओं में चित्रित किया गया है। कहीं वे स्नान के बाद बालों से पानी निचोड़ रही हैं, कहीं पैर से कांटा निकाल रही हैं कहीं बच्चों को दुलरा रही हैं तो कहीं शाखा-मृगों या अन्य पशु-पक्षियों से खिलवाड़ कर रही हैं। उन्हें कहीं प्रसाधन करते हुए या आभूषण पहनते हुए दिखाया गया है तो कहीं वीणा, वंशी आदि वाद्ययंत्र बजाते हुए। कहीं वे गेंद खेल रही हैं तो कहीं प्रेमपत्र लिख रही हैं। इन प्रतिमाओं में विविध नायिकाओं के मूर्तरूप देखने को मिलते हैं, जिनके रोचक वर्णन भारतीय साहित्य में उपलब्ध हैं। लालित्य और माधुर्य के सर्वोत्तम प्रतिनिधि रूप में नारी का अंकन खजुराहो की कलाराशि में बिखरा पड़ा है।

चौथे वर्ग के अंतर्गत घरेलू जीवन संबंधी दृश्य रखे जा सकते हैं। ये दृश्य जीवन की बहुरंगी झांकी प्रस्तुत करते हैं। तत्कालीन भारतीय समाज की स्थिति को समझने के लिए ये बड़े उपयोगी हैं।

पांचवें वर्ग में पशु-पक्षियों की प्रतिमाएं आती हैं। पशुओं में सबसे अधिक शार्दूल या व्याल मिलता है जिसे प्राय: सींगों वाले शेर के रूप में चित्रित किया गया है। खजुराहो के कलाकारों को अलंकरण के रूप में इस पशु का अंकन बहुत प्रिय था। उसे हाथी, घोड़ा, मछली आदि के साथ संश्लिष्ट रूप में अनेक स्थलों पर अंकित किया गया है। अन्य अनेक पशु-पक्षियों के चित्रण भी प्रभावोत्पादक ढंग से किए गए हैं।

छठे वर्ग में प्रकृति की बहुविधि रूपराशि तथा भारतीय परंपरा के द्योतक अनेक प्रतीक सम्मिलित हैं। खजुराहो की कला में पूर्वमध्यकालीन भारत का जीवन मूर्तिमान हो उठा है। वेशभूषा, प्रसाधन, संगीत, नृत्य, आखेट, युद्ध आदि के अनेक दृश्य इस कला में देखने को मिलते हैं। इहलोक तथा परलोक की कितनी ही मनोरम भावनाएं खजुराहो की बहुसंख्यक मूर्तियों में साकार हो उठी हैं। प्रकृति और मानव जीवन के शृंगार तथा आनंदमय पक्ष को कलाकारों ने शाश्वत रूप प्रदान करने का प्रयास किया। शिल्पशृंगार का इतना प्रचुर तथा व्यापक रूप भारत के अन्य किसी कलाकेंद्र में शायद ही देखने को मिले। ललित कला के सभी अंगों—साहित्य, वास्तु, मूर्तिकला, चित्रकला, संगीत तथा नाट्य का यदि कहीं एक साथ अध्ययन-निरूपण करना है तो इसके लिए तुरंत खजुराहो की ओर इंगित करना पड़ता है।

खजुराहो में कुछ ऐसी मूर्तियों का निर्माण हुआ जिन्हें उत्तान शृंगार की

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जीती-जागती पुत्तलिकाएं कहा जाता है। ये मान्मथ मूर्तियां इस क्षेत्र में कौल-कापालिकों के तत्कालीन बढ़ते हुए प्रभाव को सूचित करती हैं। तांत्रिक विचार-धारा का यह अशालीन रूप न केवल खजुराहो में अपितु विंध्य क्षेत्र के कई भागों तथा महाकोसल और उड़ीसा के कई स्थानों में देखने को मिलता है। पुरी, भुवनेश्वर, कोणार्क आदि स्थानों में कला के इस उत्तान श्रृंगारपरक रूप को देखा जा सकता है। भारतीय समाज का एक अंग वाम मतावलंबियों द्वारा पर्याप्त प्रभावित हो चुका था। उस समाज में राजवर्ग के अतिरिक्त संभ्रांत वर्ग के सेठ, उच्च राजकर्मचारी आदि थे। उनके द्वारा कला में वामाचार को प्रोत्साहन मिला। जिसका ये प्रतिमाएं प्रत्यक्ष प्रमाण हैं।

खजुराहो का रूपविधान वस्तुत: ललित कलाओं का पुंजीभूत आकलन है। एक ओर इसमें हमें चारुत्व तत्व का सूक्ष्म अंकन मिलता है तो दूसरी ओर श्रृंगा-रिकता का उद्दाम रूप।

प्रस्तुत ग्रंथ में डा० कन्हैयालाल अग्रवाल ने खजुराहो के इतिहास तथा वहां की ललितकलाओं का विस्तृत विवेचन किया है। आवश्यक चित्र तैयार करने में हमारे शोधछात्र श्री नीरज जैन ने बड़ा श्रम किया। एतदर्थ उन्हें साधुवाद।

1 मई 1980 —**कृष्णदत्त वाजपेयी**

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्राक्कथन

चंदेल शासक खजुराहो के निर्माता थे। रासो के महोबा[1] खंड में वर्णित परंपरा से पता चलता है कि खजुराहो का सीधा संबंध चंदेलों की उत्पति से है। इस ग्रंथ के अनुसार काशी के गाहडवाल राजा इंद्रजित के पुरोहित हेमराज को हेमवती नाम अत्यंत रूपवती कन्या थी।[2] वह सोलह वर्ष की अल्पायु में ही विधवा हो गई। ग्रीष्म ऋतु की एक रात्रि में सरोवर में स्नान करते समय उसके रूप पर मोहित होकर चंद्रमा ने उसका आलिंगन कर लिया। लोकापवाद के भय से हेमवती चंद्रमा को शाप देने को उद्यत हुई। चंद्रमा ने कहा : 'मुझे शाप मत दो, प्रत्युत इस बात से प्रसन्न हो कि मेरे संसर्ग से उत्पन्न तुम्हारा पुत्र राजा होकर सारे विश्व पर शासन करेगा।'[3] चंद्रमा ने उसे यह भी कहा कि कर्णावती (केन) नदी के किनारे अपने पुत्र की उत्पत्ति के बाद वह उसे खजुराहो ले जाए और वहां यज्ञ कराए।[4] कालांतर में हेमवती के पुत्र चंद्रवर्मा ने खजुराहो में एक विशाल मांडव यज्ञ कराया। यज्ञ के लिए वेदियों का निर्माण कराया गया और कुंए में घी भरकर रहट द्वारा निरंतर उन तक पहुंचाया गया। बाद में इन्हीं वेदियों पर विशालकाय देवप्रासाद बनाए गए। अनुश्रुति में इनकी संख्या 85 बताई जाती है।

उपर्युक्त अनुश्रुति 18वीं-19वीं शती ई० में संग्रथित हुई। उसमें अतिमानवीय या दैवी बातों का सम्मिश्रण किया गया है, तो भी यह निर्विवाद है कि चंदेल

1. काशी नागरी प्रचारिणी सभा से बाबू श्यामसुंदरदास ने इसे 'परमालरासो' शीर्षक से प्रकाशित कराया था. इसके रचयिता के नाम पर विद्वानों में गहरा मतभेद है.
2. तिन राजा के विप्र हुव हेमराज सुखदाय।
   ताके एक सुता भई मनहु सुक सो श्राय ॥88॥
   कासी कल भय कन्यका हेमवती धरि नांव।
   अति सुन्दर तनु चित्रनी सोभत सील सुभाय ॥89॥
3. ग्रीष्म रितु अस्नान जु किन्निव।
   कुमुदबन्धु तब दरसन दिन्निव ॥90॥
   दिक्ख कलानिधि काम सताइव।
   उतरि तासु कंह कंठ लगाइव ॥102॥
4. शुभ कर्णावती के तीर तुव पुत्र होय सुवीर।
   × × ×
   पज्जरपुर फिरि जाय दिय दाय जज्ञ कराय।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रारंभ से ही खजुराहो से संबद्ध रहे हैं। उनके प्रारंभिक अभिलेख खजुराहो से ही प्राप्त हुए हैं। उनकी प्रारंभिक राजनीतिक गतिविधियों का केंद्र भी खजुराहो ही था। चंदेलों ने उसे भव्य मंदिरों और सुंदर सरोवरों से अलंकृत कर एक महान धार्मिक केंद्र में परिवर्तित कर दिया। चंदेलों की कलाप्रियता का ही यह परिणाम है कि भारतीय वास्तु तथा मूर्तिकला के बीच में खजुराहो के देवप्रासादों ने असाधारण गौरव प्राप्त किया। मंदिर वास्तु की नागर शैली के श्रेष्ठतम उदाहरण माने जाते हैं। वास्तुगत विशेषताओं के अतिरिक्त मूर्ति संपदा के लिए भी उनका प्रचुर महत्व है। ये मंदिर शैव, शाक्त, वैष्णव और जैन संप्रदायों से संबंधित हैं, तथापि उन सबके शिल्पविधान में प्रायः समान तत्व मिलते हैं। सांप्रदायिक पूज्य देवों के अतिरिक्त इन प्रासादों में देव-देवियों, अप्सराओं, मिथुनों, पशुओं तथा जनजीवन के विविध दृश्यों का अंकन किया गया है।

खजुराहो के ये मंदिर चंदेलकालीन मानव जीवन को प्रतिबिंबित करते हैं। शिलाओं पर मानवीय संवेगों और वृत्तियों का अंकन अत्यंत प्रभावकारी और मुखर है। इस शिल्पांकन को चंदेल युग का बोलता इतिहास कहने में अत्युक्ति न होगी। उनके समय के आचार-विचार, रीति-रिवाज, नैतिक तथा धार्मिक जीवन खजुराहो के शिलापट्टों में मुखरित हैं। कनिंघम, हैवेल, फर्ग्युसन, स्मिथ, पर्सी ब्राउन, स्टैला क्रेमरिश, कृष्णदेव, जनास और एवाय, उर्मिला अग्रवाल, विद्याप्रकाश, रामाश्रय अवस्थी आदि ने खजुराहो कलाकृतियों की वाणी को लिपिबद्ध करने का सराहनीय श्रम किया। कनिंघम, हैवेल आदि कतिपय लेखकों के ग्रंथों में खजुराहो कला का एकांगी सर्वेक्षण है। उर्मिला अग्रवाल, विद्याप्रकाश, रामाश्रय अवस्थी आदि के प्रबंधों में मुख्यतः खजुराहो के मूर्तिशास्त्रीय पक्ष का विवेचन किया गया है। हिंदी में अभी तक ऐसी पुस्तक का अभाव था जिसमें खजुराहो से संबंधित सभी पक्षों का अध्ययन हो। प्रस्तुत पुस्तक इस दिशा में एक लघु प्रयास है। इसकी योजना इस प्रकार है।

प्रथम अध्याय में खजुराहो की भौगोलिक पृष्ठभूमि पर प्रकाश डाला गया है। द्वितीय में वर्ण्य विषय के रूप में ऐतिहासिक सर्वेक्षण प्रस्तुत किया है। तृतीय अध्याय में शिल्पों के आधार पर सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास का वर्णन है। चतुर्थ अध्याय खजुराहो की धार्मिक अवस्था पर प्रकाश डालता है। पंचम अध्याय में खजुराहो की वास्तुकला का संक्षिप्त विवेचन दिया गया है। विपुल मूर्ति संपदा का वर्णन छठे अध्याय में है। विषय की व्यापकता को देखते हुए इस अध्याय में केवल विशिष्ट मूर्तियों का ही उल्लेख किया जा सका है। सप्तम अध्याय में खजुराहो से प्राप्त सभी अभिलेखों को हिंदी अनुवाद सहित दिया गया है। अंतिम अध्याय उपसंहार है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रस्तुत पुस्तक के प्रणयन में लेखक को अनेक महानुभावों से सहायता मिली है। सर्वप्रथम में अपने आदरणीय मित्र श्री नीरज जैन का उल्लेख करना चाहूंगा। पुस्तक रचना में उनके विद्वतापूर्ण विचारों एवं परामर्शों से मैं लाभान्वित हुआ। इसके साथ ही पुस्तक में प्रकाशित सभी छायाचित्रों का स्वयं छायांकन कर उनके प्रकाशन की अनुमति देकर उन्होंने मुझे विशेष उपकृत किया। उनकी अनुकंपा के लिए मैं हृदय से कृतज्ञ हूं। शासकीय अभयानंद संस्कृत महाविद्यालय शहडोल के श्री राघवप्रसाद शर्मा और जनता उच्चत्तर माध्यमिक विद्यालय, सतना के श्री गोविंदप्रसाद द्विवेदी से अभिलेखों के अनुवाद कार्य में प्राप्त बहुविध सहायता के लिए लेखक उनका आभारी है। मेरी पत्नी श्रीमती पुष्पा अग्रवाल ने 'गृह कारज नाना जंजाला' से मुझे मुक्त रखकर पुस्तक को शीघ्र पूरा करने में मेरा हाथ बंटाया है। गुरुवर पं० कृष्णदत्त वाजपेयी (सेवानिवृत्त टैगोर प्रोफेसर एवं अध्यक्ष, प्राचीन भारतीय इतिहास, संस्कृति तथा पुरातत्व विभाग, सागर विश्वविद्यालय) ने पुस्तक को शीघ्र समाप्त करने के लिए न केवल मुझे निरंतर प्रोत्साहित किया अपितु उसके प्रस्तुतीकरण में अमूल्य सहायता दी तथा अध्यायों को देखकर उपयोगी सुझाव दिए। उनकी सहायता और स्नेहिल व्यवहार के बिना पुस्तक यह रूप न ग्रहण कर पाती। उनके प्रति शब्दों के माध्यम से कृतज्ञता व्यक्त करना कठिन है।

30 मार्च, 1980
सतना

—कन्हैयालाल अग्रवाल

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

संक्षेपिका

आदि०	आदिपुराण
आ० स० रि०	एन्युअल रिपोर्ट आफ द आर्केलाजिकल सर्वे आफ इंडिया
इलियट ऐंड डाउसन	हिस्ट्री आफ इंडिया एज टोल्ड बाई इट्स ओन हिस्टोरियन्स
इं० हि० क्वा०	इंडियन हिस्टारिकल क्वार्टर्ली
इं० ऐं०	इंडियन ऐण्टिक्वेरी
ए० इं०	एपिग्राफिया इंडिका
ऐं० इं०	ऐंश्यंट इंडिया
क० आ० स० रि०	कनिंघम, आर्कलाजिकल सर्वे रिपोर्ट्स आफ इंडिया
कनिंघम, ज्याग्रफी	कनिंघम, ज्याग्रफी आफ ऐंश्यंट इंडिया
कार्प्स	कार्प्स इंस्क्रिप्शंस इंडिकेरम
खजुराहो स्कल्पचर्स	खजुराहो स्कल्पचर्स ऐंड देयर सिग्नीफिकेन्स
गर्दिजी	किताब जैन-उल अखबार
गु० अ०	गुप्त अभिलेख (फ्लीट, हिंदी अनुवाद)
ज० रा० ए० सो०	जर्नल आफ द रायल एशियाटिक सोसायटी
ज० ए० सो० ब०	जर्नल आफ द एशियाटिक सोसायटी आफ बंगाल
ज० बा० ब्रां० रा० ए० सो०	जर्नल आफ द बांबे ब्रांच आफ रायल एशियाटिक सोसायटी
ज० इं० हि०	जर्नल आफ इंडियन हिस्ट्री
डा० हि० ना० इं०	डाइनेस्टिक हिस्ट्री आफ नार्दर्न इंडिया
डे० हि० आ०	डेवलपमेंट आफ हिंदू आइकोनोग्रफी
नाजिम	द लाइफ ऐंड टाइम्स आफ सुल्तान महमूद आफ गजन
ब्रिग्स	राइज आफ मुस्लिम पावर इन इंडिया
बुलेटिन	बुलेटिन, ऐंश्यंट इंडियन हिस्ट्री ऐंड आर्कालाजी, सागर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लाहा, ज्याग्रफी	लाहा, ज्याग्रफी आफ ऐंश्यंट इंडिया
वाटर्स	युवान च्वांग्स ट्रैविल्स इन इंडिया
वि० ध०	विष्णुधर्मोत्तर
सरकार, ज्याग्रफी	सरकार, स्टडीज इन ऐंश्यंट ऐंड मेडिकल ज्याग्रफी आफ इंडिया
होडीवाला	स्टडीज इन इंडो-मुस्लिम हिस्ट्री

अन्य संक्षेप

ई० स०	ईसवी सन
क्र०	क्रमांक
खं०	खंड
टि०	टिप्पणी
पं०	पंक्ति
पृ०	पृष्ठ
श्लो०	श्लोक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अनुक्रम

1. भौगोलिक पृष्ठभूमि/1
2. राजनीतिक इतिहास / 7
3. सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास / 16
4. धार्मिक केंद्र / 34
5. वास्तुकला / 44
6. मूर्तिकला / 67
7. अभिलेख / 125

संदर्भ सूची / 167

चित्रसूची / 171

अनुक्रमणी / 173

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

1

भौगोलिक पृष्ठभूमि

पूर्व मध्यकालीन चंदेल राजवंश की प्रारंभिक राजधानी खजुराहो मध्य प्रदेश के छतरपुर जिला में स्थित है। यह स्थान मध्य रेलवे के हरपालपुर स्टेशन से 100 किलोमीटर, महोबा रेलवे स्टेशन से 55 किलोमीटर दक्षिण और सतना रेलवे स्टेशन से 120 किलोमीटर पश्चिमोत्तर में स्थित है। सभी रेलवे स्टेशनों से खजुराहो पक्की सड़कों द्वारा जुड़ा है। खजुराहो अब एक छोटे ग्राम के रूप में है जो खजुराहो सागर या 'निनोराताल' नामक तालाब के दक्षिण-पूर्वी कोने में बसा है। यहां पर विद्यमान विस्तृत भग्नावशेषों से विदित होता है कि यह चंदेलों के समय लगभग 15 किलोमीटर लंबा चौड़ा नगर था। विश्व के एक प्रमुख कला केंद्र के रूप में प्रसिद्धि के कारण अब केंद्र तथा राज्य शासन द्वारा खजुराहो क्षेत्र को भव्य पर्यटन स्थल के रूप में विकसित किया गया है।

नामकरण तथा प्राचीन इतिहास

प्राचीन युग में ख़जुराहो का क्या नाम रहा होगा, यह ज्ञात नहीं। यह स्थान जिन भौगोलिक राजनीतिक इकाइयों में सम्मिलित रहा है, उनका वर्णन इस प्रकार है:

चेदि : ऋग्वेदिक[1] युग में चेदि देश पर वसु नाम का राजा राज्य करता था। वह चेदि वंश का था, अत: उसे चैद्य कहा गया। उसके वंश के नाम पर क्षेत्र का नाम चेदि देश हो गया। पाणिनि की अष्टाध्यायी,[2] अर्थशास्त्र,[3] महाभारत,[4] पुराणादि ग्रंथों में चेदि देश का वर्णन है। बौद्ध साहित्य[5] में चेदि जनपद का नाम सोलह महाजन पदों की सूची में है। इसी प्रकार जैन साहित्य[6] में भी चेदि देश का उल्लेख है। पार्जिटर[7], प्रो० एस० एम० अली[8] प्रभृति विद्वान चेदि का तादात्म्य बुंदेलखंड से स्थापित करते हैं।

दशार्ण : बुंदेलखंड का पश्चिमी भाग, जहां धसान अथवा दशार्णा नदी प्रवाहित होती है, दशार्ण देश के नाम से विख्यात था। मौर्य युग से पूर्व इसका उल्लेख नहीं मिलता। सर्वप्रथम ऐतिहासिक युग में प्रवेश करने पर कौटिल्य के अर्थशास्त्र[9] में दशार्ण को मध्यम श्रेणी के हाथियों के लिए प्रसिद्ध कहा गया है। वाल्मीकि रामायण,[10] महाभारत,[11] पुराण,[12] बौद्ध,[13] और जैन साहित्य[14] में इसकी विस्तृत चर्चा मिलती है। चेदि देश के विपरीत इस देश का नाम चंदेल शासक परमर्दिदेव के कालंजर अभिलेख[15] में भी मिलता है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चंद्रावती : मिस्री भूगोलवेत्ता टाल्मी[16] संद्रावतीज नामक देश का उल्लेख करता है। उक्त देश की सीमाओं का वर्णन करते हुए वह कहता है कि इसके पश्चिम में कस्पिस्सी, दक्षिण में विंध्य पर्वत तथा पूर्व में तमीसस अथवा टोंस नदी है। कनिंघम[17] का मत है कि संद्रावतीज का नामकरण (चंद्रावती) चर्मण्यवती (आधुनिक चंबल नदी) के नाम पर हुआ। इसमें चंबल और टोंस नदियों का मध्यवर्ती भूभाग सम्मिलित था।

डहाल और डभाला : सिकंदर महान के सैनिक अभियान के बाद जब राजनीतिक अस्थिरता और विपत्ति के बादल दूर हुए तब चंद्रगुप्त मौर्य ने आसमुद्र एक विशाल साम्राज्य का निर्माण किया, जिसके अंतर्गत प्राय: संपूर्ण भारत था। इस साम्राज्य के स्थापित होने से अनेक जनपदों का स्वतंत्र अस्तित्व समाप्त हो गया। चेदि और दशार्ण उन्हीं जनपदों में से थे। गुप्तकाल आते आते बुंदेलखंड क्षेत्र के लिए डहाल या डभाला नामक स्वतंत्र भौगोलिक संज्ञा का प्रचलन हो गया। परिव्राजक महा-राजहस्ती के दानपत्रों[18] में इसका अनेक बार उल्लेख हुआ है। डा० फ्लीट[19] ने इसका अभिज्ञान आधुनिक बुंदेलखंड से किया।

चिचिटो : यशस्वी चीनी यात्री ह्वेनसांग[20] चिचिटो नामक देश का वर्णन करता है। उसके अनुसार यह देश उज्जैन से उत्तर पूर्व की ओर 1,000 ली या 167 मील की दूरी पर था। 'चिचिटो' की राजधानी 15-16 ली अथवा अढ़ाई मील के घेरे में थी। वहां की अधिकांश आबादी बौद्ध न थी, तथापि वहां अनेक बौद्ध विहार थे। लगभग 1,000 ब्राह्मण 10 मंदिरों में पूजा करते थे। राजा ब्राह्मण था, तो भी बौद्ध धर्म का प्रशंसक था। अधिकांश विद्वान 'चिचिटो' को आधुनिक बुंदेलखंड का वर्धनकालीन नाम मानते हैं। यही चिचिटो के समय जेजाकभुक्ति में परिवर्तित हो गया।

जेजाकभुक्ति : 9वीं शती ई० के प्रारंभ में इस क्षेत्र के पश्चिमी भूभाग में चंदेल सत्ता की स्थापना से इस प्रदेश का नामकरण जेजाभुक्ति[21], जेजाभुक्तिक[22] अथवा जेजाकभुक्ति[23] किया गया। महोबा अभिलेख[24] से ज्ञात होता है कि जयशक्ति ने अपने वंश द्वारा शासित प्रदेश का नामकरण 'जेजाभुक्ति' ठीक उसी प्रकार किया जिस प्रकार पृथु ने पृथ्वी का। जिजहोति, जजहोती और जहाहुति इसी जेजाभुक्ति या जेजाकभुक्ति के विकृत रूप हैं। दशवीं शती ई० की रचना स्कंदपुराण[25] में जजाहुति नाम का उल्लेख हुआ है जिसमें इसकी ग्राम संख्या 42 हजार बताई गई है। जुझौती का पहला स्पष्ट उल्लेख अलबीरूनी[26] ने किया है। उसके अनुसार इस देश की राजधानी खजुराहो थी, जो कन्नौज से 30 फर्सख अथवा 90 मील दक्षिण-पूर्व थी। किंतु कन्नौज से खजुराहो की वास्तविक दूरी 180 मील या 60 फर्सख है। उसके बाद 1335 ई० के लगभग अरब यात्री इब्नबतूता खजुराहो आया था।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उसने कजुर्रा का वर्णन किया है जिसका अभिज्ञान खजुराहो से किया गया है। वह लिखता है कि इस स्थान पर लगभग एक मील लंबा एक विशाल सरोवर है, जिसके निकट मंदिर हैं, जिनमें मूर्तियां हैं। इन मूर्तियों को मुसलमानों ने खंडित कर दिया। इस सरोवर के मध्य में लाल पत्थर के तीन गुंबद हैं, प्रत्येक गुंबद तिखंडा है। सरोवर के चारों कोनों पर बने हुए गुंबदों में जोगी रहते हैं, जिनकी जटाएं उनके शरीर के बराबर लंबी हैं और कड़ी तपस्या के कारण उनके शरीर पीले पड़ गए हैं। बहुत से मुसलमान उपदेश लेने के लिए उनके अनुयायी बन गए हैं।[27] धंग के खजुराहो विश्वनाथ अभिलेख[28] में भी खजुराहो को खर्जूरवाहक कहा गया है।

खजुराहो के मूलनाम की उत्पत्ति के संबंध में किंवदंती है कि नगर के एक द्वार पर दो स्वर्ण वर्ण के खजूर-वृक्ष थे। इसी से यह स्थान खजुराहो कहलाया। यह भी संभव है कि इस क्षेत्र में वृक्षों की अधिकता के कारण इसका नाम खर्जूर-वाहक या खजूरपुर पड़ गया।

यात्रामार्ग

हर्षवर्धन की मृत्यु के पश्चात जब उत्तर भारत अनेक छोटे छोटे राज्यों में विभक्त हो गया तब विंध्य क्षेत्र के पश्चिमी भाग पर चंदेलों ने और पूर्वी भाग पर त्रिपुरी के कलचुरियों ने शासन किया। चंदेलों के शासनकाल में इस क्षेत्र में पथों का पर्याप्त विकास किया गया। भोजवर्मा के अजयगढ़ प्रस्तर अभिलेख[29] से ज्ञात होता है कि आल्हू ने सुंदर सड़कों का निर्माण बड़ी कुशलता से कराया। आगे चलकर आल्हू के वंश में वासेक हुआ, जिसने चंदेलों के साम्राज्य को सभी प्रकार से निष्कंटक कर जयपुर दुर्ग (अजयगढ़) को सुंदर पथों से सुशोभित किया। इसी प्रकार कोकल्ल के वि० सं० 1058 के खजुराहो अभिलेख[30] से विदित होता है कि पद्मावती नगर सुंदर मार्गों से सुशोभित था। ये मार्ग चतुष्पथ भी बनाते थे, जिसकी पुष्टि खजुराहो के लक्ष्मण मंदिर अभिलेख[31] से होती है। उपर्युक्त प्रमाणों से प्रतीत होता है कि गगनचुंबी प्रासादों तथा उनसे संबद्ध राजमार्गों की शोभा बड़ी आकर्षक थी। चौराहे विस्तृत होते थे। मार्गों की चौड़ाई इतनी अधिक थी कि उसमें घुड़सवार तथा हाथी तीव्रगति से चल सकते थे। नगरों की स्वच्छता पर पर्याप्त ध्यान दिया जाता था। यद्यपि खजुराहो नगर के पथों का वर्णन अभिलेखों में अप्राप्य है[32]—तथापि यह नगर न केवल सुंदर मार्गों से सुशोभित रहा होगा अपितु अंतर्राज्यीय मार्गों से भी जुड़ा रहा होगा।

हर्ष के शासनकाल में चीनी यात्री ह्वेनसांग ने भारत का व्यापक भ्रमण किया। अपने भ्रमणकाल में वह वलभी, आनंदपुर, सुराष्ट्र, भिनमाल होता हुआ

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

दक्षिण पूर्व की ओर मुड़कर उज्जयिनी, जझोटि (बुंदेलखंड), महेश्वरपुर (जि० खरगोन) होता हुआ पुनः गुर्जरदेश लौट गया।[33] अपनी इस यात्रा में उसने जझोटि या बुंदेलखंड की यात्रा करते समय प्रचलित उज्जैन-विदिशा-ग्वालियर मार्ग पकड़ा। कालांतर में अलबीरूनी भी इसी मार्ग का वर्णन करता है 'माहूर और कन्नौज की दूरी उतनी ही है जितनी कन्नौज और बजान की अर्थात 18 फर्संख। यदि कोई व्यक्ति माहूर से उज्जैन की यात्रा करता है तो वह गांवों से गुजरता है, जो केवल 5 फर्संख और इससे प्रत्येक का कम अंतर है। 35 फर्संख चलने पर वह दूदही नामक बड़े गांव आता है, वहां से बामहूर, दूदही से 17 फर्संख, धार 7 फर्संख।'[34] उपर्युक्त वर्णित स्थानों में माहूर आधुनिक मथुरा है।[35] उज्जैन भारत का प्रसिद्ध नगर है जिसकी यात्रा ह्वेनसांग ने भी की थी। दूदही ललितपुर जिला मुख्यालय से 19 मील दक्षिण स्थित आधुनिक दुधई है। होडीवाला[36] के अनुसार बामहूर विदिशा से 25 मील उत्तर में स्थित बसौदा है। भाइलसां मालवा का प्राचीन नगर विदिशा है[37] जो बेतबा नदी के तट पर स्थित है। अर्दीन धार के उत्तर क्षिप्रा नदी के किनारे स्थित है।[38] धार राजा भोज की प्रसिद्ध धारा नगरी है।[39] इस प्रकार अलबीरूनी ने जिस मार्ग का वर्णन किया है वह मथुरा, दुधई, बसौदा, विदिशा, धारा आदि स्थानों से होते हुए आगे चला जाता था। इन स्थानों में दुधई, बसौदा और विदिशा के उल्लेख से सिद्ध होता है कि उज्जैन से विदिशा तक यह वही मार्ग है जिससे बावरि ब्राह्मण के शिष्यों ने यात्रा की और कुछ शताब्दियों बाद महेश्वर से उज्जैन तक ह्वेनसांग ने। ऐसा प्रतीत होता है कि मध्यप्रदेश के प्रचलित मार्गों में से यह एक था जो विंध्य क्षेत्र से होकर गुजरता था।

अलबीरूनी कन्नौज से दक्षिण की ओर वनवासी तक एक दूसरे का वर्णन करता है। वह लिखता है: 'कन्नौज से दक्षिण पूर्व की ओर गंगा के पश्चिमी किनारे के साथ साथ चलते हुए जजाहुती राज्य में पहुंच जाते हैं, जो कन्नौज से 30 फर्संख है। इस देश की राजधानी कजुराहा है। इस नगर और कन्नौज के बीच भारत के दो प्रसिद्ध किले ग्वालियर और कालंजर हैं। दहाल एक देश है जिसकी राजधानी तिओरी है और जिसका शासक इस समय गांगेय है। कन्नकर राज्य 20 फर्संख है। अप्सूर, वनवास समुद्र तट पर है।'[40]

जजाहुती, कजुराहा क्रमशः जेजाकभुक्ति और खजुराहा हैं। ग्वालियर और कालंजर सुविदित है। दहाल दाहलमंडल है, जिस पर कलचुरियों का शासन था और जिसकी राजधानी त्रिपुरी (जि० जबलपुर) थी।[41]

अलबीरूनी द्वारा वर्णित यह मार्ग कन्नौज के बाद विंध्यक्षेत्र से होकर जाता था। महमूद गजनवी का तेरहवां आक्रमण[42] जो कन्नौज, बारी और कालंजर पर 1019 ई० में हुआ संभवतः इसी मार्ग से हुआ। किंतु उसका पंद्रहवां आक्रमण

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भी इसी मार्ग से हुआ, ऐसा संभव प्रतीत नहीं होता। पहले उसने ग्वालियर दुर्ग पर विजय प्राप्त की और तब कालंजर पर आक्रमण किया।[43] ग्वालियर दुर्ग उपर्युक्त मार्ग के दक्षिण में स्थित है, अत: उसने एक दूसरे ही मार्ग से आक्रमण किया। यह यमुना नदी के किनारे का वह मार्ग था जो झांसी, चिरगांव, मोठ, कालपी, चिल्ला आदि स्थानों से होता हुआ कालंजर पहुंचता था।[44]

इस प्रकार बुंदेलखंड क्षेत्र उत्तर-दक्षिण और पूर्व-पश्चिम में अनेक मार्गों से जुड़ा हुआ था। इस क्षेत्र का प्राय: संपूर्ण भाग पहाड़ी है, अत: ये मार्ग आसानी से परिवर्तित नहीं हुए और शताब्दियों तक उपयोग में आते रहे। आज के अधिकांश मार्ग उन्हीं प्राचीन पंथों के सूचक प्रतीत होते हैं।

उपर्युक्त अध्ययन से ज्ञात होता है कि भरहुत के समान खजुराहो किसी महापथ पर स्थित न था। यह मत इस तथ्य से भी प्रकट होता है कि चंदेलों पर जितने भी आक्रमण समकालिक पड़ोसी शक्तियों और मुस्लिम आक्रांताओं द्वारा किए गए, उनमें से किसी एक में भी खजुराहो का नामोल्लेख नहीं हुआ। जैसाकि हम अगले अध्याय में देखेंगे, महमूद गजनवी ने क्रमश: दो अभियान 1019 ई० और 1022 ई० में किए। इनमें से पहले अभियान का युद्धस्थल किसी नदी के किनारे था और दूसरे अभियान का रणक्षेत्र चंदेलों का सैनिक दुर्ग कालंजर था। इसके बाद भी चाहे पृथ्वीराज चौहान ने आक्रमण किया हो या कुतुबुद्दीन ऐबक ने, वे कालंजर और महोवा को छोड़कर चंदेलों के किसी तीसरे नगर का नाम नहीं लेते। ऐसा प्रतीत होता है कि अपने धार्मिक और सांस्कृतिक केंद्र के रूप में चंदेलों ने खजुराहो का विकास वहुत सूझ-बूझ से किया था। महापथ से अलग होने के कारण किसी भी आक्रांता ने खजुराहो को अपना लक्ष्य नहीं बनाया।

संदर्भ

1. 7-5 37-39.
2. पाणिनिकालीन भारतवर्ष, पृ० 57, 84.
3. 2.2.15
4. आदि० 57.2-58.
5. अंगुत्तरनिकाय (नालंदा सं०) खंड 1, पृ० 197.
6. महापुराण (सातवीं शती) 24, 287, जैन, लाइफ इन एंश्येंट इंडिया एज डिपिक्टेड इन द जैन कैनन्स, पृ० 278.
7. ज०रा०ए०सो० (1894) पृ० 253.
8. ज्याग्रफी आफ द पुराणाज, पृ० 159.
9. 2. 2. 15.
10. 4. 41. 10.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

11. 4. 19.
12. ब्रह्मांड, अ० 49, वायु, अ० 45, मत्स्य, अ० 114, मार्कण्डेय, अ० 57, वामन, अ० 13, सरकार, ज्याग्रफी, पृ० 33-34.
13. जातक, जिल्द 3, पृ० 338, वही, जिल्द 6, पृ० 238.
14. हरिवंश पुराण, 1.36.15.
15. क० आ० स० रि, खंड 21, पृ० 37-38.
16. वही, खंड 21, पृ० 91.
17. वही, खंड 21, पृ० 58.
18. कार्पस, खंड 3, पृ० 114, पृ० 8.
19. वही, पृ० 113-14.
20. वाटर्स, खंड 2, पृ० 251.
21. ए० इं०, खंड 1, पृ० 221, श्लो० 10.
22. वही, खंड 1, पृ० 35, श्लो० 21.
23. वही, खंड 1, पृ० 195 तथा आगे.
24. वही, खंड 1, पृ० 221.
25. (मनसुखराय मोर सं०) महेश्वर खंड 39, अध्याय 142.
26. अलबीरूनीज-इंडिया, खंड 1, पृ० 202.
27. रेहला आफ इब्नबतूता, पृ० 166.
28. ए० इं०, खंड 1, पृ० 147, पं० 32-33.
29. ए०इं०, खंड 1, पृ० 330 तथा आगे.
30. वही, खंड 1, पृ० 147-51, श्लो० 5-6.
31. वही, खंड 1, पृ० 154, श्लो० 40, 'वीथीपथे चत्वरे'.
32. वही, खंड 1, पृ० 151, श्लो० 7.
33. वाटर्स, खंड 2, पृ० 249-51, लाहा, ज्याग्रफी, पृ० 509, कनिंघम, ज्याग्रफी, पृ० 405-11
34. अलबीरूनीज इंडिया, खंड 1, पृ० 202, मिश्र, ग्यारहवीं सदी का भारत, पृ० 50.
35. एंश्येंट इंडियन हिस्टारिकल ट्रेडीशन्स, पृ० 170, ला ज्याग्रफी, पृ० 106-10.
36. होडीवाला, पृ० 49-50.
37. डे, डिक्शनरी, पृ० 35, सरकार, ज्याग्रफी पृ० 34, टि० 5.
38. होडीवाला, पृ० 50.
39. स्ट्रगल फार एम्पायर, पृ० 66-67, लाहा, ज्याग्राफी, पृ० 508.
40. अलबीरूनीज इंडिया, खंड 1, पृ० 202, ग्यारहवीं सदी का भारत, 48-49.
41. ग्यारहवीं सदी का भारत, पृ० 48-49.
42. गार्दिजी, पृ० 76-77, ज०रा०ए०सो, 1909, पृ० 278.
43. गार्दिजी, पृ० 78, नाजिम, पृ० 144.
44. सार्थवाह, पृ० 24.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

2

राजनीतिक इतिहास

नन्नुक : चंदेलों ने जेजाकभुक्ति (बुंदेलखंड) पर नवीं शती ई० के प्रारंभ में चौदहवीं शती ई० के प्रथम चरण तक शासन किया। इस राजवंश का पहला शासक नन्नुक था जिसने 825 ई० के लगभग चंदेल राज्य की स्थापना की। खजुराहो लक्ष्मण मंदिर अभिलेख[1] से इस तथ्य की पुष्टि होती है। जनश्रुतियों में चंदेल वंश का संस्थापक चंद्रवर्मा बताया गया है। डा० हेमचंद्र रे[2] प्रभृति विद्वान चंद्रवर्मा को नन्नुक का विरुद मान लेने का सुझाव देते हैं। यह सुझाव प्रायः सभी विद्वान स्वीकार करते हैं। खजुराहो लक्ष्मण मंदिर अभिलेख[3] से विदित होता है कि नन्नुक के 'आदेश को उसके शत्रु पुष्पोपहार की भांति शिरोधार्य करते थे और उसका शौर्य देवताओं और अर्जुन का स्मरण दिलाता था।' निस्संदेह उपर्युक्त वर्णन सामान्य प्रशंसा है जिससे नन्नुक की राजनीतिक उपलब्धियों पर विशेष प्रकाश नहीं पड़ता। तो भी, उसके नृप, नृपति और महीपति विरुदों से उसके राजनीतिक प्रभाव का अनुमान लगाया जा सकता है।

वाक्पति : नन्नुक का पुत्र और उत्तराधिकारी वाक्पति हुआ। अभिलेखों[4] में उसे 'क्षितिप' और विंध्यपर्वत को उसका 'क्रीडागिरि' कहा गया है। विद्या और शौर्य का एक साथ आगार होने के कारण उसे पृथु और ककुस्थ से भी बढ़कर बताया गया है।

जयशक्ति और विजयशक्ति : वाक्पति के उत्तराधिकारी क्रमशः उसके दो पुत्र जयशक्ति और विजयशक्ति हुए। उन्हें अभिलेखों में वीर विशेषण से संबोधित करते हुए कहा गया है कि, उनके अप्रतिमशौर्य से शत्रु वैसे ही नष्ट हो गए, जैसे तीव्ररूप से प्रज्ज्वलित अग्नि में जंगल जल जाते हैं।'[5] उनके लिए राजसूचक किसी विरुद का प्रयोग नहीं मिलता।

इनमें से जयशक्ति के नाम पर चंदेलों द्वारा शासित प्रदेश का नामकरण जेजाभुक्ति, जेज्जाभुक्ति अथवा जेजाकभुक्ति हुआ।[6] संभवतः जयशक्ति निस्संतान था, अतः उसके बाद विजयशक्ति शासक हुआ। खजुराहो विश्वनाथ मंदिर अभिलेख में उसकी प्रशंसा में कहा गया है कि अपने किसी 'सुहृद के उपकार के लिए विजय की आकांक्षा से राम की तरह वह दक्षिण दिशा की सीमाओं (अंत) तक चला गया।'[7] उपर्युक्त वर्णन से प्रतीत होता है कि दोनों भाइयों ने चंदेल शक्ति के उत्कर्ष का मार्ग प्रशस्त किया जिससे वे इतने अधिक लोकप्रिय हुए कि प्रायः

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सभी परवर्ती चंदेल अभिलेखों में नन्नुक के स्थान पर उन्हीं को वंश का संस्थापक बताया गया है।

राहिल : विजयशक्ति की मृत्यु के बाद उसका पुत्र और उत्तराधिकारी राहिल चंदेल राजसिंहासन पर बैठा। खजुराहो लक्ष्मण मंदिर अभिलेख से विदित होता है कि 'उसका स्मरण कर शत्रुओं को रात्रि में नींद न आती थी। वह युद्धरूपी महायज्ञ से कभी संतुष्ट न होता था। तलवार ही उसका आहुतिपात्र तथा शत्रुओं की रुधिर धार ही आहुति थी। शत्रु ही बलि पशु थे और बैर रूपी अग्नि उसके क्रोध-रूपी वायु से प्रज्ज्वलित होती थी।'[8] उसके शासनकाल में कोई महत्वपूर्ण राज-नीतिक घटना नहीं घटी, किंतु वास्तु और झीलों के निर्माण क्षेत्र में उसने वह परंपरा प्रारंभ की जिससे चंदेल भारतीय इतिहास में अमर हो गए। अजयगढ़ (जि० पन्ना) का राहिल नामांकित प्रस्तरयुक्त मंदिर[9] महोबा (जि० हमीरपुर) का राहिलसागर और बीदा जिला में कालिंजर से 30 किलो मीटर उत्तर-पूर्व बदौसा परगना में स्थित रसौया रसिनगर का निर्माण उसके ही शासनकाल में हुआ था।[10] इस प्रकार ज्ञात होता है कि वह एक उल्लेखनीय शासक था।

हर्ष : राहिल के पुत्र तथा उत्तराधिकारी हर्ष के सिंहासनारोपण के साथ ही चंदेल इतिहास में एक नए युग का आविर्भाव हुआ। यद्यपि उसके संबंध में हमारा ज्ञान सीमित है तथापि उस अल्प जानकारी से ही उसकी राजनीतिक प्रतिष्ठा और महत्ता परिलक्षित होती है। वह एक कुशल शासक था, इसीलिए उसने चाहमान राजकुमारी कंचुका से विवाह कर अपने वंश की प्रतिष्ठा में अभिवृद्धि की।[11] उसने प्रतिहारों के गृहकलह के समय भोज द्वितीय के विरुद्ध उसके सौतेले भाई महीपाल (क्षितिपाल) की सफलतापूर्वक सहायता कर चंदेल शक्ति का विकास किया। हर्षदेव के खंडित प्रस्तर अभिलेख[12] से प्रकट होता है कि राष्ट्रकूट इंद्र तृतीय के आक्रमण के फलस्वरूप अपदस्थ महीपाल (क्षितिपालदेव) को उसने पुनः सिंहासन पर बैठाया। इस घटना से चंदेलों की महान सैनिक शक्ति का आभास मिलता है। महीपाल और उसके उत्तराधिकारी निर्बल शासक थे जिससे प्रतिहार साम्राज्य क्रमशः शिथिल होता गया और अंततः कन्नौज के चतुर्दिक ही सीमित हो गया। कृष्णदेव[13] का मत है कि इस सफलता की स्मृति में उसने मातंगेश्वर मंदिर का निर्माण कराया जो बलुवे पत्थर से निर्मित खजुराहो मंदिरों में प्राचीनतम है।

यशोवर्मा : हर्ष की मृत्यु के बाद उसकी चाहमान कुलोत्पन्ना रानी कंचुकादेवी से उत्पन्न यशोवर्मा (उपनाम लक्ष्मवर्मा) नामक पुत्र शासक हुआ। खजुराहो का लक्ष्मण मंदिर अभिलेख उसकी व्यक्तिगत विशेषताओं, विस्तृत विजयों और लोक-प्रिय प्रशासन का काव्यात्मक शैली में विस्तारपूर्वक वर्णन करता है। इन पंडिताऊ

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रशंसाओं में निहित ऐतिहासिक तथ्यों से इन्कार नहीं किया जा सकता। तत्कालीन राजनीतिक परिस्थितियां उसके अनुकूल थीं और अपनी महत्वाकाक्षाएं पूर्ण करने के लिए उसे अनेक स्वर्ण अवसर प्राप्त थे। खजुराहो के उपर्युक्त अभिलेख के अनुसार वह 'गौड़रूपी क्रीड़ालता के लिए तलवार (काटने वाला) था; उसने खसों के सेनाओं की बराबरी की; कोशलों का कोश लूटा; कश्मीर के वीर का नाश किया; मिथिला के राजा को शिथिल किया; वह मालवों के लिए काल के समान गर्हित चेदिराज कांपने लगा था तथा वह कुरुरूपी वृक्ष के लिए आंधी के समान था; उसके सामने और गुर्जरों के लिए दाहकारक था।'[14] किंतु उसकी सर्वाधिक उल्लेखनीय विजय कालंजर दुर्ग की थी जिसके फलस्वरूप चंदेलों की धाक जम गई और उनकी गणना उत्तर भारत की प्रमुख शक्तियों में होने लगी।

खजुराहो के लक्ष्मण मंदिर अभिलेख के अनुसार यशोवर्मा ने भगवान विष्णु (वैकुंठ) का एक भव्य प्रासाद बनवाया था। 'उस राजा (लक्षवर्मा—यशोवर्मा) ने सुंदर स्वर्णकलशों से सुशोभित हिमगिरि के शिखरों से होड़ लगाने वाले शिखर से युक्त भगवान वैकुंठ का भव्य मंदिर बनवाया।'[15] इस मंदिर का अभिज्ञान लक्ष्मण मंदिर से किया गया है। इस देवालय में प्रतिष्ठित वैकुंठनाथ की प्रतिमा की प्राप्ति के संबंध में उपर्युक्त अभिलेख में रोचक वर्णन मिलता है : 'भोटनाथ (तिब्बत, भूटान का राजा) ने कैलाश पर्वत से पाया था। पुनः उसके बाद वह कीर (कांगड़ा) के शाही राजा के पास मित्रता के उपहारस्वरूप पहुंची; और पुनः उसे हेरंबपाल ने घोड़ों और हाथियों की एक टुकड़ी देकर प्राप्त किया। उसी हेरंबपाल के पुत्र हटापति देवपाल से वैकुंठ की यह मूर्ति शत्रु के विनाशक क्षितिधरतिलक यशोवर्मा ने प्राप्त की।'[16] उपर्युक्त प्रमाणों से ज्ञात होता है कि वास्तुकला की दृष्टि से खजुराहो के विश्वप्रसिद्ध मंदिरों के निर्माण का श्रीगणेश यशोवर्मा के द्वारा ही हुआ। उसका बनवाया लक्ष्मण मंदिर स्थापत्य की दृष्टि से अपने युग में उत्तर-भारत का सर्वाधिक विकसित और अलंकृत देवप्रासाद था।

धंग : यशोवर्मा की मृत्यु के पश्चात उसका पुत्र और उत्तराधिकारी धंग सिंहासनासीन हुआ। उसकी माता का नाम पुष्पादेवी था। धंग चंदेल शासकों में सर्वाधिक पराक्रमी और शक्तिमान हुआ। उसने अपनी सैन्यशक्ति, सामरिक नीति और कूटनीतिक प्रतिभा के बल पर पैतृक राज्य को एक सुसंगठित साम्राज्य में परिवर्तित कर दिया। उसके शासनक्षेत्र के संबंध में खजुराहो लक्ष्मण मंदिर अभिलेख में कहा गया है : 'कालंजर तक; मालव (वेतवा) नदी के किनारे भास्वत (विदिशा) तक; वहां से कालिंदी (यमुना) नदी के किनारे तक; वहां से चेदि देश की सीमाओं तक तथा वहां से गोप नामक पहाड़ तक फैला हुआ था। यह राज्य उसने खेलखेल में ही जीत लिया था।'[17]

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वि० सं० 1093 के सास-बहू अभिलेख से ज्ञात होता है कि वज्रदाम नामक कच्छपघात राजा ने 'गाधिनगर की बढ़ती हुई शक्ति का दमन किया' और उसकी अप्रतिवार्य एवं शक्तिशाली भुजाओं द्वारा विजित गोपाद्रि के दुर्ग में उसके नगाड़ों की प्रतिध्वनि ने उसका वीरव्रत पूरा किया।'[18] उपर्युक्त तथ्य की पुष्टि मदनवर्मा के मऊ प्रस्तर अभिलेख से भी होती है जिसमें कहा गया है कि उसने 'निखिलनृप (सम्राट) कान्यकुब्ज नरेंद्र को समरभूमि में जीतकर स्वयं उच्च सम्राट पद प्राप्त किया।'[19] इस तथ्य के भी अनेक प्रमाण उपलब्ध हैं कि ग्वालियर क्षेत्र के कच्छपघात अगले कई दशकों तक चंदेलों की सत्ता स्वीकार करते रहे।

धंग एक महान विजेता था। खजुराहो विश्वनाथ मंदिर अभिलेख में उसकी प्रशंसा में कहा गया है कि 'कोशल, क्रथ, सिंहल और कुंतल के राजा झुककर उसकी आज्ञाएं सुनते थे' तथा 'कांची, आंध्र, राढ़, और अंग के राजाओं की रानियां उसके कारागारों में सड़ती थीं।'[20] प्रशस्तिकार के उपर्युक्त कथन से यह अनुमान होता है कि कदाचित धंग ने इन राज्यों में अपने दूत भेजे हों, जिन्हें राजाओं ने मित्रतापूर्वक सत्कृत किया हो। इसमें संदेह नहीं कि चंदेलों के पड़ोसी राज्य उनकी शक्ति से भयभीत थे। धंग ने अंतर्देशीय राजनीति में ही भाग नहीं लिया अपितु अंतर्राष्ट्रीय राजनीति में भी सक्रिय रुचि ली। मुस्लिम इतिहासकार फरिश्ता[21] लिखता है कि पश्चिमोत्तर-भारत के शाही राजा जयपाल ने सुबुक्तगीन से लोहा लेने के लिए भारत के अन्य राजाओं से मदद मांगी और दिल्ली, अजमेर कालिंजर और कन्नौज के राजाओं ने धन और सैनिकों द्वारा उसकी सहायता की। इसी संदर्भ में महोबा से प्राप्त कीर्तिवर्मा के तिथिहीन तथा खंडित एक अभिलेख में धंग की प्रशंसा में कहा गया है कि 'शत्रुओं को तोड़ने में समर्थ (तथा) पृथ्वी के लिए मंगलकारक श्रीधंग ने अपनी भुजाओं की शक्ति से पृथ्वी के लिए बहुत बड़े भार बने हुए और अत्यंत शक्तिशाली हम्मीर की तुलना की।'[22] उपर्युक्त वर्णन से अनुमान होता है कि सुबुक्तगीन या उसके उत्तराधिकारी महमूद गजनवी ने धंग की शक्ति का परिचय पाकर ही उसके जीवनकाल में स्वयं को उत्तर-पश्चिमी सीमाप्रांत तक ही सीमित रखा।

साम्राज्य निर्माता के रूप में धंग महान था, किंतु धर्म, कला और संस्कृति के संरक्षण में वह महानतम था। खजुराहो के भव्य देवप्रासादों के रूप में मंदिर वास्तु की नागर शैली उसके शासनकाल में चरमोत्कर्ष पर पहुंची। ये मंदिर उक्त शैली के आदर्श प्रतिमान हैं तथा अपनी संगतिपूर्ण रचना, विशाल आकार और समृद्ध अलंकरण के लिए भूरि भूरि प्रशंसा के पात्र हैं। उसने अपने पिता द्वारा प्रारंभ वैकुंठनाथ (लक्ष्मण) मंदिर का निर्माण पूरा कराया तथा स्वयं भगवान शंभु (विश्वनाथ) के मंदिर का निर्माण कराकर उसमें मरकतमणि (मरकतेश्वर) से

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

निर्मित शिवलिंग तथा दूसरे प्रस्तरलिंग की प्रतिष्ठा कराई। उसके ही शासनकाल में खजुराहो में एक और श्रेष्ठ देवालय पार्श्वनाथ मंदिर का निर्माण राज्य द्वारा सम्मानित श्रेष्ठि पाहिल ने कराया।[23] कोकल्ल के खजुराहो अभिलेख[24] से ज्ञात होता है कि पद्मावती निवासी कोकल्ल ने खजुराहो में वैद्यनाथ के मंदिर का निर्माण कराया था। इस मंदिर का अभी तक अभिज्ञान नहीं हो सका।

गंड : धंग की मृत्यु के पश्चात उसका पुत्र गंड अल्पावधि के लिए चंदेल साम्राज्य का स्वामी हुआ। क्योंकि धंग 100 वर्षों से भी अधिक समय तक जीवित रहा, अतः उसका पुत्र राज्यारोहण के समय निश्चय ही वृद्ध हो चला होगा। संभवतः उसकी इसी वृद्धावस्था के कारण उसके शासनकाल में न तो कोई सैनिक अभियान हुआ और न ही यशोगाथा उत्कीर्ण कराने के लिए किसी अभिलेख की आवश्यकता हुई। तो भी, इतना निश्चित है कि उसके राज्यकाल में उत्तराधिकार में प्राप्त विशाल चंदेल साम्राज्य अक्षुण्ण बना रहा। कृष्णदेव[25] का मत है कि देवी जगदंबी और चित्रगुप्त मंदिर का निर्माण उसके शासनकाल में हुआ। इनमें से पहला मंदिर वैष्णवधर्म से और दूसरा सौरधर्म से संबंधित है।

विद्याधर : गंड का उत्तराधिकारी विद्याधर हुआ। वह अपने पितामह धंग के ही समान योग्य तथा रणकौशल में चतुर था। सिंहासनारोहण के साथ ही उसे दो बार महमूद गजनवी के आक्रमणों से निपटना पड़ा। पहली बार 1019-20 ई० में और दूसरी बार 1022 ई० में। अन्य भारतीय शासकों की भांति उसने आक्रांता के समक्ष घुटने नहीं टेके, अपितु चुनौतियों का डटकर सामना किया। इस संघर्ष के मूल कारण पर प्रकाश डालते हुए इब्न-उल-अतहर लिखता है कि 'विदा (विद्याधर) राज्यसीमा की दृष्टि से भारत का सबसे बड़ा राजा था और उसके पास सबसे बड़ी सेनाएं थीं। उसके देश का नाम खजुराह (खर्जूरवाहक या खजुराहो) था। उसने कन्नौज के राय राज्यपाल के पास इस बात के लिए डांट बताते हुए दूत भेजा कि उसने बिना युद्ध के ही अपना राज्य मुसलमानों को समर्पित कर दिया और स्वयं भाग गया। उन दोनों में एक लंबा संघर्ष छिड़ गया और वे दोनों युद्ध के लिए चल पड़े। राज्यपाल मारा गया और उसके सैनिक खेत रहे। इस सफलता से विदा (विद्याधर) और भी शरारती और मनमाना हो गया तथा उसकी कीर्ति सारे भारत में फैल गई।'[26] महमूद जब उपर्युक्त घटना से अवगत हुआ तब वह चिंतित हो उठा और युद्ध की तैयारी करने लगा। महमूद को जब विद्याधर के विरुद्ध प्रथम सैनिक अभियान में निराशा ही हाथ लगी तब उसने 1022 ई० में पुनः चंदेल राज्य पर चढ़ाई की और कालंजर दुर्ग को घेर लिया। इस बार भी उसे सफलता की विशेष आशा न रही, अतः उसने चंदेल शासक से मित्रता कर ली। महमूद के अतिरिक्त विद्याधर ने अपने प्रतिस्पर्धी—कलचुरि और परमार राजाओं

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

—पर भी विजय प्राप्त की। उपर्युक्त विवरणों से स्पष्ट होता है कि वह उत्तर भारत का प्रमुख शासक था जिसने अपने वंश के गौरव में अभूतपूर्व वृद्धि की। कृष्णदेव[27] का मत है कि चंदेल वंश का सर्वाधिक शक्तिमान शासक होने के कारण उसने अपने पूर्वजों की देवप्रासाद निर्माण कराने की परंपरा को अक्षुण्ण बनाए रखा होगा और संभवतः इसी परंपरा में खजुराहो का विशालतम और भव्यतम कंदरिया महादेव का मंदिर उसके शासनकाल में निर्मित हुआ होगा।

विजयपाल : विद्याधर के पुत्र विजयपाल के शासन में चंदेलों की सत्ता शिथिल होकर संकुचित होने लगी। इस शासक की शक्तिहीनता के फलस्वरूप त्रिपुरी के कलचुरि शासक गांगेयदेव ने प्रयाग और काशी के क्षेत्र चंदेलों से छीन लिए।[28] इसी प्रकार ग्वालियर के कच्छपघात कीर्तिराज के पुत्र मूलदेव ने अपनी स्वतंत्र सत्ता स्थापित करने के प्रयत्न प्रारंभ कर दिए[29] और दुबकुंड का कच्छपघातवंशी राजा अर्जुन भोज परमार की शरण में चला गया।[30]

देववर्मा : विजयपाल के बाद उसका पुत्र देववर्मा शासक हुआ किंतु राजवंशी अभिलेखों में विजयपाल का उत्तराधिकारी कीर्तिवर्मा बताया गया है। ऐसा प्रतीत होता है कि देववर्मा के समय चंदेल गौरव की अभूतपूर्व क्षति हुई जिसके कारण उसका नाम वंशावली से हटा दिया गया।

कीर्तिवर्मा : देववर्मा की कलचुरियों से हुए एक युद्ध में अकाल मृत्यु हो गई अतः उसका अनुजकीर्तिवर्मा शासक हुआ। उसके राज्यकाल में चंदेल साम्राज्य कलचुरि शक्ति के प्रचंड आघातों से चरमरा गया और एक समय ऐसा भी आया जब वह कलचुरियों के शक्तिसमुद्र में विलीन होता प्रतीत हुआ। किंतु कीर्तिवर्मा की सेना ने कर्ण और अन्य शत्रु राजाओं के सैन्यसमुद्र का मंथन कर राज्यलक्ष्मी वैसे ही अपने वश में कर ली जैसे विष्णु ने समुद्रमंथन द्वारा लक्ष्मी प्राप्त की थी।[31] उसने इस उपलक्ष्य में चंदेल इतिहास में पहली बार मुद्राओं का प्रचलन किया।

कीर्तिवर्मा के पश्चात क्रमशः सल्लक्षणवर्मा, जयवर्मा और पृथ्वीवर्मा शासक हुए। वे दुर्बल नरेश थे जिनमें महान शासकों की योग्यताओं का अभाव था। उनके शासनकाल घटनापूर्ण नहीं थे।

मदनवर्मा : पृथ्वीवर्मा का उत्तराधिकारी मदनवर्मा हुआ। वह एक समर्थ शासक प्रतीत होता है क्योंकि चंदेल राज्य के विभिन्न भागों से प्राप्त उसके शासनकाल के प्रस्तर एवं मूर्तिलेखों की संख्या पूर्ववर्ती किसी भी चंदेल शासक से अधिक है। इनके अतिरिक्त लगभग एक दर्जन स्वर्णमुद्राएं तथा चालीस से ऊपर रजत मुद्राएं उसके राजनीतिक वर्चस्व और साम्राज्य की उन्नत आर्थिक स्थिति की परिचायक हैं। उसका शासनकाल इसलिए भी महत्वपूर्ण है कि गोविंद्रचंद्र गाहड़वाल (1114-54 ई०) तथा जयसिंह सिद्धराज चालुक्य (1094-1142 ई०) जैसे समकालिक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

विजेताओं ने भी उसकी ओर आंख उठाने का साहस नहीं किया। इतना ही नहीं चंदेल अभिलेखों के अनुसार 'उसने चेदिराज (संभवतः गयाकर्ण) को पराभूत किया, मालवों को उन्मूलित किया और काशिराज को 'मित्राचरण में काल व्यतीत करने को' बाध्य किया।'[32] राजनीतिक स्थिरता और साम्राज्य में शांति तथा सुव्यवस्था बनी रहने के कारण इस राजा के शासनकाल में सांस्कृतिक गतिविधियों को अभूतपूर्व प्रोत्साहन मिला जिसके फलस्वरूप अनेक हिंदू तथा जैनमंदिरों का और अनेक सरोवरों का निर्माण हुआ।[33]

परर्मादि : मदनवर्मा का उत्तराधिकारी यशोवर्मा द्वितीय एक अकर्मण्य और अल्पशासी शासक था। उसका उत्तराधिकारी परर्मादि (अनुश्रुतियों का परमाल) चंदेलवंश का अंतिम विख्यात शासक था। किंतु वह भी मदनवर्माकालीन चंदेलों के अल्पकालिक पुनरुत्कर्ष को स्थाई न रखा सका। अब अवनति का क्रम तीव्र हो गया और वाह्य आक्रमणों के कारण साम्राज्य शिथिल होकर लड़खड़ाने लगा। परर्मादि 1182 ई० या उससे पूर्व ही पृथ्वीराज चौहान से बुरी तरह पराजित हुआ जिससे उसकी शक्ति छिन्न-भिन्न हो गई। लगभग इसी समय शहाबुद्धीन मुम्मद गोरी लाहौर के द्वार पर दस्तक देने लगा। 1192 ई० में पृथ्वीराज के पराजित होते ही भारत में मुस्लिम विजयों का युग प्रारंभ हुआ। इस घटना के एक शताब्दी बाद ही परर्मादि की बारी आ गई। 1202 ई० में गोरी के सिपहसालार कुतुबुद्दीन ऐबक ने कालिंजर को घेर लिया। परर्मादि कुछ समय तक तो प्रतिरोध करता रहा किंतु बाद में संधि करने को विवश हुआ। परर्मादि का स्वाभिमानी मंत्री अजयदेव, आत्मसमर्पण के लिए तैयार न था। उसने राजा को मौत के घाट उतारकर युद्ध जारी रखा। किंतु जल के अभाव में उसे आत्मसमर्पण करना पड़ा। तत्पश्चात महोबा भी चंदेलों के हाथ से निकल गया।[34]

त्रैलोक्यवर्मा : बुंदेलखंड पर कुतुबुद्दीन का आक्रमण घातक सिद्ध हुआ, तो भी, परर्मादि के पश्चात चंदेल सत्ता का अंत नहीं हुआ। परर्मादि के दुखद अंत के पश्चात उसका पुत्र और उत्तराधिकारी त्रैलोक्यवर्मा हुआ। उसके सिंहासनारोहण के समय राज्य की आंतरिक तथा वाह्य परिस्थितियां अनुकूल न थीं। भील, शबर, पुलिंद और भोजकों ने विद्रोह का झंडा खड़ा कर रखा था और मुस्लिम सेनाएं पुनः चंदेल दुर्गों पर आक्रमण करने हेतु सन्नद्ध थीं। इन कठिन परिस्थितियों में त्रैलोक्यवर्मा ने एक सुदृढ़ सेना संघटित का। 1205 ई० में वड़वारि (वेड़वाड़ा) के उत्तर-पूर्व ककड़ादह (आधुनिक ककड़वा) नामक स्थान में मुस्लिम सेनाओं से उसका जमकर युद्ध हुआ,[35] जिसमें उसे विजय प्राप्त हुई। एक बार पुनः कालिंजर सहित समस्त राज्य पर उसका अधिकार हो गया। कठोर श्रम से अर्जित विजय के लाभ का उपभोग करने के लिए वह अधिक दिनों तक जीवित न रह सका।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वीरवर्मा तथा परवर्ती शासक : मृत्यु के समय त्रैलोक्यवर्मा अपने पुत्र वीरवर्मा के लिए एक विस्तृत और शक्तिशाली राज्य छोड़ गया था, किंतु मुसलमानों के लगातार आक्रमण के फलस्वरूप चंदेलों का युग समाप्त हो चुका था और वे जिस राज्य पर शासन कर रहे थे, वह धंग और विद्याधर के साम्राज्य की छाया मात्र था। वीरवर्मा के बाद भोजवर्मा और उसके बाद हम्मीरवर्मा शासक हुए। हम्मीरवर्मा के पश्चात चंदेल वंशावली ज्ञात नहीं है।

संदर्भ

1. ए० इं०, खंड 1, पृ० 125, श्लो० 10.
2. डा० हि० ना० इं०, खंड 2, पृ० 667.
3. ए० इं०, खंड 1, पृ० 141, श्लो० 14-15.
4. वही, खंड 1, पृ० 125-26, श्लो० 12-13, इं० ऐं, खंड 37, पृ० 128.
5. ए० इं०, खंड 1, पृ० 126, श्लो० 14-15 'अमित प्रतापदावाग्निदग्धाऽहित काननानि'.
6. ए०इं०, खंड 1, पृ० 221-22.
7. वही, खंड 1, पृ० 141-42, श्लो० 20.
8. वही, खंड 1, पृ० 137, श्लो० 17
9. आ० सा० रि०, खंड 7, पृ० 226, वही, खंड 21, पृ० 15-17, ज० ए० सो० बं०, 1881, पृ० 8.
10. परमालरासो, (ना०प्र०स०), पृ० 26-27, 88 वां पद; आ० स० रि० खंड 7, पृ० 226, वही, खंड 21, पृ० 15-17.
11. ए० इं०, खंड 1, पृ० 126, श्लो० 21.
12. वही, खंड 1, पृ० 122.
13. इं०ऐं०, खंड 15, पृ० 44.
14. ए० इं०, खंड 1, पृ० 126, श्लो० 23.
15. ए० इं०, खंड 1, पृ० 129, श्लो० 42.
16. वही, खंड 1, पृ० 129, श्लो० 43.
17. वही, खंड 1, पृ० 129, श्लो० 45.
18. इं० ऐं०, खंड 15, पृ० 36 और 41, श्लो० 6.
19. ए० इं०, खंड 1, पृ० 197, 203, श्लो० 3.
20. वही, खंड 1, पृ० 145, श्लो० 45-46.
21. तारीखे-फिरिश्ता (ब्रिग्स) खंड 1, पृ० 18.
22. ए० इं०, खंड 1, पृ० 121, श्लो० 17.
23. ए० इं०, खंड 1, पृ० 148-49.
24. वही, खंड 1, पृ० 135-36.
25. ऐं० इं०, खंड 15, पृ० 45.
26. अल्-तारीख-उल् कामिल आफ इब्न-उल्-अथीर, बुलक, खंड 9, पृ० 115-16.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

27. ऍं० इं०, खंड 15, पृ० 45.
28. ए० इं०, खंड 1, पृ० 222, श्लो० 4.
29. इं० ऍं०, खंड 15, पृ० 36-42, श्लो० 12-13.
30. ए० इं०, खंड 2, पृ० 233.
31. वही, खंड 1, पृ० 222, श्लो० 26; प्रबोधचन्द्रोदय, पृ० 7-8.
32. ए० इं०, खंड 1, पृ० 198, 204.
33. इ० ऍं०, 1908, पृ० 144.
34. इलियट ऍंड डाउसन, खंड 2, पृ० 231-32; ब्रिग्स, खंड 1, पृ० 197 'दे० डा० हि० ना० इं', खंड० 2, पृ० 271.
35. ए० इं०, खंड 31, पृ० 71 तथा आगे.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

3

सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास

खजुराहो की शिल्प संपदा से तत्कालीन सामाजिक और आर्थिक इतिहास पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है। कलाकारों ने उनके निर्माण में अपनी गहन अनुभूतियों और व्यापक अनुभवों का पूरा-पूरा उपयोग किया है। यह सत्य मिलता है कि उनमें से अधिकांश प्रतिमारी आराध्यदेव और आवरण देवताओं की है, तो भी, मानव ने अपने ही रूप के अनुरूप उन्हें आकृति प्रदान की तथा अपनी कल्पनाओं से उनमें विविधता दर्शाई। इसीलिए इन देव प्रतिमाओं की वेशभूषा, आभूषण, केशविन्यास, वाद्ययंत्र, अस्त्र-शस्त्र और घरेलू उपकरण प्रायः वे ही हैं, जो तत्कालीन मानव जीवन में प्रचलित थे। इसके साथ ही खजुराहो के मंदिरों के बहुसंख्यक शिलाफलक प्रेम और घृणा, सुख और दुख, आचार और विचार, शृंगार प्रसाधन और केशविन्यास, वस्त्र और आभूषण, खेल और मनोरंजन, उद्योग और व्यवसाय कला और दस्तकारी आदि मानव जीवन के विविध पक्षों से संबंधित हैं। इनके चित्रण में खजुराहो के कलाकारों ने चरम लक्ष्य के निकट पहुंचने का प्रयास किया है।

अतः प्रस्तुत अध्याय में तत्कालीन सामाजिक तथा आर्थिक इतिहास को प्रतिबिंबित करने का प्रयत्न किया गया है।

सामाजिक इतिहास

जाति और वर्ग

प्राचीन भारतीय समाज की सर्वाधिक महत्वपूर्ण विशेषता थी उसका चार वर्णों में विभाजन, जो पहले कर्म पर आधारित था। कालांतर में जाति प्रथा का कट्टरता के साथ पालन होने के कारण यह व्यवस्था वंशानुगत हो गई। इसके परिणामस्वरूप पूर्वमध्यकाल में उच्च वर्ग के लोग अधिक लाभान्वित हुए। ब्राह्मणों ने समाज में सम्मानपूर्ण स्थिति प्राप्त की। वे उच्चपदों पर प्रतिष्ठित हुए। इतना ही नहीं विभिन्न गोत्र और प्रवर वाले ब्राह्मणों के लिए शासन की ओर ग्रामों का दान किया गया। कुछ ब्राह्मण परिवार आनुवंशिकता से महामात्य, पुरोहित, सांधिविग्रहिक और राजकवियों के पदों पर आसीन हुए।[1]

क्षत्रिय जाति योद्धा थी, जिसका मुख्य कार्य शत्रुओं से देश की रक्षा करना था। प्रामाणिक सामग्री के अभाव में उनका विस्तृत विवरण संभव नहीं। चंदेल

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अभिलेखों[2] में केवल तीन बार उनका उल्लेख हुआ है, किंतु खजुराहो शिल्प में उनका अंकन विरल नहीं है।

अन्य वर्ग जिसे विशेष सुविधाएं प्राप्त थीं, कायस्थों का था। ये राजकीय लिपिक बौद्धिक वर्ग के लोग थे, जिन्हें समाज में उच्च प्रतिष्ठा प्राप्त थी। उनकी नियुक्तियां प्रतिहार सचिव, कोषाधिकारापति आदि से महत्वपूर्ण पदों पर की गई। साधारणत: कायस्थों का कार्य लेखा-जोखा रखना था।

वैश्य लोग व्यापारिक वर्ग के थे। उनका प्रधान कार्य व्यापार तथा उद्योग-धंधों की उन्नति करना था। विवेच्यकाल में वे श्रेष्ठी कहलाते थे। चंदेल अभिलेखों में 'वैश्य' और 'शूद्र' शब्दों का अभाव है। डा० निमाइसदन बोस[3] का कथन है कि निम्नवर्ग के लोग जाति के स्थान पर अपने व्यवसायों द्वारा जाने जाते थे। वीरवर्मा के डाही दानपत्र[4] में संक्षेप में चंदेल साम्राज्य की अनेक जातियों का उल्लेख हुआ है। इनमें कायस्थ, हरकारे, गोपाल, अजपाल, मालाकार आदि उल्लेखनीय हैं। इसी प्रकार वि० सं० 1346 के चरखारी ताम्रपक्ष[5] में न केवल नापितों, महरों और धीवरों का उल्लेख है, अपितु मेधों और चांडालों तक का वर्णन है। चंदेलयुगीन उपर्युक्त निम्नवर्ग के लोगों की समुन्नत सामाजिक स्थिति का ज्ञान प्राप्त करना कठिन नहीं है। उल्लेखनीय अवसरों पर कभी भी उनकी उपेक्षा नहीं की गई। प्रतीत होता है कि जातिप्रथा आनुवंशिक होती जा रही थी और उसका अतिक्रमण निंद्य समझा जाता था। इसकी एक झलक कृष्ण मिश्र द्वारा रचित प्रबोधचंद्रोदय[6] में मिलती है, जिसमें वर्ण-व्यवस्था के औचित्य पर शंका व्यक्त की गई है।

आश्रम व्यवस्था

आश्रम व्यवस्था भारतीय संस्कृति के सामाजिक पक्ष का मूलाधार है। जीवन को कालक्रमानुसार चार भागों में विभक्त कर आश्रमों की सुंदर व्यवस्था निर्मित हुई। इन चारों चरणों को क्रमशः ब्रह्मचर्याश्रम, गृहस्थाश्रम, वानप्रस्थाश्रम और संन्यासाश्रम का नाम दिया गया है। ब्रह्मचर्याश्रम में द्विज वेदों और विविध विद्याओं का अध्ययन करता था। वह गृहस्थाश्रम में सक्रिय नागरिक के रूप में अपनी गृहस्थी बसाता था तथा संयमपूर्ण सांसारिक सुख-दुख का भोग करते हुए वानप्रस्थी बनता था। इस आश्रम में त्यागी का जीवन व्यतीत करते हुए वह संन्यासाश्रम में प्रवेश करता था और योगाभ्यास करता हुआ अपना शरीर त्याग देता था। इस आश्रम व्यवस्था की एक झलक खजुराहो शिल्पों में देखी जा सकती है।

ब्रह्मचर्याश्रम : खजुराहो शिल्प के कुछ शिलाफलकों में तत्कालीन विद्यालयों के दृश्य अंकित किए गए हैं। इनमें से पहला दृश्य मंदिर के दक्षिण-पूर्वी खूंटरा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मंदिर[7] में उत्कीर्ण है। शिलाफलक में विद्यार्थियों से घिरे आचार्य मध्य में बैठे हैं। आचार्य के बाएं हाथ में एक काष्ठफलक है, जिसपर दाएं हाथ से वह कुछ लिख रहे हैं। सभी विद्यार्थी विनीत भाव से खड़े हैं। अध्यापक के पीछे खड़ा एक विद्यार्थी अपना बायां हाथ गुरु के कंधे पर रखे हुए है। यहीं पर एक अन्य दृश्य में प्रौढ़ व्यक्तियों का एक विद्यालय प्रदर्शित किया गया है। बीच में विराजमान आचार्य के दोनों पार्श्वों में एक एक विद्यार्थी आसीन है। विद्यार्थी अपने अपने काष्ठ-फलकों को बाएं हाथ से पकड़कर दाएं हाथ से उन पर लिख रहे हैं। दोनों पार्श्वों में एक एक सेवक खड़ा है। कंदरिया-महादेव मंदिर में अंत:प्रदक्षिणा की पिछली भित्ति की एक रथिका में एक प्रौढ़ व्यक्ति को अध्ययन करते हुए दिखाया गया है। अध्यापक और अध्येता दोनों बैठे हुए हैं। अध्येता हाथ में एक तख्ती लिए हुए उससे कुछ पढ़ता हुआ प्रतीत होता है। छात्र अलंकृत वेशभूषा तथा आभूषण धारण किए है जिससे वह किसी संपन्न परिवार का प्रतीत होता है। अत: यह किसी विद्यालय का दृश्य न होकर व्यक्तिश: अध्यापन का अंकन प्रतीत होता है।

गृहस्थाश्रम : ब्रह्मचर्याश्रम के विपरीत खजुराहो शिल्प में गृहस्थाश्रम से संबंधित दृश्यों का अभाव है। तो भी, घरेलू जीवन के अनेक शिल्पांकन इस विषय पर महत्वपूर्ण प्रकाश डालते हैं। लक्ष्मण मंदिर की दाईं बहिर्भित्ति पर एक युगल अंकित है। पति अत्यंत क्रुद्ध है। पत्नी उसके कंधे पर हाथ रखकर उसे प्रसन्न करने का प्रयत्न कर रही है, किंतु वह टस से मस होता प्रतीत नहीं होता। इसी प्रकार का एक दृश्य चित्रगुप्त मंदिर की बाईं बहिर्भित्ति की मध्य सज्जापंक्ति में उत्कीर्ण है। कभी कभी पति पत्नी को फूलों का प्रेमोपहार देते हुए दर्शाया गया है। देवी जगदंबी मंदिर की बाईं बहिर्भित्ति की सबसे ऊपरी सज्जापंक्ति के एक अत्यंत मनोरम दृश्य में एक युगल अंकित है। चित्रफलक में दाएं हाथ में एक पुष्प लिए हुए एक तरुण बाएं हाथ से एक युवती का आलिंगन कर रहा है। संभवत: हाथ का फूल वह तरुणी को भेंट करना चाहता है। अनेक शिल्पों में आराम से बैठे हुए दंपत्ति वार्तालाप में लीन प्रदर्शित किए गए हैं। संभवत: वे कुछ पारिवारिक समस्याओं का हल ढूंढ़ने में मग्न हैं।[8]

मंदिरों में कहीं कहीं महत्वहीन किंतु पारिवारिक जीवन से संबंधित वास्तविक घटनाओं पर आधारित दृश्य अंकित हैं जो कलाकार के सूक्ष्मतम पर्यवेक्षण और अवलोकन के परिचायक हैं। चित्रगुप्त मंदिर की बाईं बहिर्भित्ति में एक दंपत्ति आमने सामने खड़े हैं। युवती ने हाथों से अपनी आंखें बंद कर रखी हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि पति उसे अपनी आंखें मूंद लेने पर ही कोई अप्रत्याशित वस्तु भेंट करना चाहता है। शोकपूर्ण अवसरों पर पति-पत्नी एक दूसरे का दुख बटाते थे।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अनेक शिल्पों में स्त्रियों को रोते[9], अपने आंसू छिपाते[10] तथा पुरुषों को उनके मुख से हाथ हटाते हुए दर्शाया गया है। पत्नियों को धीरज बंधाते हुए पतियों को कभी कभी उनका आलिंगन[11] करते तथा कहीं कहीं हाथ जोड़कर क्षमा मांगते[12] भी अंकित किया गया है।

दंपत्तियों का आपस में लड़ना-झगड़ना और फिर एक दूसरे को मनाना अत्यंत स्वाभाविक बात है। विश्वनाथ मंदिर की दाईं बहिर्भित्ति पर क्रोधपूर्ण मुद्रा में एक युगल उत्कीर्ण है। इसी प्रकार कंदरिया महादेव मंदिर की बाईं बहिर्भित्ति पर एक युगल एक दूसरे की ओर पीठ किए अंकित है। ये दोनों अंकन पति-पत्नी के मनमुटाव को व्यक्त करते हैं। प्रायः पुरुषों को ही अपनी पत्नियों का क्रोध दूर करने का प्रयत्न करना पड़ता था। शिल्प में वे क्रोध से मुंह फुलाए[13] खड़ी हैं या पति की ओर पीठ किए हैं।[14] पति रूठी पत्नी को मनाने के लिए अपने हाथ कंधों पर रखे हैं या उसके हाथ अपने हाथ में लिए है।[15]

कहीं कहीं पत्नी को ताड़ना देते हुए भी पति को चित्रित किया गया है।[16] लक्ष्मण मंदिर[17] के एक ऐसे ही अंकन में एक पुरुष को अपनी पत्नी की वेणी पकड़ कर खींचते हुए दिखाया गया है। स्त्री स्वयं को मुक्त कराने हेतु संघर्ष कर रही है। समीप ही एक दर्शक दुखी मन से पति-पत्नी के इस झगड़े को देख रहा है। कंदरिया महादेव मंदिर[18] में एक इसी प्रकार के अंकन में दो पुरुष एक स्त्री के दायां और बायां हाथ पकड़े हुए हैं। किंतु स्त्री हाथ जोड़कर उनसे छोड़ देने की प्रार्थना कर रही है। कभी कभी क्रोध में पतियों को पत्नियों की हत्या करने के प्रयत्न को भी रूपायित किया है।[19] यद्यपि पत्नियों के प्रति पतियों के कठोर और पाशविक आचरण का अंकन खजुराहो शिल्प में मिलता है, तथापि पत्नियों द्वारा पतियों के प्रति कठोर व्यवहार का एक भी दृश्य यहां अंकित नहीं किया गया। इससे प्रकट होता है कि स्त्रियों की स्वतंत्रता सीमित थी तथा वे सदैव पति के संरक्षण में थी।

खजुराहो के कुछ शिल्पांकनों से प्रकट होता है कि स्त्रियां पुरुषों पर कुछ प्रभाव रखती थीं। देवी जगदंबी मंदिर की दाईं बहिर्भित्ति पर एक स्त्री पुरुष के दाएं हाथ पर अपना हाथ रखकर उसे जल्दबाजी में कोई निर्णय लेने से रोक रही है। इसी प्रकार लक्ष्मण मंदिर[20] के एक शिल्प में पत्नी आयुध धारण किए हुए पति को युद्धक्षेत्र में जाने से रोक रही है।

यद्यपि समाज में स्त्रियों को पर्याप्त स्वतंत्रता प्राप्त थी, तथापि वे दुष्ट और चरित्रहीन व्यक्तियों से सर्वथा मुक्त न थीं। पतियों को उनकी रक्षा के लिए सदैव सतर्क रहना पड़ता था। खजुराहो संग्राहलय के एक शिलाफलक पर दो व्यक्ति एक दंपत्ति का पीछा करते हुए अंकित हैं। ऐसा प्रतीत होता है मानो पीछा करने

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वाले व्यक्ति स्त्री का अपहरण करना चाहते हैं। आत्मरक्षा के लिए महिलाएं स्वयं भी घातक हथियार रखती थीं। संग्रहालय के एक शिलाफलक पर एक पुरुष अपने दाएं हाथ में किसी स्त्री का बायां हाथ पकड़कर उसके स्तनों पर हाथ रखने का प्रयत्न कर रहा है। स्त्री अपने दाएं हाथ से पुरुष पर आक्रमण करती हुई प्रतीत होती है।

गृहस्थाश्रम में पतियों की देखभाल के अतिरिक्त पत्नियों का दूसरा महत्व-पूर्ण कार्य सुचारु रूप से गृहस्थी चलाना और बच्चों का लालन-पालन करना था। यद्यपि यहां के शिलाफलकों में चूल्हे-चक्की के दृश्यों का सर्वथा अभाव है तथापि स्त्रियों को कुओं, तालाबों या नदियों से घड़े में जल लाते हुए अंकित किया गया है।[21]

प्राचीन भारतीय विचारकों ने त्रिऋण—ऋषिऋण, देवऋण और पितृऋण—का वर्णन किया है। इनमें से पितृऋण का तात्पर्य है पूर्वजों का ऋण। हमारे पूर्वजों ने वंश परंपरा को बनाए रखा, अतः उनका ऋण स्वीकार करना और उसे चुकाना हमारा कर्तव्य है। खजुराहो शिल्प में माताओं और शिशुओं का अंकन प्रकट होता है कि चंदेलकाल में भी पितृऋण स्वीकार किया जाता था और गृहस्थ उसे चुकाने का प्रयत्न करता था। यहां के शिल्प में माता-शिशु के अनेक अंकन मिलते हैं, जिनमें से कुछ में मां बच्चे को दुलार रही है और अन्य में बच्चे को गोद में लिए है[22] या आम्रलुंब से बच्चे को रिझा रही है।[23] ऐसा प्रतीत होता है कि धनाढ्य अपने बच्चों की देखभाल के लिए धाय रखते थे। लक्ष्मण मंदिर के उस शिलाफलक से इस तथ्य की पुष्टि होती है जिसमें एक महिला को नौकरानी की गोद से बच्चे को लेते हुए दिखाया गया है। अन्य दृश्यों में मां दरी या चटाई पर बैठी है तथा शिशु उसके समीप खेल रहा है[24] अथवा मां अपने हाथ में शिशु को लिए है और शिशु ने अपना छोटा सा हाथ मां के स्तन पर रख दिया है।[25] स्नेहिल माताओं को शिशु को चुमकारते हुए,[26] उन्हें दूध पिलाते हुए[27] या उन्हें लाड़-प्यार करते हुए[28] भी अंकित किया गया है। कभी कभी माताओं को दो शिशुओं के साथ प्रदर्शित किया गया है। इनमें से एक शिशु को वह हाथों में लिए है तथा समीप में खड़ा दूसरा शिशु मां की गोद में चढ़ने का प्रयत्न कर रहा है।[29]

कुछ शिल्पों में माताएं शिशुओं को घुटने के बल चलना सिखा रही हैं[30] या फिर दिवार पर चित्रित या लिखित किसी वस्तु को समझा रही हैं।[31] अवकाश के क्षणों में स्त्रियां कुछ लिखती-पढ़ती या नाचती-गाती भी प्रतीत होती हैं।

वानप्रस्थ तथा संन्यास आश्रम : गृहस्थाश्रम के पश्चात व्यक्ति को वानप्रस्थ आश्रम में प्रवेश करना चाहिए। उसे वन में मूल और फल खाना चाहिए, अपने शरीर को कष्ट देना चाहिए, पंच महायज्ञ करना चाहिए तथा चोरों, पापियों या

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

निंदित आचरण वालों को छोड़कर अतिथियों का सत्कार करना चाहिए।[32] अलबीरूनी[33] वानप्रस्थियों का रोचक वर्णन करते हुए लिखता है कि वानप्रस्थी गृहस्थी को छोड़कर, ब्रह्मचर्य का पालन करता है। अगर उसकी पत्नी वानप्रस्थ नहीं अपनाती तो यह उसे अपनी संतति के सहारे छोड़ देता है। वह जन सभ्यता से बाहर रहता है और उस जीवन को पुनः अपनाता है जिसे वह सबसे पहले आश्रम में अपना चुका है। वह छाजन की छाया के नीचे आश्रय नहीं लेता और न कोई परिधान धारण करता है, केवल कटिभाग को ढंकने के लिए वृक्ष की छाल मात्र पहनता है। वह पृथ्वी पर बिना बिछावन के सोता है और केवल कंद, मूल तथा फल खाता है। वह बालों को बढ़ा लेता है और तेल नहीं मलता।

वर्णाश्रम धर्म का अंतिम चरण संन्यासाश्रम है। 'संन्यास' शब्द का तात्पर्य है 'पूर्ण त्याग'। महाभारत[34] में संन्यासी के त्यागपूर्ण जीवन का वर्णन करते हुए कहा गया है कि उसे 'अग्नि, धन, पत्नी और संतान के प्रति सर्वथा अनासक्त होकर वस्त्र, आसन, बिस्तर या सुख के लिए अन्य साधनों का परित्याग करते हुए इधर-उधर भ्रमण करते रहना चाहिए। सोना और पत्थर, शत्रु, मित्र और उदासीन, सभी को उसकी दृष्टि में समान होना चाहिए।

कोई भी व्यक्ति गृहस्थाश्रम के बाद वानप्रस्थ या सीधे संन्यास आश्रम में प्रवेश कर शेष जीवन में सत्य का अनुसंधान कर सकता था। खजुराहो मंदिरों में इन रागातीत तपस्वियों के अंकन बहुलता से प्राप्त होते हैं, जिनमें उन्हें उपदेश देते हुए, दार्शनिक गुत्थियां सुलझाते हुए या फिर भगवद् चिंतन करते हुए प्रदर्शित किया गया है। कंदरिया और देवी जगदंबी मंदिरों के अधिष्ठान के शिलाफलकों पर बैठे हुए तपस्वी दिखाए गए हैं। उनके सामने बैठा शिष्य समुदाय उनकी अमृतवाणी का पान कर रहा है। उनके हाथों में कुछ वस्तुएं हैं, जिन्हें वे उपदेश के बाद गुरु को अर्पण करेंगे। कहीं कहीं पर कुछ तपस्वी बैठे हुए अपने ही साथी का व्याख्यान सुन रहे हैं।[35] लक्ष्मण मंदिर के अर्धमंडप में एक स्थान पर एक राजा को किसी ऋषि का उपदेश सुनने के लिए एक जुलूस में जाते हुए अंकित किया गया है। कहीं कहीं ये ऋषि अपने शिष्यों को दीक्षा देते हुए भी उत्कीर्ण किए गए हैं। पार्श्वनाथ मंदिर की बाईं बर्हिभित्ति पर एक श्मश्रुल तपस्वी अपनी दाईं हथेली फैलाए आसीन है। उसकी खुली हथेली पर एक व्यक्ति अपनी बंद मुठ्ठी रखता हुआ अंकित है। इस दृश्य से ऐसा प्रतीत होता है जैसे तपस्वी उक्त व्यक्ति को दीक्षा दे रहा हो।

इन साधनाशील तपस्वियों पर समाज को शिक्षित करने का भी गुरुतर भार था। चित्रगुप्त मंदिर की बाईं वर्हिभित्ति पर एक ऋषि अपने शिष्य को पढ़ाता हुआ अंकित है। इसी प्रकार विश्वनाथ मंदिर में अभयमुद्रा में आसीन एक गुरु

S240

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अपने बाएं हाथ में कागज का एक मुठ्ठा लिए हुए ऐसा प्रतीत होता है मानो दोनों हाथ जोड़कर सामने खड़े शिष्य को कुछ समझा रहा हो।[36] एक अन्य शिलाफलक[37] पर एक चौकी के दोनों ओर एक एक व्यक्ति आसीन है। चौकी पर शास्त्र ग्रंथ रखा है। एक व्यक्ति उसे पढ़ता हुआ प्रतीत होता है, जबकि दूसरा व्यक्ति पढ़े जाने वाले अंशों की व्याख्या करता हुआ मालूम होता है।

कुछ शिल्पों में इन तपस्वियों को आपस में गंभीर दार्शनिक गुत्थियों को सुलझाते हुए चित्रित किया गया है। विश्वनाथ मंदिर की पिछली बहिर्भित्ति के एक शिलाफलक पर दो ऋषि आसीन हैं। उनमें से प्रत्येक के बाएं या दाएं हाथ में शास्त्र है और वे आपस में विचारविमर्श में संलग्न हैं। इसी प्रकार पार्श्वनाथ मंदिर की दाईं बहिर्भित्ति पर दो जैन मुनि एक एक शास्त्र ग्रंथ लिए आमने-सामने मुंह किए बैठे हैं। दोनों मुनियों के बीच एक तिपाई है, जिसपर एक मेजपोश बिछा है। दाईं ओर बैठे मुनि अपना दायां हाथ भूमि पर रखे हैं और दूसरे मुनि से शास्त्रार्थ कर रहे हैं।

वस्त्रालंकार

आकर्षक व्यक्तित्व के लिए वस्त्रालंकारों की उपयोगिता अस्वीकार नहीं की जा सकती। यह व्यक्तियों की रुचियों, जीवन के प्रति उनके दृष्टिकोण और सांस्कृतिक विकास की द्योतक है। खजुराहो शिल्पों से ज्ञात वेशभूषा के अध्ययन से तत्कालीन स्त्री-पुरुषों के जीवन पर मनोरंजक प्रकाश पड़ता है :

स्त्रियों के वस्त्र : तत्कालीन स्त्रियां साड़ी, चुनरी और चोली पहनती थीं। इन तीनों में से साड़ी की उपयोगिता सर्वोपरि थी, क्योंकि इसके पहनने से चुनरी और चोली की आवश्यकता न रहती थी। साड़ी पहनने का ढंग प्रायः आधुनिककाल जैसा ही था। तो भी, रुचि के अनुसार उसके पहनावे में विविधता परिलक्षित होती है। प्रायः सुरसुंदरियां साड़ियों में कमर से एड़ी तक लिपटी हैं। साड़ी में सामने की ओर चुन्नटें हैं, जिनका एक सिरा सामने लटकता रहता था और दूसरा सिरा कांछ की तरह पीछे खोंस लिया जाता था। यह एक प्रकार का चुस्त पहनावा था जिससे चलने-फिरने में सुविधा रहती थी।

साड़ी पहनने का दूसरा प्रकार बिल्कुल सादा था, जिसमें धोती को लुंगी के समान बांध लिया जाता था। पार्श्वनाथ मंदिर की दाईं बहिर्भित्ति की एक सुंदरी इसी प्रकार से साड़ी पहने है। साड़ी का निचला पल्ला एड़ियों से कुछ ऊपर है तथा ऊपरी पल्ला कलात्मक ढंग से कमर के चारों ओर लपेट लिया गया है। यद्यपि साड़ी की चुन्नट नहीं दिखाई देती, तथापि साड़ी का एक किनारा कमर की बाईं ओर बंधा प्रतीत होता है। विश्वनाथ मंदिर के महामंडप में बाईं ओर अंकित एक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अप्सरा इसी प्रकार से साड़ी पहने अंकित की गई है। इस प्रकार के पहनावे में साड़ी की लंबाई सामान्य से कुछ कम प्रतीत होती है। शांतिनाथ मंदिर के धरणेंद्र-पद्मावती युगल में देवी द्वारा पहनी गई साड़ी में कुछ नवीनता है जिसमें सामान्य लंबाई की साड़ी का ऊपरी छोर एक स्थान के अतिरिक्त थोड़े थोड़े अंतरालों पर कमर में लपेट लिया गया है।

खजुराहो मंदिरों की सज्जा पंक्तियों में अंकित लौकिक जीवन के चित्रों में स्त्रियों को टखने के ऊपर तक साड़ी पहने दर्शाया गया है। साड़ी इतनी चुस्त पहनी गई है कि चूड़ीदार पाजामा जैसी प्रतीत होती है। आम तौर पर साड़ी की चुन्नट का एक सिरा नाभि के नीचे तथा दूसरा सिरा कछोटे के रूप में पीछे ले लिया गया है। खजुराहो शिल्प में साड़ी पहनने के एक अन्य प्रकार में धोती से केवल घुटने तक का भाग आवृत है। इस प्रकार में धोती की लंबाई कम प्रतीत होती है, अत: उसे कमर के चारों तरफ लपेटकर चुन्नट को आगे ही बांध लिया गया है। लक्ष्मण मंदिर[38] में नृत्यमग्न एक अप्सरा इसी प्रकार से धोती पहने है, जिसमें उसकी जंघाएं ही कठिनता से ढंक पाई हैं। नर्तकियां एड़ियों के ऊपर तक चुस्त पाजामा जैसा पहनावा पहनती थीं, जो नृत्य में सुविधाजनक था।[39]

चोली : खजुराहो की नारी मूर्तियों का वक्षस्थल प्राय: अनावृत प्रदर्शित किया गया है। तो भी, कुछ शिल्पों में उन्हें चोली या कुचबंध पहने दर्शाया गया है। उस समय की चोली या कुचबंध एक या डेढ़ इंच लंबी एक पट्टी होती थी, जिसे स्तनों के अग्र भाग पर बांध लिया जाता था। खजुराहो संग्रहालय की एक देवी इसी प्रकार की चोली धारण किए है। कंदरिया महादेव मंदिर[40] में कामुक मुद्रा में प्रदर्शित एक नारी मूर्ति की चोली कपड़े की एक पट्टी मात्र है, जिसे पीठ पर गांठ बांधकर पहन लिया गया है। लक्ष्मण मंदिर[41] में एक अप्सरा को चोली पहनते हुए अंकित किया गया है जिसमें वह दाएं हाथ से अपने स्तन को थामे हुए है, उसका बायां हाथ सिर से होता हुआ दाएं कंधे के चोली को व्यवस्थित करता हुआ प्रतीत होता है। इसी प्रकार विश्वनाथ[42] और दूलादेव[43] मंदिरों की कुछ नारी मूर्तियों को चोली धारण किए हुए अंकित किया गया है।

दुपट्टा : चंदेलकालीन वेशभूषा में दुपट्टे का महत्व कम न था तथापि चोली के समान ही उसके प्रयोग के उदाहरण अत्यंत विरल हैं। संभवत: इसका प्रयोग समाज की सभी वर्गों की महिलाओं द्वारा किया जाता था। नृत्यांगनाओं की वेशभूषा तो दुपट्टा या चुनरी के अभाव में अपूर्ण ही रहती थी। लक्ष्मण मंदिर[44] में कंदुकक्रीड़ा करती हुई एक युवती के दुपट्टा धारण करने का ढंग अत्यंत मनोरम है। उसके दुपट्टे का एक छोर स्तनों से होता हुआ बाएं हाथ के नीचे से दाएं के ऊपर से होता हुआ वक्षस्थल पर लटक रहा है। तो भी, दुपट्टा धारण करने के

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सर्वाधिक प्रचलित ढंग में दुपट्टे के दोनों छोर कंधों के ऊपर से होते हुए पीठ पर लहराते रहते थे और दुपट्टे की चुन्नट वक्षस्थल को ढंके रहती थी।[45]

पुरुषों के वस्त्र : खजुराहो शिल्प में स्त्रियों के समान ही पुरुषों के कमर से ऊपर का भाग अनावृत ही दर्शाया गया है। तो भी, देवताओं, गंधर्वों और विद्याधरों को सदैव उत्तरीय धारण किए हुए अंकित किया गया है। इसके पहनने का ढंग लगभग वैसा ही था जैसा दुपट्टे का। खजुराहो संग्रहालय में सुरक्षित विरागी बुद्ध की एक प्रतिमा एक अत्यंत झीना वस्त्र कर्णवत धारण किए है। वस्त्र से बायां कंधा, हाथ और आधा धड़ आवृत है जबकि दायां वक्ष तथा हाथ निर्वसन हैं। देवप्रतिमाओं के अतिरिक्त कुछ गृहस्थों ने भी उत्तरीय धारण कर रखा है। इस प्रकार की प्रतिमाएं यज्ञोपवीत पहने हैं, जिससे उनकी ऊंची सामाजिक प्रतिष्ठा प्रकट होती है।[46] यह परिधान अध्यापकों[47] तथा उच्च सैनिक अधिकारियों[48] द्वारा भी धारण किया जाता था। कभी कभी देवताओं को छन्नवीर पहने प्रदर्शित किया गया है। पार्श्वनाथ मंदिर[49] में राम ने यही परिधान पहन रखा है।

धोती : महिलाओं के समान पुरुषों का मुख्य पहनावा धोती ही था। दोनों के धोती पहनने का ढंग प्राय: एक जैसा था। पुरुष प्राय: पर्याप्त लंबी या कम लंबी धोतियां पहनते थे जिनकी आगे की चुन्नटें पहनावे की शोभा में चार चांद लगा देती थीं। कभी कभी चुन्नटें आगे-पीछे दोनों ओर लटकती रहती थीं।[50] कम लंबी धोती कमर के चारों ओर लपेट ली जाती थी जिसका एक सिरा आगे की ओर झूलता रहता था।[51] इस पहनावे से जांघों का ऊपरी भाग ही आवृत हो पाता था।

लंगोट : साधु-संन्यासी लंगोट या कौपीन धारण करते थे। यह अंगरेजी के T अक्षर के आकार की एक पट्टी होती थी जिसके दोनों ऊपरी सिरे कमर में बांध लिए जाते थे और उसका निचला सिरा जंघाओं के बीच से निकालकर कमर के पिछले भाग में बांध लिया जाता था।[52]

जांघिया : सैनिक,[53] शिकारी,[54] महावत,[55] संगीतज्ञ,[56] और बच्चे[57] जांघिया पहनते थे।

फौजी कोट : सैनिक कभी कभी कोट के स्थान पर आधी बांहों वाला ब्लाउज जैसा पहनावा पहनते थे। इसके ऊपर वे आधी बांहों वाला घुटनों तक लंबा कोट पहनते थे जो कमर पर एक डोगी से बंधा रहता था। घुड़सवार और महावत एक लंबा या कम लंबा आधी बांहों वाला कोट पहनते थे। कोट की बांहों तथा गले का भाग कढ़ावदार होता था।

पगड़ी : खजुराहो की कुछ पुरुष मूर्तियों को पगड़ी पहने प्रदर्शित किया गया है।[58] यह पगड़ी सिक्खों की पगड़ी से मिलती-जुलती है। संभवत: राजा, सामंत तथा संभ्रांत व्यक्ति इसका प्रयोग करते थे।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आर्थिक इतिहास

खजुराहो मंदिरों की भित्तियों पर उत्कीर्ण अनेक दृश्यों से जनजीवन की तत्कालीन आर्थिक परिस्थितियों पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है। इनमें से कुछ शिल्प तो प्रत्यक्ष रूप से और शेष परोक्ष रूप से समाज के ग्रार्थिक पक्ष को प्रकाशित करते हैं।

कृषि

प्राचीन समय के लोगों की आजीविका कृषि पर केंद्रित थी, अतः बहुसंख्यक लोगों का पेशा भी कृषि ही रहा होगा। खजुरारो कला में कृषि से संबंधित कुछ उपकरण उत्कीर्ण हैं। इनमें खुरपी, हंसिया और हल प्रमुख हैं।[59] अनुमान होता है कि प्राचीन समय में आजकल की ही तरह हल बैलों से कृषि की जाती थी। चंदेल अभिलेख राज्य में होने वाली फसलों पर रोचक प्रकाश डालते हैं। त्रैलोक्यवर्मा के सागर ताम्रपत्र[60] से ज्ञात होता है कि असन, इक्षु (ईख), कुसुम, कर्पास (कपास) शण (सन) आम और महुवा चंदेल साम्राज्य में अधिकता से होते थे, परमर्दिदेव के पछार ताम्रपत्र[61] में कोरदे का उल्लेख है। यह कोदों है, जो आज भी बुंदेलखंड में बड़ी मात्रा में पैदा होता है और निर्धन जनों का खाद्य पदार्थ है।

सिंचाई

विंध्यक्षेत्र की प्यासी धरती को उर्वर बनाने में यहां की नदियां विशेष उपयोगी रहीं। इसी कारण सिंचाई के लिए बड़ी संख्या में तालाब बनवाए गए। तालाबों के किनारे निर्मित देवालयों को देखकर प्रतीत होता है कि उनमें प्रवेश करने से पूर्व शारीरिक शुद्धि आवश्यक थी। अतः तालाबों का निर्माण इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए भी किया गया। इस कथन की पुष्टि खजुराहो के तालाब से होती है। विंध्य-क्षेत्र की अधिकांश नदियां सदानीरा नहीं हैं, अतः सिंचाई व्यवस्था बहुत कुछ कुंओं पर आश्रित थी।

पशुपालन

कृषि के साथ पशुओं का अनन्याश्रित संबंध है। चंदेल कला[62] में घोड़ा, बैल, बकरी, भैंसा आदि का अंकन मिलता है जिससे ज्ञात होता है कि गाय, बैल, बकरी, भैंस आदि कृषोपयोगी पशुओं का पालन बहुतायत से होता था। घोड़ों और गधों का पालन सामान ढोने के लिए या सवारी के लिए किया जाता था। हाथियों का पालन साधारण नागरिकों के लिए असंभव था। इनका पालन शासक तथा संभ्रांत वर्ग के लोग करते थे।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

व्यापार और वाणिज्य

विंध्यक्षेत्र में पत्थर, कोयला, लोहा, जिप्सम, गेरू और रामरज के भंडार मिले हैं।[63] त्रैलोक्यवर्मा के सागर ताम्रपत्र[64] में सोना, लोहा और नमक का उल्लेख है। पन्ना में हीरों की प्राप्ति होती है। डा० एच०डी० सांकलिया[65] का मत है कि पन्ना से प्राप्त हीरों के कारण चंदेलों ने स्वर्ण मुद्राएं बनवाईं और खजुराहो के भव्य एवं गगनचुंबी देवप्रासादों का निर्माण कराया। इस संदर्भ में यह तथ्य ध्यान देने योग्य है कि चंदेलों के किसी भी अभिलेख में हीरों का उल्लेख नहीं हुआ। जब सोना, लोहा और नमक जैसी वस्तुओं का उल्लेख दानपत्रों में किया गया है, तब यह युक्तिसंगत था कि हीरा जैसी महत्वपूर्ण वस्तु का उल्लेख किया जाता। चंदेलों ने सर्वप्रथम कीर्तिवर्मा के शासनकाल में कलचुरि कर्ण पर विजय प्राप्त कर अपनी मुद्राओं का निर्माण कराया। इस समय तक प्रायः सभी मंदिरों का निर्माण पूर्ण हो चुका था। अतः यह मत असंगत प्रतीत होता है कि चंदेलों की समृद्धि का कारण पन्ना के हीरे थे।

ई०पू० छठी शती के बाद राज दरबारों में श्रेष्ठियों को विशेष स्थान प्राप्त हुआ। खजुराहो में पार्श्वनाथ जैन मंदिर अभिलेख[66] से भी इस तथ्य की पुष्टि होती है। उक्त अभिलेख में गृहपतिवंश में पाहिल्ल नामक श्रेष्ठी को धंग के दरबार में उच्च प्रतिष्ठा प्राप्त व्यक्ति बताया गया है। वि० सं० 1132 के शांतिनाथ मूर्ति-लेख[67] से ज्ञात होता है कि पाहिल्ल और जीजू कीर्तिवर्मा चंदेल के आनुवंशिक मंत्री थे। निस्संदेह श्रेष्ठियों की इस राज प्रतिष्ठा से उद्योग तथा व्यापार की वृद्धि हुई।

नागरिकों को आवश्यक वस्तुओं का क्रय बाजार से करना पड़ता था। अहार (टीकमगढ़) से प्राप्त एक अभिलेख[68] में वसुहाटिका का उल्लेख है। इस हाटिका का अभिज्ञान अभी तक संभव नहीं हुआ, तथापि इससे किसी बाजार का अनुमान होता है। इस तथ्य के आधार पर यह भी संभव है कि चंदेलों के इस धार्मिक नगर में अवश्य ही कोई बड़ा बाजार रहा होगा।

राज सेवा

प्राचीन भारत में वाणिज्य, शिल्पकारी और मजदूरी के अतिरिक्त राजसेवा भी आजीविका का महत्वपूर्ण साधन थी। उस समय भी राजसेवा में नियुक्त होना गौरव की बात मानी जाती थी। कभी कभी पिता का पद रिक्त होने पर उसके पुत्र को वह पद दे दिया जाता था। इसे आनुवंशिक या 'अन्वयप्राप्त' सेवा कार्य कहा जाता था। मदनवर्मा के मऊ प्रस्तर अभिलेख[69] और परमर्दि के बटेश्वर अभिलेख[70]

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

से विदित होता है कि दो मंत्री परिवारों ने चंदेल साम्राज्य की आनुवंशिक सेवा की। साम्राज्य के विशाल सचिवालयों में उच्च पदस्थ कर्मचारियों के अतिरिक्त राजा के अंगरक्षक, ध्वजवाहक, चामरवाहक, चौकीदार, महावत, सारथी, अश्वपाल आदि अन्य कर्मचारी होते थे। खजुराहो शिल्प में उत्कीर्ण विभिन्न प्रकार की वेषभूषा के आधार पर इन कर्मचारियों का अभिज्ञान किया जा सकता है।

श्रमिक

प्राचीन भारत में जनसंख्या का एक बड़ा भाग मजदूरी पर आश्रित था। वे खेतों में, गृहस्थों के घरों में और राजकीय भवन निर्माण का काम करने वाले प्रमुख व्यक्ति थे। खजुराहो की अनेक कलाकृतियों[71] में श्रमिकों के अनेक मनोरम अंकन किए गए हैं। एक कृति में वहंगी (विहंगिका) द्वारा पत्थरों को ढोते हुए व्यक्ति प्रदर्शित किए गए हैं।

प्रमुख शिल्प

विवेच्य क्षेत्र में अनेक प्रकार के शिल्प प्रचलित थे, जिनकी प्रभूत जानकारी कलाकृतियों से प्राप्त होती है। जो इस प्रकार हैं :

स्वर्णकार : यद्यपि शिल्पों में स्वर्णकारों का अंकन नहीं हुआ तथापि चंदेल कला में अंकित विभिन्न प्रकार के आभूषणों से उनकी विद्यमानता प्रमाणित होती है। अभिलेखों[72] में उन्हें रीतिकार, पीतलकार और पीतलहार कहा गया है।

मणिहारक : चंदेलकला में विविध प्रकार के मनकों से युक्त हीरों आदि को देखकर यह अनुमान होता है कि उस समय उनका अस्तित्व था। उनका कार्य गुरियों या मणियों को धागों में पिरोकर सुंदर हार बनाना था। इसीलिए ये मणिहार (मनहारे) कहलाए। आज भी बुंदेलखंड क्षेत्र में ये मिलते हैं।[73]

ताम्रकार : चंदेल कलाकृतियों में कलश,, कलछुल या चम्मच, घंटा, घंटिका और बहुसंख्यक ताम्रपत्रों से ताम्रकारों का अस्तित्व प्रकट होता है। डा० उर्मिला अग्रवाल[74] का कथन है कि धातु दर्पण से ज्ञात होता है कि चंदेल युग में ताम्रकार कुशल कलाकार थे। इस क्षेत्र में वे अब ठठेरे या तमेरे कहलाते हैं।

कर्मकार : चंदेलों के समय विविध प्रकार के अस्त्रशस्त्र और कृषोपयोगी औजार यथा हंसिया, खुरपी, फावड़ा आदि बनाने के लिए कर्मकारों का भी एक वर्ग विद्यमान था। कला में अस्त्र-शस्त्रों और कृषि औजारों के अंकन से इस कथन की प्रामाणिकता सिद्ध होती है।[75] इन्हें आजकल लोहार कहते हैं।

तंतुवाय : चंदेलों के अनेक दानपत्रों[76] में बुंदेलखंड में कपास उत्पन्न होने का उल्लेख मिलता है। इसके साथ ही खजुराहो की बहुसंख्यक प्रतिमाओं को वस्त्र

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

धारण किए हुए अंकित किया गया है।[77] अतः प्रकट होता है कि यहां न केवल तंतुवाय विद्यमान थे, अपितु वे अपने कार्य में पूर्ण कुशल भी थे।

दरजी : कलाकृतियों में विविध प्रकार के मिले हुए परिधानों को देखने से अनुमान होता है कि उनके सिलले वाले भी रहे होंगे।[78]

कुंभकार : यहां की कला में उपलब्ध अनेक प्रकार के मृत्भांडों से प्रकट होता है कि उनका निर्माण करने वाले कुंभकर (कुम्हार) भी पर्याप्त संख्या में रहे होंगे।[79]

रज्जु निर्माता : खजुराहो कला में विहंगिका में रस्सी से पत्थरों को बांधकर ढोते हुए श्रमिक अंकित हैं।[80] इससे रज्जु निर्माताओं के अस्तित्व का बोध होता है। यह कह सकना कि रज्जु निर्माताओं की कोई श्रेणी थी, कठिन है। बुंदेलखंड में आज भी कृषक कामचलाऊ रस्सियों का निर्माण स्वयं कर लेते हैं।

चर्मकार : खजुराहो में प्राप्त सूर्य प्रतिमाएं जूता पहने हुए अंकित की गईं हैं। इसी प्रकार सैनिकों को भी उपानह धारण किए हुए प्रदर्शित किया गया है। घोड़ों की जीन और चिकित्सकों के थैले[81] चमड़े से निर्मित प्रतीत होते हैं। अतः चर्मकारों (चमारों) की विद्यमानता पर संदेह नहीं किया जा सकता।

वर्द्धकि : खजुराहो शिल्प में चारपाई, मेज, खड़ाऊ, श्यामपट तथा रथ का अंकन मिलता है जिससे प्रमाणित होता है कि उस समय काष्ठकला उन्नति पर थी। अतः बर्द्धकि (बढ़ई) पर्याप्त संख्या में रहे होंगे।

मूर्तिकार : ये पाषण, धातु, हाथीदांत, लकड़ी आदि की मूर्तियां बनाने वाले शिल्पी थे। इनका प्रमुख व्यवसाय मूर्ति बनाना था। चंदेल अभिलेखों में उन्हें 'रूपकार'[82] कहा गया है।

स्थपित : वास्तुशास्त्र में निर्धारित लक्षणों के आधार पर विभिन्न मंदिरों, मठों आदि का निर्माण होता था। वास्तुकला में निष्णात व्यक्तियों ने उनका निर्माण किया। निर्माण कार्य में लगे हुए कारीगरों को निर्देश देना वास्तुविदों का कार्य था। वस्तुतः वे आधुनिक वास्तुकार (आर्किटेक्ट) थे, जिनका उल्लेख चंदेल अभिलेखों[83] में सूत्रधार के रूप में हुआ है।

वैद्य : चंदेलों के समय तक चिकित्सा का व्यापक प्रचार हो गया था। उनके अभिलेखों[84] में वैद्यों का उल्लेख तथा खजुराहो कला में अंकित चिकित्सा-संबंधी दृश्यों से प्रकट होता है कि उस समय शल्य चिकित्सा प्रचलित थी। विश्वनाथ मंदिर के अर्धमंडप के दाएं वातायन पर एक चिकित्सक को किसी रुग्ण व्यक्ति की नाड़ी देखते हुए प्रदर्शित किया गया है। लक्ष्मण और पार्श्वनाथ मंदिरों में भी वैद्य निदान करते हुए अंकित हैं।

महानाचनी : मदनवर्मा के कालंजर स्तंभलेख[85] में 'महानाचनी' पद्मावती का उल्लेख है। कनिंघम[86] के अनुसार वह नर्तकियों की प्रधान थी। डा० हेमचन्द्र रे[87]

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

का कथन है कि वह राजसभा की प्रमुख नर्तकी थी। स्थिति कुछ भी हो, यह निश्चयपूर्वक कहा जा सकता है कि चंदेल मंदिरों में आराध्यदेव को नृत्य और गायन से प्रसन्न करने के लिए नर्तकियों की नियुक्तियां की जाती थीं।

नापित : चंदेल अभिलेखों[88] में उन्हें नापित कहा गया है। खजुराहो कला[89] में सुरुचिपूर्ण ढंग से संवारे गए केशों का अंकन विपुल मात्रा में मिलता है। नापित लोग छोटे छोटे ग्रामों से लेकर बड़े नगरों तक फैले थे।

धीवर-माहर-मेध : इनका उल्लेख वि० सं० 1346 के चरखारी ताम्रपत्र[90] में मिलता है। परंतु, खजुराहो कला से इन जातियों पर कोई प्रकाश नहीं पड़ता। धीवर या धीमंर आधुनिक ढीमर हैं जो मछलियां पकड़ने का काम करते हैं। शेष माहर और मेध कोई निम्न जातियां हैं।

चांडाल : खजुराहो कला में तोता, मोर, हंस, गृद्ध, उलूक आदि का चित्रण स्त्रियों के हाथों पर बैठे हुए या देवताओं के वाहनों के रूप में किया गया है। इनमें से कुछ पक्षियों को पाला जाता रहा होगा। कादंबरी[91] में उल्लेख मिलता है कि विदिशा की एक चांडाल कन्या वेदों में उपस्थित हुई थी। अत: यह कहा जा सकता है कि चांडाल न केवल शिकार करते थे, अपितु वे पक्षियों को पालतू बना कर बेचते भी थे।

मृतप : इसका कार्य मृतकों को जलाना था।[92]

घसियारे : चंदेलकला में घोड़ा, बैल, बकरी, भैंसा, गधा आदि पशुओं के चित्रण से ज्ञात होता है[93] कि इन पशुओं के लिए घास उपलब्ध कराने वालों का एक वर्ग था जिन्हें घसियारा कहते थे।

मुद्रा

यद्यपि इस क्षेत्र में चंदेलों के सिक्के प्राप्त हुए हैं तथापि शिल्पों में उनके अंकन का सर्वथा अभाव है। अत: प्रतीत होता है कि वस्तु विनमय की व्याख्या व्यापकरूप से प्रचलित थी। बढ़ई, लोहार, कुम्हार आदि को उनकी सेवाओं के लिए वस्तुओं के रूप में भुगतान किया जाता था।

यातायात के साधन

खजुराहो के कुछ शिल्पों से तत्कालीन परिवहन पर कुछ प्रकाश पड़ता है। इसके लिए घोड़ों, हाथियों, ऊंटों, रथों, बैलगाड़ियों तथा विहंगिकाओं का उपयोग होता था। तीव्रगति से यात्रा हेतु घोड़ों तथा हाथियों का प्रयोग होता था। ऊंटों का उपयोग संभवत: यायावर जातियां करती थीं। भारवाहन के लिए बैल-गाड़ियां सबसे अधिक उपयुक्त थीं जिनका उपयोग निर्धनों तथा कृषकों द्वारा किया

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जाता था। जहां पर उपर्युक्त साधनों का उपयोग न हो सकता था, वहां विहंगि-काएं काम में आती थीं।

खाद्य एवं पेय पदार्थ

गाय तथा बैल जैसे पालतू जानवरों से प्रकट होता है कि दूध का प्रयोग पेय के अतिरिक्त दही, मक्खन, घी, मावा आदि बनाने में होता रहा होगा। यद्यपि गौदोहन के अंकन नहीं मिलते और न गेहूं, चना, दालों आदि का अंकन सुलभ है तथापि इस तथ्य में कोई संदेह नहीं है कि कृषि यहां के निवासियों का मुख्य पेशा था।[94]

खजुराहो शिल्प[95] के आखेट दृश्यों से प्रकट होता है कि पशुओं का शिकार मनोरंजन, खाल तथा खाद्य पदार्थ के लिए किया जाता था। शिकार अधिकतर हिरन तथा सुअर का किया जाता था। इन्हीं का मांस सुस्वादु माना जाता था। एक शिलाफलक[96] में शिकारियों को शिकार का पूरा शरीर ढोते हुए प्रदर्शित किया गया है जिससे प्रकट होता है कि उसे भोज्य पदार्थ के लिए ही ले जाया जा रहा है।

एक अन्य दृश्य में एक थाली में विभिन्न प्रकार के मिष्ठान्न रखे हुए हैं। उसमें रखे लड्डुओं को एक चूहा खा रहा है। इस प्रकार गणेश को भी लड्डुओं का भोग लगाते हुए अंकित किया गया है। इसके अतिरिक्त देवी-देवताओं को अनेक प्रकार के फल लिए हुए चित्रित किया गया है। इनमें नारियल और आम्रलुंब प्रमुख हैं।

प्राय: सभी देवप्रासादों में संन्यासियों तथा सामान्यजनों की आपान गोष्ठियां अंकित हैं जिससे प्रतीत होता है कि तत्कालीन समाज में मादक पेयों का व्यापक प्रचार था। शिलाफलक में चार योगी अंकित हैं जिनके हाथों में प्याले हैं। उनमें से एक योगी किसी पेय पदार्थ के भरे पात्र से प्याला भर रहा है।[97] अत: स्पष्ट ही यह एक सुरापान गोष्ठी का चित्रण है।

संदर्भ

1. इं० ऐं०, खंड 25, पृ० 207; वही खंड 17, पृ० 235.
2. क० आ० स० रि०, खंड 21, पृ० 49-50.
3. हिस्ट्री आफ द चंदेलाज, पृ० 145.
4. क० आ० स० रि०, खंड 21, पृ० 75.
5. ए० इं०, खंड 20, पृ० 136.
6. पृ० 63, 'तुल्यत्वे वपुषां मुखाद्यवयवैर्वर्णक्रमः कीदृशो'.
7. तु० दूलादेव, बाईं बहिर्भित्ति.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

8. देवी जगदंबी पिछली बहिर्भित्ति.
9. विश्वनाथ, मंडप.
10 विश्वनाथ, अंत:प्रदक्षिणा; चित्रगुप्त, बाईं बहिर्भित्ति.
11. दूलादेव, दाईं बहिर्भित्ति.
12 विश्वनाथ, अंत:प्रदक्षिणा; चित्रगुप्त, बाईं बहिर्भित्ति.
13. लक्ष्मण, प्रदक्षिणा की दाईं भित्ति.
14 वही, दाईं बहिर्भित्ति.
15. विश्वनाथ, अंत:प्रदक्षिणा.
16 पार्श्वनाथ, बाईं बहिर्भित्ति
17. लक्ष्मण, प्रदक्षिणा का बायां वातायन; विश्वनाथ, बाईं बहिर्भित्ति.
18. कंदरिया, बाईं बहिर्भित्ति.
19. लक्ष्मण, प्रदक्षिणा का बायां वातायन; दूलादेव, दाईं बहिर्भित्ति.
20. प्रदक्षिणा का पिछला वातायन.
21. पार्श्वनाथ ओर कंदरिया की बाईं बहिर्भित्ति; दूलादेव, पिछली बहिर्भित्ति; चित्रगुप्त, अधिष्ठान.
22 विश्वनाथ, दाईं ओर का प्रदक्षिणा पथ; कंदरिया, दाईं बहिर्भित्ति, दूसरी पंक्ति.
23. कंदरिया, दाईं बहिर्भित्ति, दूसरी पंक्ति; वामन, बाईं बहिर्भित्ति, ऊपरी पंक्ति.
24. लक्ष्मण का दायां खूंटरा मंदिर
25. विश्वनाथ, दाईं ओर का प्रदक्षिणा पथ तथा बाईं बहिर्भित्ति.
26. जवारी और विश्वनाथ की बाईं बहिर्भित्ति.
27. लक्ष्मण का दायां खूंटरा मंदिर.
28. वामन, दाईं बहिर्भित्ति.
29. विश्वनाथ, मंडप का स्तम्भ; विश्वनाथ तथा लक्ष्मण की बाईं बहिर्भित्ति
30. कंदरिया, बाईं बहिर्भित्ति .
31. लक्ष्मण, बाईं बहिर्भित्ति.
32. गौतमधर्मसूत्र, 1.3.29 पर मिताक्षरा.
33. मिश्र, ग्यारहवीं सदी का भारत, पृ० 133.
34. शांतिपर्व 192.3.
35. विश्वनाथ, पिछली बहिर्भित्ति.
36. मंडप का एक शिलाफलक.
37. विश्वनाथ, दाईं बहिर्भित्ति.
38. पिछली बहिर्भित्ति.
39. दूलादेव, महामंडप प्रवेशद्वार के दाईं ओर.
40. कंदरिया, बाईं बहिर्भित्ति
41. लक्ष्मण, दाईं बहिर्भित्ति.
42. बाईं बहिर्भित्ति.
43. अंतराल (दाईं ओर) तथा गर्भगृह का प्रवेशद्वार.
44. लक्ष्मण, महामंडप, की आलंबनबाहु प्रतिमा.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

45. देवी जगदंबी, बाईं बहिर्भित्ति; वही, दाईं बहिर्भित्ति; कंदरिया, पिछली बहिर्भित्ति; विश्वनाथ, अंतःप्रदक्षिणा.
46. शिवसागर पूजाफलक.
47. लक्ष्मण, सामने के दाएं खूंटरा मंदिर का पूर्वी भाग.
48. लक्ष्मण, जगती का बायां भाग.
49. बहिर्भित्ति
50. खजुराहो संग्रहालय, क्रं० 155.
51. लक्ष्मण, पिछली बहिर्भित्ति.
52. देवी जगदंबी, दाईं बहिर्भित्ति.
53. लक्ष्मण, पिछली बहिर्भित्ति.
54. संग्रहालय.
55. लक्ष्मण, दाईं बहिर्भित्ति.
56. कंदरिया, दाईं बहिर्भित्ति.
57. लक्ष्मण, अग्रभाग का दायां खूंटरा मंदिर.
58. कंदरिया, दाईं बहिर्भित्ति.
59. कंदरिया, प्रदक्षिणा की दाईं भित्ति; संग्रहालय; हल बलराम के आयुध रूप में प्रदर्शित किया गया है.
60. ज० बा० ब्रां० रा० ए० सो०, खंड 23, पृ० 50 से आगे.
61. ए० इं०, खंड 10, पृ० 47.
62. खजुराहो के अनेक मंदिरों में इनका अंकन हुआ है.
63. मेंमायर्स आफ द ज्यालाजिकल सर्वे आफ इंडिया, भाग 2, 7, 21-31.
64. ज० बा० ब्रां० रा० ए० सो०, खंड 23, पृ० 49.
65. ज० इं० हि०, खंड 44, पृ० 33.
66. ए० इं०, खंड 20, पृ० 136.
67. इ० हि० क्वा०, खंड 30, पृ० 183-85.
68. बुलेटिन (पुरातत्व विभाग, सागर विश्व०) क्रं० 1, पृ० 101-14.
69. ए० इं०, खंड 1, पृ 199, श्लो० 20-22, 41-42.
70. वही, खंड 1, पृ० 110-11, श्लो० 19-20, 22-24, 28.
71. चित्रगुप्त की बाईं बहिर्भित्ति; विश्वनाथ की बाईं बहिर्भित्ति; खजुराहो संग्रहालय.
72. ए० इं० खंड 4, पृ 153; वही, खंड 32, पृ० 123 तथा आगे.
73. दे० खजुराहो स्कल्पचर्स, पृ० 184.
74. वही, पृ० 184.
75. खजुराहो के शिल्प.
76. ज० बा० ब्रा० रा० ए० सो०, पृ० 50 तथा आगे; ए० ई०, खंड 14, पृ० 274; वही, जिल्द 4, पृ० 169; वही, जिल्द 96, पृ० 13
77. खजुराहो के शिल्प.
78. वही.
79. वही.

CC-0. Agamnigam Digital Preservation Foundation, Chandigarh

80. खजुराहो के शिल्प.
81. लक्ष्मण, अंतःप्रदक्षिणा की पिछली भित्ति.
82. ए० इं०, खंड 1, पृ० 153.
83. वही, खंड 1, पृ० 136.
84. वही, खंड 4, पृ० 115.
85. क० आ० स० रि०, खंड 21, पृ० 34.
86. वही, पृ० 34.
87. डा० हि० ना० इं०, खंड 2, पृ० 705.
80. ए० इं०, खंड 20, पृ० 136.
89. खजुराहो स्कल्पचर्स, पृ० 186.
90. ए० इं०, खंड 20, पृ० 136.
91. चौखम्भा सं०, 29.
92. खजुराहो स्कल्पचर्स, पृ० 180.
93. वही, पृ० 183.
94. एज आफ इम्पीरियल कन्नौज, पृ० 399
95. वही, पृ० 387.
96. संग्रहालय का एक शिलाफलक.
97. विश्वनाथ, बाईं बहिर्भित्ति

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

4

धार्मिक केंद्र

मंदिर देवताओं के भौतिक आवास हैं। उनके गर्भगृह में विराजमान देवप्रतिमा जनसमुदाय द्वारा पूजित होती है। इसीलिए इन उत्तुंग देवालयों का निर्माण आराधकों के कर्मकांड और धार्मिक आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर किया गया है। इनमें आराधकों द्वारा पूजित देवी-देवताओं की मूर्तियों का अंकन वाह्य तथा आंतरिक भित्तियों तथा रथिकाओं में किया गया है और गर्भगृह में उनकी प्रतिष्ठा की गई है। विभिन्न देवी-देवताओं को समर्पित इन मंदिरों में विद्यमान सहस्रों देवप्रतिमाएं तत्कालीन धार्मिक जीवन पर व्यापक और प्रामाणिक प्रकाश डालती हैं।

चंदेलकालीन समाज में वैदिक (ब्राह्मण) जैन और बौद्ध धर्म प्रभावशाली थे। तो भी, राज्य की बहुसंख्यक प्रजा ब्राह्मण धर्म की उपासक थी। किसी सीमा तक जैनधर्म भी लोकप्रिय था जिसके अनुयायी चंदेल साम्राज्य के प्राय: सभी भागों में विद्यमान थे। बौद्धधर्म अवनति की ओर था। स्थानीय संग्रहालय में प्रदर्शित बुद्ध की एकमात्र प्रतिमा से यह तथ्य भलीभांति प्रमाणित होता है कि खजुराहो में बौद्धधर्म प्राय: अस्तित्वविहीन था।

वैदिक धर्म

चंदेल अभिलेखों से प्रकट होता है कि ब्राह्मणधर्म त्रयीधर्म से लेकर विभिन्न मतों के देवी-देवताओं की पौराणिक संकल्पना तक अपने विभिन्न रूपों में प्रजा और उसके शासकों में प्रचलित था। खजुराहो के लक्ष्मण मंदिर अभिलेख[1] में चंदेलों के आदिपुरुष चंद्रात्रेय को 'तप से तीव्र प्रभाववाला' बताया गया है। इसी प्रकार वैदिक धर्म की एक अन्य विशेषता यज्ञों का संपादन है। उक्त खजुराहो अभिलेख में राहिल के युद्धों का वर्णन करते हुए वैदिक यज्ञों का परोक्ष उल्लेख मिलता है: (राहिल ने) 'भयंकर भ्रमण करने वाली तलवाररूपी स्रुवा से, रक्त से संपादित घृत की क्रिया वाले, मौर्वी (धनुष की डोरी) के टंकाररूपी वेद घोषवाले, क्रम से संचरित होने वाले क्रोधयुक्त योद्धारूपी ऋत्विजों वाले, बिना अंतराल के चलने वाले संग्रामरूपी यज्ञ में, न रोके जाने वाले क्रोध रूपी वायु से प्रज्ज्वलित होनेवाले, वैर रूपी अग्नि में मंत्रों के द्वारा शत्रुरूपी पशुओं का हवन सा किया।'[2] उपर्युक्त वर्णन से ज्ञात होता है कि यज्ञ में वैदिक मंत्रोच्चार के साथ स्रुवा से

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अग्नि में घी तथा पशुओं की आहुति दी जाती थी। इस प्रकार के यज्ञों का उल्लेख चंदेलों द्वारा भूमिदान का उल्लेख करने वाले सेमरा, महोबा और चरखारी ताम्र-पत्रों में भी मिलता है।[3]

चंदेल शासक वैदिक धर्म को बहुत महत्व देते थे और उसके उन्नयन हेतु विद्वान ब्राह्मणों को भूमिदान करते थे। दान पानेवाले ये ब्राह्मण अपने विशिष्ट गोत्र, प्रवर और वैदिक अध्ययन की किसी विशेष शाखा या चरण के लिए विख्यात होते थे।

भूमिदान एक पवित्र कार्य माना जाता था जिससे दानकर्ता तथा उसके स्वर्गीय माता-पिता के पुण्य में वृद्धि होती थी। भूमिदान प्रायः विशिष्ट अवसरों पर ही होता था। खजुराहो विश्वनाथ मंदिर अभिलेख[4] से प्रकट होता है कि मंदिर निर्माण के समय राजा धंग ने षट्कर्मरत, परोपकारी, यज्ञधूम से धूम्र शरीरवाले एवं निर्मलांतः करवाले ब्राह्मणों को स्फटिकगिरि जैसे भवन, धन-धान्य, धेनु तथा वसुधा देकर सम्मानित किया। उपर्युक्त कथन से प्रकट होता है कि पुरोहितों की एक परंपरा थी। यही पुरोहित मंदिरों में पूजा करते थे और उनकी व्यवस्था की देख-रेख करते थे। इन्हीं में से कुछ राजपुरोहित उच्च प्रशास-निक सेवाओं के पदों पर भी नियुक्त किए जाते थे। खजुराहो विश्वनाथ मंदिर अभिलेख[5] से प्रकट होता है कि राजपुरोहित भट्टयशोधर धर्माधिकार के उच्च पद पर नियुक्त किया गया था।

वैष्णव धर्म

यशोवर्मा सहित कुछ वैष्णव मतावलंबी आद्य चंदेल शासकों ने वैष्णव मंदिरों का निर्माण कराया जिनमें विष्णु और उनके विभिन्न अवतारों को समर्पित लक्ष्मण, वराह, वामन, जवारी और चतुर्भुज मंदिर उल्लेखनीय हैं। देवी जगदंबी और ककरामठ का भग्न मंदिर भी मूलतः वैष्णव मंदिर ही हैं।

खजुराहो में विष्णु पूजा का आद्यतम उल्लेख खजुराहो लक्ष्मण मंदिर अभि-लेख[6] में मिलता है। इस अभिलेख का आरंभ तथा अंत 'ओं नमो भगवते वासु-देवाय' शब्दों से होता है। लेख में 'विष्णु के चरणाराधना में सतृष्ण' यशोवर्मा द्वारा हिमगिरि के शिखरों से होड़ लगानेवाले शिखिर से युक्त भगवान वैकुण्ठ के भव्य मंदिर बनाने का भी उल्लेख मिलता है। अन्य अभिलेखों से भी चंदेल शासकों की विष्णुभक्ति प्रकट होती है। देवगढ़ प्रस्तर अभिलेख[7] तथा महोबा प्रस्तर अभिलेख[8] में कीर्तिवर्मा की तुलना क्रमशः विष्णु और पुरुषोत्तम से की गई है। एक कालंजर अभिलेख[9] से विदित होता है कि कीर्तिवर्मा का पौत्र जयवर्मा विष्णु का अनन्य भक्त था। इसी प्रकार अजयगढ़ प्रस्तर अभिलेख[10] में त्रैलोक्यवर्मा की

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तुलना विष्णु के वराह अवतार से की गई है।

अभिलेखों में विष्णु के लिए हरि, वासुदेव, मुरारी, माधव, पुरुषोत्तम, नारायण, उपेंद्र, सौरि, शक्र, दैत्याराति तथा उनके अवतारों के वराह, वामन, नृसिह और राम नाम मिलते हैं। उनकी पत्नी का उल्लेख लक्ष्मी, श्री, कमला, सरस्वती या पुष्टि आदि नामों से किया गया है।

चंदेल अभिलेखों और शिल्प में शिव और ब्रह्मा की अपेक्षा विष्णु को सर्वोच्च स्थान दिया गया है। खजुराहो लक्ष्मण मंदिर अभिलेख में कहा गया है कि 'ब्रह्मा के अर्घ प्रदान करने से प्रभु के पादारबिंद से निर्गत पवित्र जलसमूह को त्रिलोकी के पिता भगवान शंकर सिर पर धारण करते हैं।'[11]

खजुराहो शिल्प में विष्णु के दशावतारों की मूर्तियां बहुलता से मिलती हैं। उनका अंकन गर्भगृह की मूल प्रतिमा के परिकर के रूप में किया गया है। दशावतारों में से वामन तथा वराह अवतार अधिक लोकप्रिय थे।[12] खजुराहो में उनके लिए स्वतंत्र मंदिरों का निर्माण इस तथ्य की पुष्टि करता है। सुरसुंदरियों तथा अन्य देवी-देवताओं के साथ राम, बलराम और परशुराम का अंकन भी मंदिरों की भित्तियों पर हुआ है। लक्ष्मण मंदिर की अंतःप्रदक्षिणा में दो योगासन विष्णु मूर्तियों के चरणों के नीचे मत्स्य और कूर्म का अंकन होने से वे क्रमशः मत्स्य तथा कूर्म अवतारों का प्रतिनिधित्व करती हैं। बुंदेलखंड क्षेत्र में विष्णु के अवतारों से संबंधित कुछ कथाएं अत्यंत लोकप्रिय हैं। इनमें कृष्णलीला से संबंधित दृश्य शिल्पियों के लिए एक मनोरम विषय रहे हैं। खजुराहो में कृष्णलीला संबंधी मूर्तियां अधिकांशतः लक्ष्मण मंदिर में उत्कीर्ण हैं। इस मंदिर के अंतःप्रदक्षिणा-पथ के चारों ओर, गर्भगृह की जंघा पर पूतनावध, शकटभंग, तृणावर्त्तवध, यमलार्जुन उद्धार, वत्सासुरवध, कालियमर्दन, अरिष्टासुरवध, कुवजानुग्रह, कुवलयापीडवध, चाणूरयुद्ध, शलयुद्ध तथा बलराम द्वारा लोमहर्षण के वध के दृश्य अंकित हैं।

शैव धर्म

शिव को अनादि, निर्विकार तथा सर्वज्ञ कहा गया है। उनको पशुपति भी कहा जाता है। मनुष्य उनका पशु है जो अज्ञान, कर्म तथा माया के त्रिविध बंधनों में जकड़ा रहता है। इस बंधन का विनाश शिव की ही कृपा से होता है। चंदेल सत्ता के उत्कर्षकाल के पहले से ही बुंदेलखंड में शैवधर्म का प्रचार था। चंदेलों का महान सैनिक केंद्र कालंजर स्मरणातीत समय से ही भगवान नीलकंठ का आवास-स्थल रहा है। यह उल्लेख करना मनोरंजक होगा कि वैष्णव यशोवर्मा ने कालंजर दुर्ग जीतकर ही चंदेल इतिहास के महानयुग का सूत्रपात किया। यशोवर्मा के

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उत्तराधिकारी शासक शैवधर्म के निष्ठावान उपासक थे। यशोवर्मा के पुत्र तथा उत्तराधिकारी धंग ने[13] 'प्रमथदेव' नामक एक शिवमंदिर का और ग्रहपतिवंश के कोकल्ल[14] ने वैद्यनाथ के मंदिर का निर्माण कराया था। इनके अतिरिक्त और भी अनेक शैव मंदिरों का निर्माण इस युग में हुआ जिनमें कंदरिया महादेव, विश्वनाथ, मातंगेश्वर, लालगुआं महादेव तथा तथाकथित ब्रह्मा और दूलादेव मंदिरों के नाम उल्लेखनीय हैं। आद्य चंदेल नरेश विष्णु तथा शिव दोनों के उपासक थे, किंतु धंग और उसके परवर्ती शासक शैव थे। ऐसा प्रतीत होता है कि इन्हीं राजाओं के शासनकाल से शैवधर्म राजधर्म के रूप में प्रतिष्ठित हुआ।

शिवभक्त चंदेल राजाओं के अभिलेख 'ओं नमः शिवाय' से प्रारंभ होते हैं। खजुराहो अभिलेखों में शिव के रुद्र, शंभु, दिगंबर, शूलधर, महेश्वर, पशुपति, मर्कटेश्वर, वैद्यनाथ और चंद्रमौलि, सेमरा और महोबा ताम्रपत्रों में विश्वेश्वर, भवानीपति और सोमनाथ; कालंजर अभिलेखों में नीलकंठ, पुरारि और गिरजाभर्त्तुः; अजयगढ़ प्रस्तर अभिलेख में केदार; मदनपुर अभिलेख में चंद्रशेखर, त्र्यंबक और त्रिपुरांतक; देवगढ़ प्रस्तर अभिलेख में सदाशिव; मऊ प्रस्तर अभिलेख में इंद्रमौलि तथा बटेश्वर अभिलेख में पंचानन नामों का उल्लेख मिलता है। खजुराहो विश्वनाथ मंदिर अभिलेख[15] से धंग की शिवभक्ति भलीभांति प्रमाणित होती है। लेख में कहा गया है कि उसने 100 वर्ष से भी अधिक की आयु में गंगा-यमुना के संगम (प्रयाग) के पवित्र जल में निमीलित नेत्रों से भगवान शिव का जप और ध्यान करते हुए अपना शरीर त्यागकर निवृत्ति प्राप्त की।

सामान्यरूप से शिव की पूजा लिंग प्रतिमाओं के रूप में की जाती थी। ब्रह्मा मंदिर तथा विश्वनाथ के एक खूंटरा मंदिर में चार दिशाओं के प्रतीक चतुर्मुख लिंग की प्रतिष्ठा की गई है। किंतु अन्य शैव मंदिरों के गर्भगृहों में सादे शिवलिंग ही स्थापित किए गए हैं। यहां तक कि शिलाफलकों पर भी उपासक शिवलिंग की पूजा करते हुए प्रदर्शित किए गए हैं।[16] इस संदर्भ में अद्यावधि पूजा में प्रचलित मातंगेश्वर मंदिर का शिवलिंग विशेष उल्लेखनीय है।

यद्यपि शिव के मानवरूप की उपासना के कोई प्रमाण नहीं मिलते, तथापि देवप्रासादों की जंघाओं और रथिकाओं पर उनके मानवरूप का शिल्पांकन प्रचुरता से मिलता है। उनकी चतुर्भुजी स्थानक मूर्तियों के हाथों में प्रायः उनके विभिन्न आयुध-त्रिशूल, सर्प, घट आदि प्रदर्शित किए गए हैं। शक्ति के साथ भी उनका अंकन दुर्लभ नहीं है। कंदरिया और दूलादेव मंदिरों की गर्भगृह रथिकाओं में उनके अंधकांतक[17], नटराज[18] और त्रिपुरांतक[19] रूप का मनोरम अंकन सुलभ है। महावराह के शरीर पर शिव की कल्याणसुंदर मूर्ति मिलती है। चतुर्भुज मंदिर के मुख भाग पर भी शिव की कुछ रोचक प्रतिमाएं मिलती हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

शिव का वाहन नंदी भी शिवभक्ति द्वारा विस्मृत नहीं किया गया। उसकी स्वतंत्र तथा शिवसहित दोनों प्रकार की मूर्तियां मिलती हैं। शैव मंदिरों के सम्मुख प्राय: नंदी मंडप बनाया जाता था, जिसमें शिववाहन नंदी की प्रतिष्ठा की जाती थी। विश्वनाथ मंदिर की ओर उन्मुख मंडप में अलंकृत तथा चमकदार पालिशयुक्त एक महाकाय नंदी की मूर्ति अद्यावधि विद्यमान है। लालगुआं महादेव मंदिर के सम्मक्ष तो नंदी नील गगन के नीचे ही विराजमान हैं। यह आश्चर्यजनक है कि कंदरिया महादेव और दूलादेव मंदिरों के सम्मुख नंदी की मूर्तियों का अभाव है। संभवत: वे कालदोष के कारण नष्ट हो गए प्रतीत होते हैं।

चंदेल अभिलेखों में प्राय: शिवप्रिया शक्ति या देवी की स्तुतियां मिलती हैं। उन्हें माहेश्वरी, भवानी, गिरिजा, काली, नगेंद्रकन्या, महिषासुरमर्दिनी, भारती और पार्वती नामों से अभिहित किया गया है। खजुराहो में शक्ति की उपासना शिव से किसी भी प्रकार कम न थी। शिवप्रिया के रूप में वह अत्यंत प्राचीनकाल से प्रसिद्ध रही है। यद्यपि उनकी पूजा शिव के साथ ही होती रही किंतु उनका व्यक्तित्व शिव में विलीन न हो सका। प्रारंभ में उन्हें उमा, पार्वती आदि कहा जाता था, किंतु जैसे जैसे उनकी लोकप्रियता बढ़ती गई, वैसे वैसे उनके नामों में वृद्धि होती गई और उनमें अनेक आदिम देवियां विलीन होती गईं। इस देवी के हमें तीन रूप प्राप्त होते हैं : (1) सौम्यरूप, जिसकी सामान्यत: पूजा की जाती है; (2) प्रचंडरूप, जो कापालिकों और कालामुखों से संबद्ध है तथा जिसे पशु बलि एवं नर बलि चढ़ाई जाती है; और (3) कामप्रधान रूप, जिसकी पूजा शाक्त करते हैं।[20] खजुराहो में देवी के उपर्युक्त तीनों रूपों की उपासना प्रचलित थी। यद्यपि शिव के साथ पार्वती की बहुसंख्यक प्रतिमाएं यहां उत्कीर्ण की गई हैं तो भी, यहां के एक छोटे मंदिर में गोधासना पार्वती की मूर्ति प्रतिष्ठित है। विश्वनाथ और कंदरिया महादेव मंदिरों में मातृकाओं के अंकन से उनकी लोकप्रियता प्रकट होती है। यद्यपि उनकी पूजा आदिमकाल से प्रचलित है, तथापि उनके नामों और रूपों में बड़ा अंतर है। खजुराहो में देवी के विकराल रूप चामुंडा की उपासना का प्रमुख साक्ष्य यहां का चौसठयोगिनी मंदिर है। देवी के इस रूप की पूजा चौसठयोगिनियों के साथ की जाती थी। कहा जाता है कि ये चौसठ योगिनियां भगवती काली की सेविकाएं हैं और रणक्षेत्र में आहत व्यक्तियों के रक्तपान की अभिलाषा से अपना खप्पर लेकर दौड़ती हैं।[21] महिषासुरमर्दिनी, महेश्वरी, हिंगलाज के अतिरिक्त अन्य योगिनियों की मूर्तियां अब उपलब्ध नहीं हैं। चंदेलों की कुलदेवी मनियादेवी भी इस संदर्भ में उल्लेखनीय है।

खजुराहो शिल्प में शाक्तपूजा के कामप्रधान रूप का भी व्यापक अंकन हुआ है। यहां के शिल्पकारों ने सुरसुंदरियों के अंग-प्रत्यंगों के उतार-चढ़ाव का सूक्ष्म

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अंकन तो किया ही है साथ ही प्रायः सभी देवताओं को उनकी शक्तियों के साथ प्रदर्शित किया है। केवल शिव-पार्वती और विष्णु-लक्ष्मी ही नहीं प्रायः सभी देवताओं को उनकी शक्तियों के साथ आलिंगन मुद्रा में प्रदर्शित किया है। इस प्रकार के शिल्पों में इंद्र और शची, ब्रह्मा और सावित्री, काम और रति, गणेश और विघ्नेश्वरी, राम और सीता, बलराम और रेवती तथा परशुराम औरउनकी पत्नी के युग्म उल्लेखनीय हैं।[22] इन अंकनों में स्पष्ट ही शाक्तदर्शन का प्रभाव परिलक्षित है, जिसकी चरम परिणति यहां के मिथुन शिल्प में हुई।

अन्य देवी देवता

खजुराहो का धार्मिक सर्वेक्षण ब्राह्मणधर्म से संबंधित अन्य पौराणिक देव परिवार की चर्चा के अभाव में अपूर्ण ही रहेगा। उनका वर्णन इस प्रकार है :

गणेश : विघ्न-विनाशक और मंगलकारी गणेश को पुरातन ब्रह्मा कहा गया है। खजुराहो में उनकी अनेक मूर्तियां उपलब्ध हैं। कनिंघम[23] का मत है कि यहां गणपति का एक मंदिर था, जो अब नष्ट हो गया है। इसके अतिरिक्त यहां किसी दूसरे गणेश मंदिर का साक्ष्य प्राप्त नहीं होता। शैव और वैष्णव मंदिरों में उनकी बहुसंख्यक प्रतिमाओं से गाणपत्य संप्रदाय की लोकप्रियता प्रमाणित होती है। कालांतर में उनकी लोकप्रियता इतनी अधिक बढ़ी कि उनके वाहन मूषक की स्वतंत्र प्रतिमाओं का निर्माण हुआ। खजुराहो विश्वनाथ मंदिर अभिलेख[24] में गणेश को शिव परिवार का देवता बताया गया है।

शिव परिवार के एक दूसरे देवता कार्तिकेय के किसी मंदिर के अवशेष अद्यावधि खजुराहो में प्राप्त नहीं हुए। तो भी, मंदिरों की वाह्य भित्तियों पर अन्य गौण देवी-देवताओं के साथ उनका अंकन किया गया है।

ब्रह्मा : कार्तिकेय के समान ही ब्रह्मा की भी स्थिति प्रतीत होती है। प्रायः शैव तथा वैष्णव मंदिरों में और कभी कभी जैनमंदिरों में उनकी मूर्तियां कार्तिकेय की अपेक्षा अधिक संख्या में मिलती हैं। पौराणिक त्रिदेव के महत्वपूर्ण पद से अब उनकी अवनति हो गई थी, तथापि सृष्टा के रूप में जनमानस में उनका अस्तित्व अब भी शेष था और वैष्णव तथा शैव अब भी उन्हें आदर की दृष्टि से देखते थे।

सूर्य : बुंदेलखंड में सूर्यपूजा का व्यापक प्रचार था। खजुराहो का चित्रगुप्त मंदिर उन्हीं को समर्पित है। इस मंदिर के गर्भगृह में प्रतिष्ठित सूर्यमूर्ति सात अश्वों वाले रथ पर सवार है। चित्रगुप्त की जगती तथा चतुर्भुज मंदिर की वाह्य भित्ति पर सूर्य की इसी प्रकार की आसनस्थ मूर्तियां उत्कीर्ण हैं। खजुराहो के अन्य मंदिरों के ललाटबिंब पर भी सूर्य प्रतिमाएं अंकित की गई हैं। सूर्यपुत्र रेवंत की प्रतिमाएं लक्ष्मण मंदिर की जगती पर बनाई गई हैं, किंतु उनकी संख्या अत्यंत कम है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

विद्वान ब्राह्मणों को भूमिदान करते समय मदनवर्मा और परर्मादि चंदेल के ताम्रपत्रों में भवानीपति के साथ सूर्य का भी उल्लेख हुआ है। खजुराहो लक्ष्मण मंदिर अभिलेख[25] तो समाप्त हीं 'नमो सवित्रे' शब्दों से होता है। इस प्रकार प्रतीत होता है कि चंदेलकालीन हिंदू धर्म में सूर्य को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त था।

नवग्रह : हिंदू ज्योतिषशास्त्र में सूर्य, चंद्र, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु और केतु को नवग्रह कहा जाता है। भारत के विभिन्न भागों की तरह बुंदेलखंड में भी इनकी पूजा परंपरा अत्यंत प्राचीन प्रतीत होती है। भाग्यनियंता के रूप में वे अत्यंत लोकप्रिय हुए हैं। खजुराहो के हिंदू और जैन मंदिरों के गर्भगृह द्वार उत्तरंग पर उनका अंकन किया गया है।

दिक्पाल : पौराणिक देवशास्त्र के अनुसार आठ दिशाओं के आठ संरक्षक देवता हैं। इनमें इंद्र और अग्नि दक्षिण-पूर्व, यम और निऋृत दक्षिण-पश्चिम, वरुण और वायु उत्तर-पश्चिम तथा कुवेर और ईशान उत्तर-पूर्व के दिक्पाल हैं, इनका चित्रण खजुराहो मंदिरों की एक विशेषता है।

सरस्वती : गौण देवप्रतिमाओं में विद्या की अधिष्ठात्री देवी सरस्वती कम महत्व-पूर्ण नहीं है। जनमानस में यह देवी अत्यंत लोकप्रिय थी। इसीलिए हिंदू और जैन मंदिरों में इनका अंकन बहुलता से मिलता है।

उपर्युक्त विवरण से प्रकट होता है कि चंदेल शासक हिंदू देवी-देवताओं के अनन्य उपासक थे। इसीलिए उनके शासनकाल में इस धर्म का सहिष्णुतापूर्वक प्रसार हुआ।

जैनधर्म

चंदेलों के उत्कर्षकाल में जैनधर्म भी उन्नति की ओर था। लोकप्रियता में उसका स्थान ब्राह्मणधर्म के बाद ही निर्धारित होता है। अभिलेखों से प्रकट होता है कि वणिक समुदाय इस धर्म में अनुरक्त था। वि० सं० 1011 के पार्श्वनाथ जैन मंदिर अभिलेख[26] में धंग से सम्मान प्राप्त जिननाथ के भक्त पाहिल्ल द्वारा पाहिल्लवाटिका, चंद्रवाटिका, लघुचंद्रवाटिका, शंकरवाटिका, पंचाइतलवाटिका, आम्रवाटिका तथा धंगवाड़ी की भेंट का उल्लेख मिलता है। ग्रहपति वंशी पाहिल्ल की जिनभक्ति वि० सं० 1132 के दरबात शांतिनाथ मूर्तिलेख[27] से भी प्रमाणित होती है। इस लेख में कहा गया है कि उक्त मूर्ति की प्रतिष्ठा चंदेलों के कुला-मात्यवृंद पाहिल्ल और जीजु ने कराई थी। वे जैन गुरु वासवेंद्र या वासवचंद्र के शिष्य थे। इन दो मंत्रियों में से पहला पाहिल्ल धंग का समकालीन और पार्श्व-नाथ मंदिर का निर्माता प्रतीत होता है। वि० सं० 1215 के खजुराहो जैन मूर्तिलेख[28] से प्रकट होता है कि मदनवर्मा चंदेल के शासनकाल में गृहपति वंश के

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

श्रेष्ठि देदू के पौत्र और पाहिल्ल के पुत्र साधु साल्दे ने भगवान संभवनाथ की एक मूर्ति बनवाई थी। इसी प्रकार एक अन्य जिनभक्त गृहपति वंश के दो मूर्तिलेख[29] प्राप्त हुए हैं जिनसे ज्ञात होता है कि श्रेष्ठि श्रीपाणिधर तथा उसके पुत्र आल्हण तथा लक्ष्मीधर द्वारा कुछ जैन प्रतिमाओं की प्रतिष्ठा कराई गई थी।

चंदेलकालीन खजुराहो में जैन मंदिरों की संख्या आज की अपेक्षा कहीं अधिक रही होगी। खजुराहो संग्रहालय और जैन मंदिरों की चहारदीवारी में संग्रहीत बहुसंख्यक तीर्थंकर प्रतिमाओं से यह तथ्य भलीभांति प्रमाणित होता है। इन तीर्थंकर प्रतिमाओं में से प्रथम तीर्थंकर आदिनाथ की मूर्तियां और मंदिर सबसे अधिक बनाए गए। खजुराहो के दोनों प्राचीन जैन मंदिर—आदिनाथ और पार्श्वनाथ—मूलतः ऋषभनाथ के ही जिनालय थे। शांतिनाथ मंदिर में प्रतिष्ठित शांति प्रदाता शांतिनाथ की प्रतिमा समूचे खजुराहो की सबसे ऊंची प्रतिमा है। विघ्नविनाशक तेइसवें तीर्थंकर पार्श्वनाथ और अंतिम तीर्थंकर महावीर की प्रतिमाएं भी पर्याप्त संख्या में पाई गई हैं। इनके अतिरिक्त कहीं कहीं तीन चक्रवर्ती तीर्थंकर—शांतिनाथ, कुंथुनाथ और अरहनाथ—तथा कहीं कहीं पांच बाल यति तीर्थंकर—वासुपूज्य, मल्लिनाथ, नेमिनाथ, पार्श्वनाथ और महावीर अथवा प्रथम और अंतिम तीर्थंकर—की प्रतिमाएं एक साथ बनाने की परंपरा रही है। एक ही शिलाफलक पर चौबीसों तीर्थंकरों की मूर्तियां—चौबीसी—भी बनाई जाती थीं। तीर्थंकरों की उपलब्ध सभी प्रतिमाएं दिगंबर हैं जिससे प्रमाणित होता है कि खजुराहो दिगंबर जैनमत का केंद्र था।

पूजा पद्धति

खजुराहो मंदिरों के वास्तु तथा शिल्प से तत्कालीन पूजा पद्धति पर प्रकाश पड़ता है। यहां की पूजा में मंदिर की प्रदक्षिणा तथा गर्भगृह की मूल प्रतिमा का स्थान महत्वपूर्ण रहा है। सामान्य रूप से प्रदक्षिणापथ के लिए मंदिरों की ऊंची जगती ही पर्याप्त थी, किंतु परवर्ती विशाल और गगनचुंबी देवप्रासादों में गर्भगृह के चारों ओर अंतःप्रदक्षिणा का भी निर्माण किया गया। बाह्य प्रदक्षिणा के समय भक्त मंदिर की जंघाओं पर स्थित रथिकाओं में आसीन विभिन्न देवी-देवताओं के दर्शन करता हुआ, प्रवेशद्वार से देवप्रासाद के विशाल महामंडप में पहुंचता था। यहां भी दर्शनार्थी अंतःप्रदक्षिणा पूरी कर गर्भगृह के द्वार पर एकत्र हो जाते थे और क्रमशः एक एक करके गर्भगृह में प्रवेश कर आराध्यदेव की वंदना करते थे। कुछ मंदिरों के महामंडप अत्यंत विशाल बनाए गए हैं जिससे प्रतीत होता है कि यहां पर विशेष धार्मिक समारोहों में देवदासियों का नृत्य भी होता था।

खजुराहो में भक्तों को पूजा करते हुए प्रदर्शित करने वाले बहुत कम शिला-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

फलक प्राप्त हुए हैं। किंतु जो भी प्राप्त हुए हैं, वे कम रोचक नहीं हैं। इनमें से कुछ में शिवलिंग या अन्य में तीर्थंकरों की वंदना के दृश्य अंकित हैं। यहां के शिवसागर पूजाफलक में भक्त पूर्णकुंभ, घंटिका, धूपबत्ती, फूलों की टोकरी और फूलमालाएं लिए हैं। एक भक्त शिवलिंग को स्नान कराते हुए और दूसरे को उन पर फूलमालाएं चढ़ाते हुए अंकित किया गया है। शिवलिंग के दोनों ओर बहुत से भक्त हाथ जोड़े अपनी पारी की प्रतीक्षा कर रहे हैं। बाईं ओर के चार मनुष्य छोटे ढोल घंटा, शंख आदि बजा रहे हैं तथा बाईं ओर अपनी मंडली सहित एक नर्तकी नृत्य कर रही है। तीर्थंकरों की वंदना करते समय अक्षत, धूप, दीप, नैवेद्य अभिषेक, तथा शंखनाद का उल्लेख आदिपुराण में मिलता है।[30]

पूजा करते समय अकेले या समूह में भजन गाने की परंपरा कोई नई नहीं हैं। यह चंदेलों के शासनकाल में भी प्रचलित थी। लक्ष्मण मंदिर के एक शिलाफलक पर कीर्तन का एक दृश्य अंकित है जिसमें नृत्य मुद्रा में पति सौम्यभाव से तन्मय होकर करताल बजा रहा है और पत्नी मंजीरा। इस प्रकार के सामूहिक गान तथा नृत्य के आयोजन मंदिरों के विशाल महामंडपों में आराध्यदेव की प्रसन्नता के लिए भी किए जाते थे।

धार्मिक सहिष्णुता

खजुराहो के मंदिरों पर उत्कीर्ण विभिन्न संप्रदायों की देवप्रतिमाएं तत्कालीन धार्मिक सहिष्णुता की व्यापक दृष्टि को प्रदर्शित करती हैं। चंदेल साम्राज्य में ब्राह्मणधर्म का बोलबाला था और इस राजकुल के शासक उसके कट्टर अनुयायी थे। तो भी, इस तथ्य को स्वीकार करने के पर्याप्त प्रमाण हैं कि जैनधर्म को न केवल राज्याश्रय और राजकीय अनुदान सुलभ थे, अपितु चंदेलों की धार्मिक उदारता के कारण जैन मतावलंबियों को स्वधर्म प्रचार के पर्याप्त अवसर उपलब्ध थे। इस प्रकार हिंदू और जैन धर्मों को एक दूसरे के निकट आने का अवसर प्राप्त हुआ। यही कारण है कि जैन मंदिरों की वाह्य भित्तियों पर बहुत से ब्राह्मण धर्म के देवी-देवताओं को प्रमुखता से अंकित किया गया। जैनधर्म के साथ ही नहीं, अपितु ब्राह्मण धर्म के विविध देवताओं में सामंजस्य स्थापित करने का भी प्रयत्न किया गया। इसीलिए अनेक देवताओं को एक देवता में समाहित कर हरि-हर, हरि-हर पितामह, हरि-हर-हिरण्यगर्भ, सदाशिव और अर्धनारीश्वर की मूर्तियां बनाई गईं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

संदर्भ

1. ए० इं०, खंड 1, पृ० 125, 130, श्लो० 7.
2. वही, खंड 1, पृ० 126, 131, श्लो० 17.
3. वही, खंड 4, पृ० 158, पं० 1-; वही, खंड 16, पृ० 13, पं० 19; वही, खंड 20, पृ० 130, पं० 10.
4. ए० इं०, खंड 1, पृ० 146, श्लो० 53
5. वही, खंड 1, पृ० 146, श्लो० 56.
6. वही, खंड 1, पृ० 123-35,
7. इं० ऐं०, खंड 8, पृ० 238, श्लो० 3,
8. ए० इं०, खंड 1, पृ० 219, श्लो० 26.
9. क० आ० स० रि०, खंड 21, पृ० 34-35
10. ए० इं०, खंड 1, पृ० 329, श्लो० 7,
11. वही, खंड 1, पृ० 123, श्लो० 2.
12. खजुराहो लक्ष्मण मंदिर अभिलेख में भी इन अवतारों का उल्लेख मिलता है.
13. ए० इं० खंड 1, पृ० 146, श्लो० 60.
14. वही, खंड 1, पृ० 147-52.
15. वही, खंड पृ० 146, श्लो० 55.
16, शिवसागर पूजाफलक.
17. कंदरिया, दाईं वाह्यभित्ति; दूलादेव, दाईं वाह्यभित्ति; विश्वनाथ, दाईं वाह्यभित्ति.
18. कंदरिया, पिछली वाह्यभित्ति; दूलादेव, पिछली वाह्यभित्ति; विश्वनाथ पिछली वाह्यभत्ति.
19. कंदरिया, बाईं वाह्यभित्ति; दूलादेव, बाईं वाह्यभित्ति.
20. वैष्णव, शैव और अन्य धार्मिक मत, पृ० 146.
21. क० आ० स० रि०, खंड 2, पृ० 417.
22. ऐं० इं०, खंड 15, पृ० 61.
23. क० आ० स०, खंड 2, पृ० 140.
24. ए० इं०, खंड 1, पृ० 140.
25. ए० इं० खंड 1, पृ० 129-35.
26. वही, खंड 1, पृ० 135-36.
27. इं० हि० क्वा०, खंड 30, पृ० 173-75.
28. ए० इं०, खंड 1, पृ० 153.
29. वही.
30. आदिपुराण, खंड 2, 40 6-9.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

5

वास्तुकला

खजुराहो के मंदिर नागरशैली के श्रेष्ठ उदाहरण हैं। वे आकार, सौंदर्य और मूर्ति संपदा के अनेक तत्वों की दृष्टि से भारत के किसी भी भाग में विद्यमान देवप्रासादों के मुकाबले अद्वितीय हैं। यहां निर्मित शैव, वैष्णव या जैन मंदिरों की निर्माण शैली तथा शिल्पविधान में प्रायः समान तत्व मिलते हैं। ये मंदिर तलच्छंद (ग्राउंड प्लान) एवं ऊर्ध्वच्छंद (एलीवेशन) में निजी विशेषताएं रखते हैं। यें प्रायः ऊंची चौकी या जगती पर बनाए गए। इनके चारों ओर किसी प्रकार की दीवार नहीं है। इसी कारण आसपास के परिवेश से ये देवप्रासाद अत्युच्च प्रतीत होते हैं। भू-स्थिति या तलच्छंद में ये लैटिन क्रास के आकार हैं, जिनकी लंबी भुजा पूर्व से पश्चिम की ओर बनाई गई है। मंदिरों के तीन प्रधान अंग गर्भगृह, मंडप और अर्धमंडप हैं। गर्भगृह और अर्धमंडप के बीच अंतराल है। यहां पूर्ण विकसित कलाशैली के मंदिरों में प्रदक्षिणापथ से जुड़े हुए महामंडप का भी निर्माण किया गया है। एक ही धुरी पर निर्मित उपर्युक्त भाग बाहर और भीतर से इस प्रकार संयुक्त हैं कि उनका स्वरूप अत्यंत संगठित और एकरूप बन पड़ा है।

आयोजना के समान इनके ऊर्ध्वच्छंद की भी कुछ विशेषताएं हैं। मंदिर की जगती पर लंबाकार ऊर्ध्वोन्मुखी अधिष्ठान है, जिसकी पंक्तिबद्ध सज्जापट्टियां जगती को दृढ़ता के साथ जकड़े हुए हैं। इस प्रकार धूप-छांव की भी सुंदर व्यवस्था हो गई है। अधिष्ठान के ऊपर का भाग गर्भगृह या परिक्रमा आदि मंदिर के आंतरिक भागों की बाहरी दीवारें हैं, जिनमें कक्षासन या गवाक्ष हैं। इनमें अत्यंत मनोरम तथा चित्ताकर्षक मूर्तियों की दो या तीन अलंकरणपट्टियां हैं। मंदिरों के भीतरी भागों की अपेक्षा बाहरी भागों पर इन मूर्तियों की संख्या कहीं अधिक है। अकेले कंदरिया मंदिर में ही इनकी संख्या लगभग साढ़े छः सौ है।[1] वातायनों या झरोखों से मंदिर के भीतर पहुंचनेवाला प्रकाश वहां के तिमिराच्छन्न वातावरण को अलौकिक बनाने में सहायता पहुंचाता है। पर्सिब्राउन का कथन है कि 'भारतीय वास्तुकला के क्षेत्र में इन मनोहारी गवाक्षों के समान बहुत कम ऐसी हृदयग्राही कल्पनाएं पाई जाती हैं, जो अपने रचना सौष्ठव तथा कला सौंदर्य की दृष्टि से, इनकी तुलना में अपने उद्देश्य की उचित पूर्ति करती हों।'[2] जंघा के ऊपर मंदिर की छत या शिखर है। ये शिखर एक धुरी पर निर्मित हैं और क्रमशः ऊंचे-नीचे हैं तथा इनकी परिणति गर्भगृह के ऊपर निर्मित सर्वोच्च शिखर में होती है। अर्धमंडप,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मंडप, महामंडप के पृथक पृथक स्तूपाकार शिखर हैं, किंतु मध्यवर्ती शिखर ऊंचा तथा वक्राकार है। ये शिखर आरोह क्रम से ऊंचे उठते चले गए हैं। सबसे नीचा शिखर प्रवेश मंडप का है और सबसे ऊंचा गर्भगृह का। शिखर की चोटी पर एक बड़ा आमलक, उस पर चंद्रिकाओं का क्रम, पुनः एक छोटा आमलक, उस पर कलश और उसके ऊपर बीजपूरक है। शिखर शैली के इन मंदिरों की कल्पना इस तथ्य की परिचायक है कि उनका निर्माण कैलास या मेरु पर्वत के आधार पर हुआ, जो आदि देवों के आवासस्थल माने जाते हैं। प्रधान वक्ररेखाओं के लयबद्ध सन्निवेश से शिखर के आकार का निर्माण मनोरम ढंग से किया गया। बड़े शिखर की मूलमंजरी के चारों ओर पुंजीभूत उरुश्रृंगों की व्यवस्था ने मंदिर को अनुपम वास्तु के रूप में परिणत कर दिया है। इससे इसके शरीर में वैचित्र्य तथा उच्छाय गांभीर्य के भावों को बल मिला है।[3]

मंदिरों के अंतर्भागों का अवलोकन करने से ज्ञात होता है कि वे धार्मिक कर्म-कांडों और उत्सवों की आवश्यकता को ध्यान में रखकर बनाए गए। मंदिर के एक-मात्र द्वार से प्रवेश करने के लिए पूर्व की ओर ऊंचा सोपानपथ (सीढ़ियां) है। द्वार मंडप के ऊपर एक अलंकृत मकर तोरण है, जिसमें इतनी अधिक लघु प्रतिमाओं का समावेश किया गया है कि वह एक लटकती हुई मूर्तिमाला के अनुरूप प्रतीत होता है। पर्सिब्राउन[4] का कथन है कि यह तराशे पत्थर की अपेक्षा हाथीदांत की नक्काशी या लटकता हुआ प्रच्छदपट सा प्रतीत होता है।

प्रवेश मंडप एक छोटा आयताकार प्रवेश मार्ग है, जो मंडप में प्रवेश करने पर सामान्यतः कुछ चौड़ा हो जाता है। अर्धमंडप और मंडप दोनों ओर ढलुवां कक्षा-सन से घिरे हैं। उनकी छतें कुड्यस्तंभों तथा व्यालस्तंभों पर आधारित हैं। मंडप के पश्चात महामंडप है। इनके दोनों ओर पक्षावकाश हैं जिनमें बाहर की ओर बढ़े हुए वातायन बने हैं। सांधार प्रासाद मंदिरों के प्रदक्षिणापथ में दो अतिरिक्त पक्षावकाश निर्मित हैं, जिनकें गवाक्षों से मंदिर की अंतःप्रदक्षिणा आलोकित होती है। कहीं कहीं मंदिरों की पिछली भित्ति पर भी एक वातायन है जिससे प्रदक्षिणापथ का पिछला भाग प्रकाशित है। बड़े मंदिरों के महामंडप के बीच में विन्यस्त चार स्तंभ छत की कड़ियों को सहारा देते हैं। महामंडप अंतराल द्वारा गर्भगृह से जुडा है। गर्भगृह में प्रवेश करने हेतु अलंकृत द्वार पर एक या अनेक चंद्रशिलाएं बनाई गई हैं।

मंदिरों के अंतर्भाग की सादी और प्रभावकारी आयोजना में द्वारमार्गों, स्तंभों, कड़ियों और वितानों की प्रचुर सज्जा और मूर्ति संपदा विस्मयकारी है। मंदिरों के वितान की कल्पना और उसकी अभिव्यक्ति अपूर्व कुशलता से की गई है। छत के तलभाग में दिलहेदार वितान के जटिल ज्यामितीय और फुलकारी अभिप्रायों

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

के निर्माण से प्रवीण शिल्पियों का असाधारण हस्तकौशल ज्ञात होता है। अलंकृत वितान से भी अधिक विलक्षण आलंबन बाहुओं पर अप्सरा और शालभंजिका मूर्तियों को विभिन्न चपल भावभंगिमाओं में अद्‌भुत कुशलता के साथ कीचकों के मध्य प्रस्तुत किया गया है। ये अप्सराएं कामोत्तेजक अंगोंपांगों, आकर्षक मुद्राओं, उत्कृष्ट परिसज्जा के कारण पूर्व मध्यकालीन भारतीय मूर्तिकला के श्रेष्ठ उदाहरण हैं। इनकी तुलना भारत की इतर कला शैलियों में दुर्लभ है। सांधार प्रासाद प्रकार के मंदिरों में गर्भगृह के द्वारमुख पर ढले हुए अधिष्ठान के ऊपर मूर्ति समूहों की दो या तीन पट्टियां हैं। गर्भगृह के बाहर प्रतिमाओं और सज्जा-युक्त अलंकरणों का यह एक सीमित प्रदर्शन है।

मंदिरों की बाह्य आयोजना के समान ही उनके अंतर्भाग भी शिखर के समान ऊंचे उठते हैं। एक सोपानपथ से जगती पर और वहां से अर्धमंडप, मंडप, महा-मंडप और अंतराल में पहुंचा जाता है। इनके फर्श महामंडप तक क्रमशः ऊंचे होते गए हैं। वे यह आभास देते हैं कि आत्मा आराध्यदेव के निकट पहुंचने हेतु क्रमशः ऊंचाइयों पर चढ़ती जाती है। एक या अनेक चंद्रशिलाओं द्वारा अंतराल से गर्भगृह में प्रवेश होता है।

खजुराहो-मंदिरों के तलच्छंद और ऊर्ध्वच्छंद में गर्भगृह सप्तरथ है। शिखर के नीचे का घनाकृति भाग सप्तांग बाड़युक्त है। अधिष्ठान की दो सज्जापट्टियां और जंघा की मूर्तियों की तीन पंक्तियां प्रदर्शित करते हुए उन्हें सज्जायुक्त बांधनों के दो समूहों में विभक्त कर दिया गया है। खजुराहो का यह सप्तांग बाड़ सहित सप्तरथ गर्भगृह भारतीय वास्तु का चरमोत्कर्ष प्रकट करता है। पुनः उर्ध्वच्छंद की मुखाकृति सीधे ऊपर को उठती है और तलच्छंद के अनुरूप प्रमाणित होती है। आयोजना के अनुरूप ऊर्ध्वच्छंद के बहुसंख्यक प्रक्षेप तथा रथि-काओं के लयबद्ध दंतुरीकरण (इंडेंटेशन) से धूप-छांव की अद्‌भुत व्यवस्था हुई है। अंततः ये सब शिखर में समाहित हो गए हैं। आरोहण की यह लयबद्धता खजु-राहो मंदिरों की स्थाई विशेषता है। वास्तु के साथ मूर्तियों के समरस संयोग में मणि-कांचन योग की तरह यह सौंदर्यवर्धक हैं।

खजुराहो की मूर्तियों की कल्पना पारंपरिक होने पर भी ओजस्विता से रहित नहीं हैं। ये प्रतिमाएं सूक्ष्म मानवीय संवेदनाओं से स्पंदित हैं जिनकी तुलना केवल भुवनेश्वर के पूर्वविकसित मंदिरों की शिल्प संपदा से की जा सकती है। यह विशेषता गुप्त या मुगलकालीन मंदिरों में परिलक्षित नहीं। गुप्तकालीन देवा-लय अपने लघु और सादे रूप में मिलते हैं। मुगलकाल में निर्मित उत्तर भारत के अनेक मंदिर अपनी विशालता के लिए प्रसिद्ध हैं परंतु उनमें अलंकरण का प्रायः अभाव है।[5]

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

खजुराहो के कुछ मंदिर पंचायतन शैली के हैं, जिनमें मध्यवर्ती बड़े मंदिर के अतिरिक्त मेधि के कोनों पर भी चार आनुषंगिक मंदिर हैं।

मंदिरों का निर्माणक्रम

प्रो० सरसीकुमार सरस्वती का कथन है कि खजुराहो के देवालयों का निर्माण एक शती के भीतर—950 ई० से 1050 ई० मध्य हुआ। कृष्णदेव का मत है कि सबसे पहला मंदिर 850 ई० तक तथा अंतिम 1100 ई० या इसके बाद निर्मित हुआ। उनका निर्माणकाल विभिन्न विद्वानों के अनुसार 9वीं शती से 12वीं शती ई० तक माना जाता है।[6] मंदिरों के कालक्रम निर्धारण के लिए उनकी वास्तुगत विशेषताओं, मूर्तियों की गढ़न, सज्जा-अभिप्राय, अलंकरण तथा उपलब्ध आभिलेखिक साक्ष्यों का अध्ययन करना आवश्यक है। उपर्युक्त सभी आधारों पर इन मंदिरों को दो बड़े समूहों में विभक्त किया जा सकता है: पहला, प्रारंभिक समूह जिसके अंतर्गत चौंसठयोगिनी, लालगुआं-महादेव, ब्रह्मा, मातंगेश्वर और वराह मंदिर हैं। दूसरा परवर्ती समूह जिसके अंतर्गत शेष सभी मंदिर हैं।

विशिष्ट अभिप्राय, आयोजना तथा पूर्णतया स्थानीय पाषाण कणाश्म से निर्मित चौंसठयोगिनी मंदिर के अतिरिक्त प्रारंभिक समूह के मंदिर अंशतः कणाश्म और अंशतः लाल बलुवे पत्थर से निर्मित हैं। आकार में वे छोटे हैं। इनमें एक वर्गाकार गर्भगृह के ऊपरी भाग पर स्तूपाकार छत है। इनका अंतराल संकुचित और अर्धमंडप चतुष्की है, दो स्तंभ तथा दो कुड्यस्तंभ हैं। इस समूह का सबसे बड़ा और सबके बाद में लाल बलुवे पत्थर से निर्मित मातंगेश्वर मंदिर है। वराह मंदिर, जिसमें केवल मंडप है, निर्माण शैली की दृष्टि से ऐसा ही है। इस समूह के मंदिरों का वाह्य तथा आंतरिक भाग सादा है और दीवारों पर कोई अलंकरण या सज्जा नहीं है। तथापि इन मंदिरों में खजुराहो शैली के कुछ मूलभूत तत्व हैं, जैसे शिखर के दो आमलक, दो या तीन बंधों में विभक्त जंघा, तलच्छंद तथा ऊर्ध्वच्छंद की प्रधान मुखाकृति की सुस्पष्टता तथा समरसता। ये तत्व उन्हें प्राक्चंदेलकालीन शिल्प तथा स्थापत्य से पृथक करते हैं।

दूसरे समूह के अंतर्गत खजुराहो के शेष मंदिरों का निर्माण पूर्णतया बलुवे पत्थर से किया गया। वे अपने पूर्ववर्ती मंदिरों से आयोजना, आकृति और संबद्ध अलंकरण में भिन्न हैं। इन परवर्ती मंदिरों के शिल्प, वास्तु तथा सज्जायुक्त विशिष्टता की तुलना करने पर प्रकट होता है कि लक्ष्मण और दूलादेव मंदिरों में इतनी भिन्नता है कि वे एक ही गतिविधि के दो सिरे प्रतीत होते हैं। लक्ष्मण मंदिर का शिल्पविधान संवेदनशील और भारी-भरकम है; दूलादेव का विधान अत्यंत हल्के उद्भृत सज्जावाला रूढ़िगत और लोचरहित है। लक्ष्मण मंदिर के

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

शिखर पर उरुश्रृंगों की इकहरी और कर्णश्रृंगों की दोहरी पंक्तियां हैं। दूलादेव में उरु और कर्णश्रृंगों की तीन तीन पंक्तियां हैं। लक्ष्मण मंदिर के शिखर की चैत्य महराबें स्थूल, पृथक और प्रारंभिक रूप प्रदर्शित करती हैं। दूलादेव में वे अव्यवस्थित और जटिलतायुक्त हैं।

खजुराहो मंदिरों के द्वितीय समूह में लक्ष्मण मंदिर का निर्माण सबसे पहले और दूलादेव का सबसे बाद में हुआ। वस्तुतः खजुराहो मंदिरों की विशिष्ट शैली लक्ष्मण मंदिर से प्रारंभ होकर क्रमशः पार्श्वनाथ, विश्वनाथ, जगदंबी और चित्रगुप्त मंदिरों में विकासपथ पर अग्रसर होती है। उसका चरमोत्कर्ष खजुराहो शैली के श्रेष्ठ समापन कंदरिया मंदिर में देखा जा सकता है। कंदरिया मंदिर के बाद बनने वाले वामन, जवारी, आदिनाथ आदि में शिल्प की उत्कृष्टता तो है। किंतु उनकी निर्माणयोजना पूर्ववर्ती मंदिरों से किसी प्रकार श्रेष्ठ नहीं है। जवारी के शीघ्र बाद निर्मित चतुर्भुज में यद्यपि वास्तु और शिल्प की पूर्ववर्ती परंपराओं का अनुकरण मिलता है, तथापि उसमें अवनति के लक्षण भी परिलक्षित होते हैं। दूलादेव मंदिर चंदेलकला के बुझते हुए दीपक की अंतिम लौ है, जिसमें अत्यधिक रूढ़िगत अलंकृत प्रतिमाओं और कला अभिप्रायों का सम्मिश्रण मिलता है। इस प्रकार निर्माण शैली, शिल्पविधान और अलंकरण अभिप्रायों के आधार पर खजुराहो शैली का शैशव लालगुआं-महादेव और ब्रह्मा में, कैशोर्य लक्ष्मण में, प्रौढ़ता कंदरिया में और उसका अपकर्ष चतुर्भुज और दूलादेव में सहज ही देखा जा सकता है।

वर्गीकरण

किंवदंतियों के अनुसार यहां पचासी मंदिर थे, जिनमें से अब केवल पचीस मंदिर विभिन्न अवस्थाओं में विद्यमान हैं। सुविधा की दृष्टि से उन्हें तीन भागों में विभक्त किया जा सकता है, यथा, पश्चिमी समूह, पूर्वी समूह और दक्षिणी समूह। पश्चिमी समूह खजुराहो-राजनगर मार्ग के पश्चिम में स्थित है। इसके अंतर्गत कंदरिया, लक्ष्मण, विश्वनाथ, देवी जगदंबी और चित्रगुप्त के विशाल तथा चौंसठयोगिनी, लालगुआं-महादेव, मातंगेश्वर, नंदी, पार्वती, वराह तथा महादेव के छोटे मंदिर सम्मिलित हैं। इस समूह के सभी मंदिर हिंदूधर्म से संबंधित हैं। पश्चिमी समूह के विपरीत पूर्वी समूह में हिंदू तथा जैनधर्म के मंदिर हैं। प्रथम वर्ग में ब्रह्मा, लालगुआं-महादेव, वामन, जवारी और द्वितीय वर्ग में घंटई, आदिनाथ तथा पार्श्वनाथ मंदिर हैं। दक्षिणी समूह में हिंदूधर्म के मात्र दो मंदिर दूलादेव और चतुर्भुज हैं। इन मंदिरों का कालक्रमानुसार वर्णन इस प्रकार है :[7]

चौंसठयोगिनी : शिवसागर झील के दक्षिण-पश्चिम में स्थित चौंसठयोगिनी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मंदिर चंदेलकला की प्रथम कृति है। खजुराहो का यही एक मात्र मंदिर पूर्णतया स्थानीय कणाश्म पत्थर से निर्मित है। आयताकार यह मंदिर 18 फुट जगती पर निर्मित है। इसका विन्यास उत्तर-पूर्व से दक्षिण-पश्चिम की ओर है। 103 × 60 फुट के क्षेत्रफल पर विस्तृत इसका प्रांगण 67 कोठरियों से परिवृत था। अब केवल 35 कोठरियां शेष हैं। प्रत्येक कोठरी ढाई फुट चौड़ी और चार फुट लंबी है। इनका प्रवेश द्वार बत्तीस इंच ऊंचा तथा सोलह इंच चौड़ा है, जिसमें लकड़ी के दरवाजे थे। प्रत्येक कोठरी के ऊपर छोटे छोटे कोणस्तूपाकार शिखर हैं। जिनके निचले भाग चैत्य गवाक्षों के समान त्रिभुजाकार हैं। सज्जाविहीन होते हुए भी इन छोटे मंदिरों (कोठरियों) में खजुराहो शैली की कुछ मूलभूत विशेषताएं यथा, ऊंची जगती और दो बंधों में विभक्त जंघा विद्यमान है। भारत के समस्त योगिनी मंदिरों में निर्माण की दृष्टि से यह सबसे अधिक प्राचीन प्रतीत होता है। इसकी योजना वर्गाकार न होकर चतुर्भुज है।

सबसे बड़ी कोठरी को छोड़कर शेष चौंसठ कोठरियों में काली की सहचरी चौंसठयोगिनियों की मूर्तियां प्रतिष्ठित रही होंगी। अब मात्र तीन योगिनी मूर्तियां ही यहां विद्यमान हैं और वे भी अपने वास्तविक स्थानों में नहीं हैं। सबसे बड़ी कोठरी में महिषासुरमर्दिनी की अष्टभुजी मूर्ति है, जिसके सिंहासन पर 'हिंगलान' लेख उत्कीर्ण है। इसकी पार्श्व की दो कोठरियों में माहेश्वरी और ब्रह्माणी आसीन हैं। इनके सिंहासन पर भी उनका नाम उत्कीर्ण है। माहेश्वरी ललितासन मुद्रा में बैठी है तथा उनके समीप ही नंदी प्रदर्शित है। त्रिभुजी तथा चतुर्मुखी ब्रह्माणी खड्गासन मुद्रा में खड़ी है। भारी-भरकम, नाटी और मोटी देहयष्टिवाली इन प्रतिमाओं में खजुराहो मूर्तिशैली का प्रारंभिक रूप प्रतिबिंबित होता है।

इस मंदिर के निर्माण से संबंधित कोई लेख अद्यावधि अप्राप्त है, अतः स्थापत्य, शिल्प तथा योगिनियों के नाम लेखों की लिपि के आधार पर इसका निर्माणकाल नवीं शती ई० का अंतिम चरण स्वीकार किया गया है।[8]

ब्रह्मा और लालगुआं महादेव : चौंसठयोगिनी से पूर्व की ओर ब्रह्मा और पश्चिम की ओर लालगुआं महादेव मंदिर स्थित है। इनमें से पहला मंदिर वैष्णव और दूसरा जैनधर्म से संबंधित है। पहले मंदिर में स्थापित विष्णु मूर्ति को श्रद्धालुओं ने ब्रह्मा समझकर इसे उनका ही मंदिर कहना प्रारंभ कर दिया है। अब इस मंदिर में चतुर्मुख शिवलिंग विराजमान है। दोनों मंदिरों के शिखर बलुवे पत्थर के और शेष भाग कणाश्म से निर्मित है। वे आकार में छोटे और अलंकरण में सादे हैं। इनका अधिष्ठान चौंसठयोगिनी मंदिर के समान सादा है। तलविन्यास में भिन्न होते हुए भी, वे उर्ध्वच्छंद में समरूप हैं। उनकी जंघा सादी तथा दो बंधोंवाली है और उसके ऊपर क्रमशः अपसरण करती हुई पंक्तियों के पीढ़ी की स्तूपाकर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

छत है। ब्रह्मा का बहिर्भाग स्वस्तिक के आकार का है, जिसके प्रत्येक ओर प्रक्षेपण है। मंदिर का अंतर्भाग वर्गाकार है जिसमें कणाश्म से निर्मित बारह सादे कुड्य-स्तंभ हैं। इन्हीं स्तंभों पर वितान पूर्वी प्रक्षेपण में प्रवेशद्वार है और पश्चिम की ओर एक अन्य छोटा द्वार है। पार्श्व के अन्य दो प्रक्षेपणों में पत्थर की मोटी और अनलंकृत जालीदार वातायन हैं। प्रवेशद्वार के सिरदल में त्रिदेव—ब्रह्मा, विष्णु, महेश--की स्थूल मूर्तियां हैं और द्वारस्तंभ में एक एक अनुचर सहित गंगा और यमुना के अंकन के अतिरिक्त प्रवेशद्वार सादा है। इसके विपरीत लालगुआं महादेव मंदिर का प्रवेशद्वार अत्यंत सादा है। उसमें न तो प्रतिमाएं हैं और न ही किसी अन्य प्रकार का अलंकरण। ब्रह्मा का शिखर सुरक्षित है जबकि लालगुआं महा-देव का शिखर नष्टप्राय है। कुछ भिन्नताओं के होते हुए भी दोनों देवालयं आयो-जना, आकृति और अलंकरण की दृष्टि से समरूप हैं और उनके समकालिक होने में कोई संदेह नहीं है। क्योंकि वे उस संक्रमणकाल के हैं, जब बलुवे पत्थर का उपयोग तो प्रारंभ हो गया था, किंतु कणाश्म का प्रयोग पूर्णतया समाप्त नहीं हुआ था, अतः वे चौंसठयोगिनी मंदिर के परवर्ती और बलुवे पत्थर से निर्मित मंदिरों के पूर्ववर्ती प्रतीत होते हैं।

मातंगेश्वर : लक्ष्मण मंदिर के दक्षिण में स्थित मातंगेश्वर मंदिर खजुराहो में बलुवे पत्थर से निर्मित देवालयों में सर्वाधिक सादा और प्राचीन है। आयोजना तथा आकृति में ब्रह्मा मंदिर के विपरीत इसमें तीन पार्श्वों के भद्र-प्रक्षेपणों में कक्षासन प्रकार के वातायान निर्मित किए गए हैं, जो खजुराहो शैली के पूर्णविक-सित मंदिरों की एक विशेषता है। प्रत्येक प्रक्षेपण में एक एक देवकुलिका है, जो स्थानीय शैली की एक अन्य विशेषता है। इस देवालय में खजुराहो के विकसित मंदिरों की मंडपछतों की आलंकारिक विशेषताएं और रचनाविन्यास प्रदर्शित है। इसके स्तंभ खुरदरे तथा सख्त हैं जिनमें आलंबनबाहुओं के कीचकों या अन्य अलंकरण मूर्तियों का अभाव है। वितान गजतालु प्रकार का है जिसमें मनोहरता या परिष्कार का सर्वथा अभाव है। गर्भगृह का फर्श 20 फुट व्यासवाले और 4 फुट 6 इंच ऊंचे गौरीपट से आवृत है जिसपर 3 फुट 8 इंच व्यास का 8 फुट 4 इंच ऊंचा ओपदार महाकाय लिंग प्रतिष्ठित है। लिंग के शरीर पर दो परवर्ती फारसी तथा कुछ नागरी लेख उत्कीर्ण हैं। अनलंकृत तथा बलुवे पत्थर से निर्मित होने के कारण यह ब्रह्मा मंदिर का परवर्ती प्रतीत होता है।

वराह : यह विष्णु के वराह अवतार का एक छोटा मंदिर है, जो योजना तथा निर्माणशैली की दृष्टि से ब्रह्मा तथा लालगुआं मंदिरों के अनुरूप है। 20 फुट 6 इंच लंबा और 16 फुट चौड़ा यह मंदिर आयताकार है, जिसकी स्तूपाकार छत सादे बारह खंभों पर आधारित है। छत के नीचे का भाग एक के ऊपर एक रखे

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

गए सादे पत्थरों से बनाया गया है और छत को दो शिलाओं से ढक दिया गया है। इस शिलारूपी वितान पर पूर्ण विकसित कमल का अंकन है।

मंदिर के मध्य में 8 फुट 9 इंच लंबी तथा 5 फुट 9 इंच ऊंची वराह की एक एकाश्म भीमकाय मूर्ति प्रतिष्ठित है। वराह के संपूर्ण शरीर पर ब्रह्मा, विष्णु, शिव, सरस्वती, गंगा, वीरभद्र और गणेश सहित सप्तमातृका नवग्रह, अष्ट-दिक्पाल, अष्टवसु, नाग, गण आदि देवी-देवताओं की सैकड़ों मूर्तियां उत्कीर्ण हैं। पृथ्वी की मूर्ति तो कालकवलित हो चुकी है, परंतु पादपीठ पर उसके चरणचिह्न अब भी देखे जा सकते हैं। वराह मूर्ति के नीचे कुंडली बांधे हुए आदिशेष की मूर्ति है, जिसकी पूंछ पर वराह की पूंछ रखी है। इस मंदिर को मातंगेश्वर (900-925 ई०) का समकालिक मान सकते हैं।

लक्ष्मण : पंचायतन शैली का यह सांधार प्रासाद विष्णु को समर्पित है। बलुवे पत्थर से निर्मित भव्य, मनोहारी और पूर्णविकसित खजुराहो शैली के मंदिरों में यह प्राचीनतम है। 98 फुट लंबे और 45 फुट चौड़े मंदिर के अधिष्ठान की जगती के चारों कोनों पर चार खूंटरा मंदिर बने हैं। इस मंदिर के ठीक सामने पांचवां मंदिर विष्णु के वाहन गरुड़ के लिए बना था। गरुड़ की प्रतिमा अब लुप्त हो गई है और इस छोटे मंदिर को देवी मंदिर कहने लगे हैं।

1843 ई० में मंदिर के जीर्णोद्वार के समय एक लेख मिला था। यह अभि-लेख मंदिर के मंडप में लगा होने के कारण खजुराहो लक्ष्मण मंदिर अभिलेख कह-लाता है। अभिलेख से ज्ञात होता है कि चंदेल वंश की सातवीं सीढ़ी में हुए यशो-वर्मा उपनाम लक्षवर्मा ने खजुराहो में वैकुंठ विष्णु का एक भव्य मंदिर बन-वाया। राजा की[9] मृत्यु तिथि 954 ई० से पूर्व इस मंदिर का निर्माण हो गया था। अतः यह 930-950 ई० के मध्य बना होगा। इसके शिल्प और वास्तु की विलक्षणताओं से भी यह तिथि उपयुक्त प्रतीत होती है। यद्यपि यह मंदिर विष्णु के वैकुंठ रूप को समर्पित है, तथापि इसका नामकरण मंदिर निर्माता यशोवर्मा के उपनाम लक्षवर्मा के आधार पर हुआ प्रतीत होता है।

खजुराहो के परिष्कृत मंदिरों में शिल्प और वास्तु की दृष्टि से लक्ष्मण मंदिर सर्वोत्कृष्ट है। अर्द्धमंडप, मंडप और महामंडप की छतें स्तूपाकार हैं जिसमें पूरक शिखरों का अभाव है। शिखर के ऊपर घंटाकृति किरीट है। खजुराहो में किरीट-युक्त शिखर ब्रह्मा मंदिर में पाया जाता है। इस मंदिर के अतिरिक्त परवर्ती समूह के प्रायः सभी मंदिरों के मंडपों की छतें गुंबदाकार हैं। इस मंदिर के मंडपों की छतों की कुछ विशेषताओं की ओर कृष्णदेव[10] ने हमारा ध्यान आकर्षित किया है : (1) इसके मंडप और महामंडप की छतों के पीढ़े खपरों की छाजन के समान हैं; (2) महामंडप की छत के पीढ़ों के सिरों का अलंकरण अंजलिबद्ध नागों की

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

लघु आकृतियों से किया गया है और (3) महामंडप की छत पर लटकती हुई पत्रावली के साथ कलश का किरीट है।

लक्ष्मण मंदिर के कुछ स्तंभों पर बेलबूटों के उत्कृष्ट उद्भृत अंकन हैं। भावाभिव्यक्ति की सौम्यता के साथ मूर्तियों की तरंगायित शोभा गुप्त शैली से प्रभावित है। मंदिर में दो मकर तोरण हैं। उनके पार्श्व में एक एक योद्धा अपनी अतुल शक्ति से प्रत्येक मकर को मुख खोलने के लिए बाध्य करता प्रतीत होता है। खजुराहो के अन्य मंदिरों के विपरीत इस देव प्रासाद की कुछ दिक्पाल प्रतिमाएं द्विभुजी हैं और गर्भगृह के द्वार अलंकरण में उत्कीर्ण उभरे हुए कमलपत्रों का कलापूर्ण अंकन है।

खजुराहो के लक्ष्मण और पार्श्वनाथ दो ही ऐसे मंदिर हैं जिनके प्रवेशद्वार के सिरदल एक दूसरे के ऊपर दो स्थूल सज्जापट्टियां हैं। विवेच्य मंदिर की निचली सज्जापट्टी के केंद्र में लक्ष्मी की प्रतिमा है और दोनों सिरों के एक ओर ब्रह्मा तथा दूसरी ओर शिव उत्कीर्ण हैं। ऊपरी पट्टी पर नवग्रह अंकित हैं जिनमें राहु की मूर्ति अन्य मूर्तियों की अपेक्षा कुछ बड़ी है। द्वारशाखाओं पर विष्णु के विभिन्न अवतारों, पत्रवल्लरियों आदि का अंकन है। गर्भगृह में विष्णु के वैकुंठरूप की चार फुट ऊंची चतुर्भुज और त्रिमुख मूर्ति प्रतिष्ठित है। खजुराहो की इस विशाल-तम वैकुंठ मूर्ति के सामने का विष्णु-मुख सौम्य, दक्षिणमुख नृसिंह और वाम वराह का है। मंदिर के महामंडप और अंतराल में स्तंभ शीर्षों के ऊपर आलंबनबाहुओं के रूप में प्रयुक्त अप्सराएं शिल्पकला की अनुपम कृतियां हैं।

मंदिर की जंघा में अन्य मंदिरों के समान एक दूसरे के समानांतर मूर्तियों के दो बंध हैं। इनमें देवी-देवताओं, शार्दूल और सुरसुंदरियों की चित्ताकर्षक और लुभावनी मूर्तियां हैं। इसी प्रकार मंदिर की जगती पर नाना प्रकार के मनोरंजक और गतिशील दृश्य अंकित हैं। इनमें आखेट, युद्ध के दृश्य, हाथी, घोड़ों और पैदल सैनिकों के जुलूस, अनेक पारिवारिक दृश्यों का अंकन भी उल्लेखनीय है।

जगती और अधिष्ठान पर उत्कीर्ण गतिशील भव्य, समारोहयात्राएं, ओजस्वी शार्दूलों और लालित्यपूर्ण शिल्प की दो समानांतर पंक्तियुक्त जंघा, अलंकृत मकरतोरणों और वितान के आलंबनबाहुओं की मोहक अप्सराओं से समृद्ध यह देवप्रासाद खजुराहो की विशिष्ट वास्तुशैली में एक नए युग का सूत्रपात करता है। इसकी कुछ मूर्तियां तो पूर्वमध्यकालीन कलाकृतियों के बेजोड़ नमूने हैं। भारतीय संग्रहालय, कलकत्ता की तीन प्रख्यात मूर्तियों—मां-शिशु, पत्र लिखती युवती, दर्पण में मुख देखती सुंदरी—जिन्हें भ्रमवश भुवनेश्वर से प्राप्त माना जाता है, का अभिज्ञान निस्संदिग्ध रूप से शैली, सामग्री, आयाम और भित्ति अंकन की समानता के कारण लक्ष्मण मंदिर की मूर्तियों से किया जा सकता है।[11]

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पार्श्वनाथ : पूर्वी समूह के अंतर्गत पार्श्वनाथ मंदिर खजुराहो के सुंदरतम मंदिरों में से एक है। 68 फुट लंबा और 65 फुट चौड़ा यह मंदिर एक विशाल जगती पर स्थित है। इस मंदिर के वि० सं० 1011 के खजुराहो जैन मंदिर अभिलेख[12] के आधार पर कुछ विद्वानों[13] ने इसका नामकरण जिननाथ मंदिर किया है। किंतु जिननाथ किसी भी तीर्थंकर के लिए प्रयुक्त हो सकता है, अतः इसे मंदिर का नाम स्वीकार नहीं किया जा सकता। इसका पार्श्वनाथ नाम लगभग एक शती पूर्व प्रचलित हुआ जब इसमें मूलनायक के रिक्त स्थान पर पार्श्वनाथ की प्रतिमा स्थापित की गई।[14] इसके पूर्व वेदी पर मूलतः आदिनाथ की प्रतिमा विराजमान थी जिसका लांछन वृषभ आज भी मूल वेदी की पीठिका पर दृष्टव्य है। इस प्रकार यह मंदिर मूलतः आदिनाथ को समर्पित था।

शिल्प, वास्तु तथा आभिलेखिक साक्ष्यों के आधार पर पार्श्वनाथ मंदिर का निर्माण लक्ष्मण मंदिर के तुरंत बाद हुआ होगा। कृष्णदेव[15] का मत है कि इसका निर्माण 950 ई० से 970 ई० के मध्य यशोवर्मा के पुत्र और उत्तराधिकारी धंग के शासनकाल में हुआ। इस सूचना के दो प्रमुख स्रोत हैं : पहला वि० सं० 1011 का खजुराहो जैन मंदिर अभिलेख और दूसरा वि० सं० 1011 का ही खजुराहो लक्ष्मण मंदिर अभिलेख। कृष्णदेव का यह भी कथन है कि यद्यपि इन दोनों अभिलेखों की लिपि में लगभग एक शती का अंतर है, परंतु उसका कारण यह हो सकता है कि पार्श्वनाथ मंदिर का मूल अभिलेख किसी कारण क्षतिग्रस्त हो गया और तब उसे पुनः वर्तमान स्थान पर अंकित कर दिया गया।

प्रतीत होता है कि लक्ष्मण और पार्श्वनाथ मंदिरों का निर्माण लगभग एक ही समय प्रारंभ हुआ। लक्ष्मण मंदिर का निर्माण राज्य द्वारा कराया गया, अतः वह कम समय में बन गया। पार्श्वनाथ मंदिर का निर्माण एक व्यक्ति द्वारा सीमित साधनों से कराए जाने के कारण उसके निर्माण में कुछ अधिक समय लगा। इसका यह लाभ हुआ कि लक्ष्मण मंदिर की परिष्कृत शिल्प विधा का भी उसमें समावेश हो गया। उपर्युक्त विवेचन के आधार पर जिनालय की तिथि 954 ई० (वि० सं० 1011) के बाद नहीं रखी जा सकती।

लक्ष्मण और पार्श्वनाथ मंदिरों की समकालिकता का समर्थन कृष्णदेव[16] के निम्नांकित विचारों से भी होता है :

1. लक्ष्मण मंदिर के अर्धमंडप के अधिष्ठान की सज्जापट्टी पर हाथियों की प्रक्षेपित पट्टी पार्श्वनाथ मंदिर में उत्कीर्ण अलंकरण पट्टी के अनुरूप है। इस प्रकार का दूसरा अंकन केवल विश्वनाथ मंदिर के सम्मुख स्थित नंदी मंदिर के अतिरिक्त अन्यत्र अप्राप्त है।

2. उल्लेखनीय है कि लक्ष्मण और पार्श्वनाथ मंदिरों के प्रवेशद्वार समरूप

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हैं। यहां उत्कीर्ण सरितदेवियों की प्रतिमाएं स्थूल हैं और प्रवेशद्वार को परिवेष्टित करने वाली कुंडलीकृत सज्जा में नागप्रतिमाओं का अभाव है।

3. लक्ष्मण, पार्श्वनाथ और घंटई मंदिरों के अधिष्ठान की हृदयाकार पुष्पोंवाली शोभापट्टी प्रायः एक सी हैं।

4. जंघा की उपरिपंक्ति में मूर्तियों के मध्य चैत्य मेहराबों के उद्गम केवल लक्ष्मण और पार्श्वनाथ मंदिरों तक ही सीमित हैं।

5. जैन मंदिर होते हुए भी पार्श्वनाथ में हिंदूधर्म के परशुराम, बलराम-रेवती, राम-सीता-हनुमान तथा विष्णु के अनेक रूपों से संबंधित मूर्तियों की विद्यमानता, लक्ष्मण मंदिर से उसकी समानता प्रदर्शित करती है।

6. लक्ष्मण मंदिर के अतिरिक्त पार्श्वनाथ ही एकमात्र ऐसा जिनालय है, जिसमें कृष्णलीला से संबंधित दृश्य उत्कीर्ण हैं। वास्तव में इनमें से यमलार्जुन उद्धार का दृश्य इतना मिलता-जुलता है कि उनके निर्माणकर्ताओं की अभिन्नता में विश्वास होने लगता है।

7. सामने देखती हुई, स्थूल नितंब युक्त अप्सराएं इन दोनों मंदिरों की विशेषता है।

8. इस मंदिर की मूर्तियों का वर्तुलाकार प्रतिरूपण और सामान्य रूपरेखा, केशविन्यास आदि लक्ष्मण मंदिर जैसा ही है। किंतु यहां की कुछ मूर्तियों का अंगसौष्ठव लक्ष्मण की अपेक्षा अधिक सानुपातिक है और विश्वनाथ मंदिर की अत्यंत मनोहर और सुदर्शन प्रतिमाओं का पूर्ववर्ती प्रतीत होता है।

इस प्रकार शिल्प शैली की समरूपता निश्चय ही दोनों मंदिरों की समकालिक निकटता प्रमाणित करती है।

मंदिर एक ऊंची जगती पर निर्मित है जिसकी मूल सज्जा कालकवलित हो गई है। जंघा में क्रमशः ऊपर की ओर छोटी होती गई मूर्तियों की तीन पंक्तियां हैं। प्रथम पंक्ति की मूर्तियों की ऊंचाई डेढ़ फुट, दूसरी पंक्ति की एक फुट और तीसरी पंक्ति की केवल पौन फुट है। मंदिर के अंतरंग भागों को प्रकाशित करने के लिए बनाए गए वातायन अपनी सुंदर सज्जा के कारण मूर्ति संयोजना में बाधक नहीं हैं। इनके अग्रभागों में उथली रथिकाओं की एक श्रृंखला है, जिसके बीच बीच संकीर्ण सलिलांतर हैं। निचली पंक्ति के प्रक्षेपों पर देवी-देवताओं एवं सुरसुंदरियों की तथा सलिलांतरों में व्यालों की मूर्तियां हैं। मध्यपंक्ति में देवदंपत्ति तथा सबसे ऊपरी पंक्ति के प्रक्षेपों और रथिकाओं में मुख्यरूप से विद्याधर-गंधर्व उत्कीर्ण किए गए हैं। उनका अंकन परवर्ती खजुराहो मंदिरों की एक विशेषता है, जिसका प्रारंभ इसी मंदिर से हुआ है इस मंदिर की जंघा पर उत्कीर्ण तीनों पंक्तियों का शिल्प मूर्तिकला का श्रेष्ठ उदाहरण है। शिशु को दुलारती स्नेहवत्सला, पत्र लिखती, पैर से

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कांटा निकलवाती, शृंगार प्रसाधन आदि करती अप्सराएं विशेष उल्लेखनीय हैं। जैन मंदिर होने के कारण इसमें जैन देवी-देवताओं की मूर्तियां तो हैं ही, किंतु लक्ष्मण मंदिर के समान इसमें वैष्णव और शैव धर्मों से संबंधित शंख-पुरुष परशु-राम, बलराम-रेवती, राम-सीता-हनुमान, यमलार्जुन संबंधित कृष्ण-लीला, शिव, काम-रति आदि भी अंकित हैं। इन मनोरम मूर्तियों के होने पर भी शिखर से नीचे मंदिर का मुखभाग एक ठोस दीवार सा प्रतीत होने के कारण कुछ नीरस सा जान पड़ता है।

मंडप की तोरण सज्जा में अलंकरण और मूर्तियों की बहुलता है। इसमें शालभंजिकाओं, अप्सराओं और पार्श्वदेवों की मूर्तियां सम्मिलित हैं। इसका वितान उलटे कमल पुष्प के समान है। वितान के मध्य में एक फुंदना झूल रहा है, जिसपर उड़ते हुए विद्याधरों की आकृतियां उत्कीर्ण हैं। मंडप से मंदिर में प्रवेश करने के लिए सप्तशाखायुक्त द्वार है जिसमें अलंकरण हीरकों, पाटल-पुष्पों, गणों, व्यालों, मिथुनों, बेलबूटों के अतिरिक्त द्वारपाल सहित मकरवाहिनी गंगा और कूर्मवाहिनी यमुना की आकृतियां उत्कीर्ण हैं। सरितदेवियों के ऊपर तोरण तक विभिन्न मुद्राओं में ढोल, तुरही, मंजीरा, शंख, मृदंग तथा तंतुवाद्य बजाते हुए गंधर्व और यक्षमिथुन अंकित हैं। द्वार के ऊपरी तोरण पर द्वादशभुजी चक्रेश्वेरी एवं दोनों कोनों पर चतुर्भुज शासनदेवियां अंकित हैं। इनके बीच में नवग्रहों का अंकन है। ललाटबिंब के मध्य में आदिनाथ तथा दोनों ओर एक एक तीर्थंकर हैं।

मंदिर के अन्य अंतरंग भाग मंडप, अंतराल, प्रदक्षिणापथ और गर्भगृह हैं। मंडप की दीवार को भीतर से कुड्यस्तंभ का, बाहर से मूर्तियों की तीन पंक्तियों का और मंदिर के अंतरंग भागों को प्रकाशित करने के लिए बनाए गए वातायनों का आधार प्राप्त है। कुड्यस्तंभों के बीच के रिक्त स्थान का उपयोग आठ उप-वेदिकाओं की रचना में किया गया है, जिन पर भव्य और सुंदर परिकर के साथ तीर्थंकर प्रतिमाएं स्थापित की गई थीं। इनमें से केवल एक वेदिका अपने परिकर सहित अद्यावधि यथास्थान विद्यमान है। यह इस मंदिर की एक और विशेषता है, अन्यथा इसका भीतरी भाग अन्य मंदिरों के समान ही निर्मित किया गया है। मंडप की छत चार स्तंभों पर आधारित है। स्तंभों के आलंबनबाहुओं में मनोरम तथा चित्ताकर्षक शालभंजिकाओं की रचना की गई है। वितान उलटे कमल के आकार की पद्मशिला से सज्जित है। मंडप से लगा हुआ अंतराल है, जिसमें बाईं ओर कमल और कलश के साथ अभयमुद्रा में चतुर्भुज शासनदेवी तथा दाईं ओर चतुर्भुज वीणावादिनी अंकित है। यहां भी शीर्षतोरण तथा कृशकाय, वयोवृद्ध, ज्ञानवृद्ध तथा तपोधन अठारह दिगंबर मुनियों से वंदित अर्हत प्रतिमाएं सुशोभित हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मंडप से जुड़ा हुआ प्रदक्षिणापथ है, जिसकी भित्ति पर शासनदेवियों, देवों, गंधर्वों, किन्नरों और अप्सराओं के मध्य आठ मनोज्ञ जिन बिंबों की स्थापना है। यहीं पर पैरों से लेकर हाथों तक लिपटे और शरीर पर रेंगते बिच्छुओं से युक्त बाहुवली स्वामी की सजीव ग्रौर मनोहर प्रतिमा अंकित है। तीर्थंकरों ग्रौर उनके पार्श्व देवी-देवताओं के अतिरिक्त समूचा प्रदक्षिणापथ ऐसी नयनाभिराम सुर-सुंदरियों से अलंकृत है, जिनकी मानवीय सजीवता एवं संवेदनशीलता से चकित दर्शक घंटों उन्हें निहारता रह जाता है।

प्रदक्षिणापथ की परिक्रमा कर हम पुनः गर्भगृह के द्वार पर पहुंच जाते हैं। यह एक पंचशाखा द्वार है जिसका अलंकरण बेलबूटों, गुणों, मिथुनों तथा द्वार-पाल सहित गंगा और यमुना आदि सरित देवियों से किया गया है। द्वारतोरण पर दो सज्जा पट्टियां हैं। इनमें से एक पर नवग्रहों के अतिरिक्त ललाटबिंब में आठवें तीर्थंकर भगवान चंद्रप्रभु पद्मासन विराजगान हैं। तोरण के दोनों सिरों पर कायोत्सर्ग आसन में एक एक तीर्थंकर सुशोभित हैं। ऊपरी तोरण सज्जा रथि-काओं में पांच पद्मासन ग्रौर छः कायोत्सर्ग तीर्थंकर अंकित हैं।

गर्भगृह का निर्माण एकदम सादा है। सिंहासन पर काले संगमरमर से निर्मित पार्श्वनाथ की एक आधुनिक प्रतिमा (1860 ई०) प्राचीन चौकी पर प्रतिष्ठित है। मूलवेदी अपने परिकर सहित पूर्णतया सुरक्षित है और यह संकेत करती है कि मूलप्रतिमा एक चतुर्विंशतिपट्ट थी, जिसके मूलनायक आदिनाथ थे। उनका लांछन वृषभ आज भी पाद पीठ पर दृष्टव्य है।

पार्श्वनाथ मंदिर पूर्वाभिमुख है तथापि इसमें पश्चिममुख एक गर्भगृह का निर्माण किया गया है। इसमें प्रवेश के लिए बाहर की ओर से एक पंचशाखा द्वार मार्ग है। इस द्वार का अलंकरण प्रमुख गर्भगृह के द्वारमार्ग के ही ग्रनुरूप है।

विश्वनाथ : विश्वनाथ ग्रौर नंदी मंदिर पश्चिमी समूह के उत्तर-पूर्व एक ही जगती पर एक दूसरे के सम्मुख स्थित हैं। ग्रधिष्ठान के उत्तरी ग्रौर दक्षिणी दोनों ओर सोपानमार्ग है। दक्षिणी सोपानमार्ग के दोनों पार्श्वों में एक एक हाथी और उत्तरी सोपानमार्ग के पार्श्वों में एक एक सिंह है। विश्वनाथ मंदिर की लंबाई 89 फुट और चौड़ाई 45 फुट है। पंचायतन शैली का सांधारप्रासाद शिव को समर्पित है। उनकी एक प्रतिमा गर्भगृह के द्वार पर ललाटबिंब के रूप में विराजमान है। तलच्छंद में मंदिर की आयोजना प्रायः कंदरिया के समान है। अधिष्ठान पर चारों कोनों में निर्मित खूंटरा मंदिरों में से उत्तर-पूर्व और दक्षिण-पश्चिम के कोनों वाले मात्र दो मंदिर शेष हैं। उत्तर-पूर्वी खूंटरा मंदिर में चतुर्मुख लिंग और दक्षिण-पश्चिमी में दुर्गा की प्रतिमा प्रतिष्ठित है। वास्तुगत विशेषताओं के आधार पर विश्वनाथ का स्थान लक्ष्मण और कंदरिया के मध्य की कड़ी है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इसका महत्व इस तथ्य से भी प्रकट होता है कि यह विकसित खजुराहो शैली के सर्वोत्तम कंदरिया मंदिर का पूर्ववर्ती है। दोनों मंदिरों का मूर्तिशिल्प भी एक जैसा है। जंघा पर समान आकार की तीन समानांतर मूर्ति पंक्तियों का अंकन इन दोनों मंदिरों की विशेषता है। इतना ही नहीं, दोनों की नौ प्रधान अधिष्ठान रथिकाओं में नृत्यरत सप्तमातृकाओं के साथ एक ओर गणेश और दूसरी ओर पार्वती या वीरभद्र का अंकन है। विश्वनाथ मंदिर का सादा शिखर, इकहरा उरु श्रृंग और दोनों ओर दो दो कर्णश्रृंगों से युक्त होने के कारण कंदरिया के शिखर से मिलता-जुलता है। उपर्युक्त तथ्यों से प्रमाणित होता है कि विश्वनाथ कंदरिया का पूर्ववर्ती है।

मंडप की दीवार पर लगा अभिलेख चंदेल वंश के महान शासक धंग का है। इसमें संस्कृत में तेंतीस पंक्तियां हैं। यह 'ओं नमः शिवाय' से प्रारंभ होता है और शिव, भारती, गणेश आदि देव-देवियों की स्तुति के बाद वि० सं० 1059 में धंग द्वारा भगवान शंभु के लिए निर्मित एक देवप्रासाद का उल्लेख करता है। इस मंदिर में मरकत तथा पाषाण निर्मित दो लिंगों की स्थापना की गई थी जिनमें से मरकत लिंग अब मंदिर में नहीं है केवल पाषाण लिंग ही गर्भगृह में विराजमान है। अभिलेख में उल्लिखित मंदिर का अभिज्ञान विश्वनाथ से किया गया है जो समीचीन प्रतीत होता है।

नंदी : विश्वनाथ मंदिर के ठीक सामने शिववाहन नंदी का मंदिर है। यह लंबाई में 31 फुट और चौड़ाई में 30 फुट है। मंदिर में सात फुट महाकाय नंदी की एक ओपदार मूर्ति प्रतिष्ठित है। तलच्छंद में यह बारह स्तंभों पर आधारित एक वर्गाकार देवालय है, जिसके उत्तर-पूर्व और दक्षिण में दो दो स्तंभों पर अवलंबित वातायन है और पश्चिम में दो स्तंभों पर आधारित अर्धमंडप है। यही इस मंदिर का प्रवेशद्वार है। इसका वितान स्तूपाकार है जिसका निर्माण एक पत्थर पर दूसरे पत्थर को रखकर किया गया है। पहले वह अष्टभुज में परिवर्तित कर दिया गया है और पुनः अष्टभुज को उत्तरोत्तर घटते हुए वृत्तों के आकार में परिणत कर दिया गया है। यह मंदिर विश्वनाथ प्रतीत होता है।

देवी जगदंबी : देवी जगदंबी मंदिर 73 फुट लंबा और 42 फुट चौड़ा है। तलच्छंद में यह साधारण क्रूश के आकार का है। इसके महामंडप में दो पक्षावकाश हैं। इस निरंधारप्रासाद में गर्भगृह, अंतराल, महामंडप और अर्धमंडप हैं। यह मंदिर पंचायतन शैली का था, किंतु अब इसके चारों ओर खूंटरा मंदिर नष्ट हो चुके हैं। इसका अधिष्ठान सादा है तथा इसमें समारोह-सज्जापट्टियों का अभाव है। इसके महामंडप में चारों ओर तीन द्वारपाल युगल हैं। महामंडप का वितान सादा उलटे कमल के समान है। वह नंदी मंदिर के समान पहले अष्टभुज में परिवर्तित

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कर दिया गया है और पुनः अष्टभुज को उत्तरोत्तर घटते हुए वृत्तों के आकार में परिणत कर दिया गया है। पार्श्वनाथ की भांति जगदंबी में भी अष्टवसुओं का चित्रण किया गया है। इसका मूर्ति शिल्प बहुत कुछ विश्वनाथ के सदृश है। कंदरिया मंदिर के समान यहां की प्रतिमाओं में सुकुमारता का अभाव है।

गर्भगृह के द्वार ललाटबिंब पर विष्णु की एक प्रतिमा आसीन है जिससे प्रतीत होता है कि यह मंदिर विष्णु को समर्पित था। कालांतर में गर्भगृह की प्रधान विष्णु मूर्ति के स्थान पर लगभग पांच फुट ऊंची देवी पार्वती की चतुर्भुज मूर्ति स्थापित कर दी गई जिसे स्थानीय लोग अब काली या जगदंबा कहते हैं।[17]

चित्रगुप्त : यह मंदिर देवी जगदंबी मंदिर के उत्तर में स्थित है तथा अन्य स्थानीय मंदिरों के समान पूर्वाभिमुख है। यह एक सूर्य मंदिर है, जिसके गर्भगृह में पांच फुट ऊंची सूर्य की मूर्ति विराजमान है। गर्भगृह के द्वारललाट पर भी एक चतुर्भुज धातृसूर्य की प्रतिमा अंकित है। 74 फुट लंबा और 51 फुट चौड़ा यह मंदिर आयोजना, निर्माण-शैली तथा अलंकरण में देवी जगदंबी के मंदिर के अनुरूप है। इस निरंधारप्रासाद में अर्धमंडप, महामंडप, अंतराल तथा गर्भगृह हैं। जगदंबी के विपरीत इसका अधिष्ठान समारोह सज्जापट्टियों से युक्त है। इसमें महामंडप के चारों ओर द्वारपालों के छः युगल हैं। इसी प्रकार इसका वितान अधिक अलंकृत है जो कोनों पर पहले अष्टभुज में परिवर्तित होता हुआ उत्तरोत्तर घटते हुए वृत्तों के आकार में परिणत कर दिया गया है। इस प्रकार यह जगदंबी मंदिर का परवर्ती प्रतीत होता है।

वास्तु और शिल्पगत विशेषताओं के आधार पर कृष्णदेव जगदंबी और चित्रगुप्त को विश्वनाथ और कंदरिया के बीच की कड़ी मानते हुए उनकी निर्माण तिथि 1000-1025 ई० स्वीकार करते हैं। इसमें कोई संदेह नहीं कि जगदंबी और चित्रगुप्त जिस प्रकार एक दूसरे से सटे हुए निर्मित हैं, इस प्रकार दोनों का निर्माण-काल लगभग साथ साथ हुआ होगा। किंतु इन मंदिरों का शिल्प कंदरिया के स्थान पर विश्वनाथ से अधिक मिलता-जुलता है। इस आधार पर उपर्युक्त दोनों मंदिर पार्श्वनाथ और विश्वनाथ के बीच की कड़ी प्रतीत होते हैं।

कंदरिया महादेव : चौंसठयोगिनी के उत्तर में स्थित खजुराहो के विद्यमान मंदिरों में यह सबसे बड़ा है। इसकी लंबाई 102 फुट, चौड़ाई 66 फुट और ऊंचाई 101 फुट है। इसका कंदरिया नामकरण 'कंदरा' से संबंधित प्रतीत होता है, जो शिव के कैलाशपर्वत की कंदरा का प्रतीक है। उसी के समरूप इस मंदिर की रचना भी हुई है। एक अन्य मत के अनुसार भगवान शिव का एक नाम 'कंदर्पी' भी है। इसी 'कंदर्पी' से कंडर्पी शब्द का विकास हुआ, जो कालांतर में 'कंदरिया' में परिवर्तित हो गया। किंतु यदि विचार करके देखा जाए तो पता चलेगा कि कंदरिया

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

नाम 'कंदर्प-अरि' का विकृत रूप है।

विश्वनाथ मंदिर के अनुरूप होने पर भी यह उसकी आयोजना तथा विधान से कहीं अधिक शानदार और परिष्कृत है। इसकी भव्य आकृति और आनुपातिक सुडौलता, उत्कृष्ट शिल्पसज्जा और वास्तु रचना सभी इसे मध्य भारतीय वास्तु कृतियों में श्रेष्ठ प्रमाणित करते हैं। मंदिर की क्रमोन्नत और आरोही प्रतिकृतियों से सज्जित इसका भव्य उत्तुंग और अलंकृत शिखर रचना और विधान में समरसता प्रदर्शित करता है। खजुराहो के अन्य सांधार प्रासादों की योजना के समान इसमें अर्धमंडप, मंडप, महामंडप, अंतराल और गर्भगृह हैं। तलच्छंद में यह दोहरी भुजाओं के लैटिन क्रास के आकार का है। इसके महामंडप और प्रदक्षिणा-पथ में भी कक्षासनयुक्त दो पक्षावकाश हैं और इसी प्रकार पीछे की ओर भी एक कक्षासन है। इनमें प्रदक्षिणापथ आलोकित होता है। तलच्छंद और ऊर्ध्व-च्छंद के प्रत्येक अंग के उत्कृष्ट रचनाविधान और अलंकरण में यह मंदिर अन्य मंदिरों की अपेक्षा बहुत अधिक समृद्ध है। ऊर्ध्वच्छंद में सर्वाधिक लयबद्ध प्रक्षेपणों और रथिकाओं सहित इसकी दांतेदार योजना भी उल्लेखनीय है।

खजुराहो में कंदरिया ही एकमात्र ऐसा मंदिर है जिसकी जगती के दोनों पार्श्वों में और पीछे प्रक्षेपण हैं। इस देवप्रासाद का अधिष्ठान भी अन्य मंदिरों के अधिष्ठानों की अपेक्षा ऊंचा है जिसमें अत्यधिक अलंकृत दो सज्जापट्टियां हैं। इनमें गज, अश्व, योद्धा, आखेटक, नट, संगीतज्ञ, नर्तक नर्तकियां, भक्त, मिथुन आदि से युक्त विविध प्रकार के दृश्य अंकित हैं। अन्य स्थानीय मंदिरों के समान इसके अधिष्ठान के कलश और कुंभ में छोटी छोटी रथिकाएं हैं, जिनमें दंपत्तियों की प्रतिमाएं सुशोभित हैं। जंघा में मूर्तियों की तीन पंक्तियां हैं जिनमें अन्य मंदिरों की अपेक्षा कहीं अधिक प्रतिमाएं हैं। इनमें देव-देवियों, मिथुनों, अप्सराओं शार्दूलों और नाग-नागियों की अत्यंत मोहक और सजीव मूर्तियां हैं।

कंदरिया के अंतःभाग खजुराहो की विकसित शैली के अन्य मंदिरों के समान ही हैं, किंतु वे अपने पूर्ववर्ती देवालयों से अधिक प्रशस्त और अलंकृत हैं। उसके स्तंभों, वड़ेरियों, वितानों और गर्भगृह का शिल्प अत्यंत समृद्ध है। इस मंदिर के प्रवेशद्वार पर दो मकर तोरण बनाए गए हैं जो देव-देवियों, संगीत मंडलियों, कीर्तिमुखों, मकरों और मिथुनों आदि से मंडित हैं। अर्धमंडप और मंडपवितान मूर्तिशिल्प से पूर्ण तथा फलकों में विभक्त हैं। महामंडप का वितान समान केंद्रीय वृत्तों के योग से बना है। महामंडप के वितान की तोरण शालभंजिकाएं अपनी आकर्षक भावभंगिमाओं और सुडौल शरीरपुष्टि के कारण मनोरम हैं। सूक्ष्मता से उकेरे गए उनके अंग-प्रत्यंग उनकी प्रबल आंतरिक मनोवृत्तियों और उद्वेलित भावों की परिचायक तो हैं ही, साथ ही साथ शिल्पी के असाधारण कौशल को

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भी प्रदर्शित करते हैं। गर्भगृह का प्रवेशद्वार सप्तशाखायुक्त है। उसका अलंकरण मकरवाहिनी गंगा और कूर्मवाहिनी यमुना सहित फूल-पत्तियों के अभिप्रायों, मिथुन मूर्तियों और साधनों में लीन तपस्वियों से किया गया है। गर्भगृह एक वर्गाकार सादा प्रकोष्ठ है, जिसमें संगमरमर का शिवलिंग प्रतिष्ठित है।

वामन : विष्णु के वामन अवतार का यह मंदिर ब्रह्मा मंदिर के उत्तर-पूर्व में अवस्थित है। इसकी लंबाई 62 फुट और चौड़ाई 45 फुट है। यह एक अपेक्षाकृत अधिक ऊंचे अधिष्ठान पर स्थित है और तलच्छंद के अंतःभागों की सामान्य योजना और निर्माणशैली में देवी जगदंबी और चित्रगुप्त मंदिरों के समान है, किंतु इसका भवन दोनों की अपेक्षा अधिक भारी और दृढ़ है। गर्भगृह का शिखर भी प्रायः समान आकार का है किंतु इसकी मंजरी में प्रतिकृतियों का अभाव है। निरंधारप्रासाद में अर्धमंडप, महामंडप, अंतराल और गर्भगृह हैं। मंदिर में मिथुन मूर्तियों का अंकन अत्यंत विरल है। शिखर की छोटी रथिकाओं में ही वे दिखाई देती हैं। मंदिर की जंघा में मूर्तियों की केवल दो पंक्तियां हैं। तीसरी पंक्ति की रथिकाओं का अलंकरण हीरकों से किया गया है। यह मंदिर इस दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है कि इसके महामंडप के ऊपर संवरणा छत है और महामंडप के वातायनों (चंद्रावलोकन) के वितान में तोरण शालभंजिकाओं का अलंकरण है। गर्भगृह में विष्णु के अवतार वामन की लगभग पांच फुट ऊंची एक मूर्ति प्रतिष्ठित है। गर्भगृह के चारों ओर बनी निचली पंक्ति की रथिकाओं में वराह, नृसिंह, वामन आदि अवतार और ऊपरी पंक्ति की रथिकाओं में ब्रह्माणी सहित ब्रह्मा, शिव की कल्याणसुंदर मूर्तियां और वैष्णवी सहित विष्णु उल्लेखनीय हैं। इस मंदिर का निर्माण कंदरिया के बाद और आदिनाथ के पूर्व हुआ प्रतीत होता है।[18]

आदिनाथ : यह प्रतिमा निरंधारप्रासाद पार्श्वनाथ के समीप उत्तर में स्थित है। शिखरयुक्त गर्भगृह और अंतराल के अतिरिक्त मंदिर के शेष भाग नष्ट हो गए हैं। इसीलिए मंडप के स्थान पर ईंट और चूने से एक प्रवेश कक्ष बना दिया है। सामान्य योजना, निर्माण शैली तथा शिल्प शैली में यह मंदिर वामन के समान है।

मंदिर एक ऊंची जगती पर निर्मित है। जंघा में मूर्तियों की एक पर एक तीन पंक्तियां हैं। सबसे ऊपरी पंक्ति की मूर्तियां आकार में कुछ छोटी हैं। इस पंक्ति में प्रक्षेपों या उभरे भागों पर विद्याधरों तथा भीतर धंसे भागों पर गंधर्वों और किन्नरों की अत्यंत जीवंत प्रतिमाएं अंकित हैं। उन्हें पुष्पमालाएं ले जाते हुए या संगीत-वाद्य बजाते हुए या शस्त्र चलाते हुए प्रदर्शित किया गया है। शेष दो पंक्तियों के प्रक्षेपों पर शासनदेवताओं, यक्ष मिथुनों तथा सुरसुंदरियों का और भीतर धंसे भागों पर व्यालों का अंकन किया गया है। मूर्तियों की अलंकरणपट्टियों

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

की देवकुलिकाओं में विद्या देवियों की अनेक प्रतिमाएं प्रतिष्ठित हैं। इनके वाहनों, आयुधों और परिकरों का अंकन अत्यंत सजीव और सूक्ष्म है। इन सज्जापट्टियों की एक अन्य विशेषता यह भी है कि इनके कोणों पर प्रथम तीर्थंकर आदिनाथ के शासनसेवक गोमुख या गोवदन यक्ष का अत्यंत सुंदर तथा विलक्षण अंकन मिलता है।

मंदिर का शिखर सप्तरथ तथा इसमें सोलह भूमियां हैं, जिनका संकेत भूमि-आमलकों से मिलता है। प्रत्येक आमलक पर कपोत का उष्णीष है। कर्णरथों में एक खड़ी पट्टी है, जिसमें निचली रथिका में हीरकों सहित चैत्य मेहराब है। मूल रूप से सभी रथ परिधि रेखा (ग्रीवा) से आगे निकले हुए हैं। मध्यवर्ती तथा पार्श्ववर्ती रथों के ऊपर क्रमशः कीर्तिमुख और अर्धकीर्तिमुख हैं। कर्णरथों के ऊपर एक लघु स्तूपाकार शिखर है जिसमें दो पीढ़े, चंद्रिकाएं तथा आमलक है। ग्रीवा के ऊपर एक बड़े आकार का धारीदार आमलक, दो चंद्रिकाएं, एक छोटा आमलक, चंद्रिका और कलश हैं। कलश के ऊपर का एक पुष्पालंकरण बाद में जोड़ा गया प्रतीत होता है।

अंतराल की छत में तीन देव कुलिकाओं की एक श्रृंखला है जिसके ऊपर एक उद्‌गम है। इसके ऊपर क्रमशः ऊर्ध्वोन्मुखी तीन श्रेणियों वाला शिखर है जिसे कमलपत्र और रत्नपट से अलंकृत किया गया है। इसमें सात देवकुलिकाओं की एक पंक्ति है। बीच की देवकुलिका में एक यक्षी की खड्गासन प्रतिमा है जिसके दोनों पार्श्वों में आवरण देवताओं की मूर्तियां हैं। देवकुलिकाओं के ऊपर त्रिकोण शीर्षों की आरोही पंक्तियां हैं। इसके अधिष्ठान पार्श्व में दोनों ओर एक लघु स्तूपाकार शिखर है जिसमें चार पीढ़े, चंद्रिका और आमलक है। सबसे ऊपर के त्रिकोण शीर्ष में चैत्य तोरणों की तीन पंक्तियां हैं। इनके तोरण मकरमुख प्रकार के हैं। सबसे ऊपरी तोरण के दोनों पार्श्वों में पिछले पैरों पर खड़ा हुआ व्याल अंकित है। शिखर के अंत में हाथी पर आक्रमण करते हुए सिंह का अंकन है।

गर्भगृह का द्वार सप्तशाखायुक्त है। पहली शाखा का अलंकरण पत्रलता से, दूसरी और चौथी का नृत्य करते हुए या संगीत वाद्य बजाते हुए गणों से, तीसरी का वाहन सहित आठ शासनदेवियों से, पांचवी का क्रमशः श्रीवत्स तथा पुष्पगुच्छ से छठी का व्यालमुख निसृत पत्रलताओं से और अंतिम या सातवीं का एक विशेष प्रकार की वर्तुलकार गुच्छ रचना से किया गया है। द्वारमार्ग का सरदल स्तंभ शाखाओं पर आधारित है जिसकी पांच देवकुलिकाओं में शासनदेवियों का अंकन है। इनके हाथों में शंख, कमल, कलश, कुलिश, पाश आदि आयुध हैं। इन देव-कुलियों के ऊपर उद्‌गम है। द्वारमार्ग के अधिष्ठान पर वाहन सहित गंगा-यमुना और द्वारपाल अंकित है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

गर्भगृहद्वार के पार्श्ववर्ती चौकोर अर्धस्तंभ वर्तुलाकार गुच्छ रचना एवं कमलपत्र से अलंकृत उपपीठों पर आधारित हैं। स्तंभों का निचला भाग चतुर्भुज द्वारपालों से और बीच का भाग कीर्तिमुखों से निसृत पत्रलताओं, हीरक आकृतियों और घटपल्लवों से सज्जित है। स्तंभशीर्ष पर आमलक और पद्म हैं जिन पर आलंबनबाहु टिके हुए हैं। आलंबनबाहुओं के कोनों में भक्तिविभोर नाग निर्मित हैं। द्वारतोरण पर शची द्वारा सेवित तीर्थंकर की माता को शयन करते हुए अंकित किया गया है तथा उसके बाद माता के सोलह स्वप्न दिखाए गए हैं। यद्यपि ये सोलह मंगल प्रतीक स्वप्न तो जैन मंदिरों में प्रायः अंकित किए गए हैं, किंतु स्वप्न देखती हुई जननी के साथ में उनका अंकन इस मंदिर की विशेषता है।

मंदिर का गर्भगृह अत्यंत सादा है जिसमें प्राचीन प्रतिमा के स्थान पर आदिनाथ की एक अर्वाचीन मूर्ति प्रतिष्ठित है।

जवारी : 39 फुट लंबा और 21 फुट चौड़ा यह निरंधारप्रासाद अर्धमंडप, मंडप, अंतराल और गर्भगृह से युक्त है। अपने अलंकृत मकरतोरण और पतले तथा उत्तुंग मनोरम शिखर के कारण यह मंदिर एक वास्तु रत्न है।[19] सामान्य योजना तथा रचना शैली की दृष्टि से यह चतुर्भुज मंदिर के अनुरूप है। दो विलक्षण वास्तु विशेषताओं के कारण यह खजुराहो समूह के मंदिरों में अपना विशिष्ट स्थान रखता है। प्रथम, इस मंदिर की जंघा की उष्णीषसज्जा में कूट-छाद्य शीर्षयुक्त भरणियों (स्तंभशीर्ष) और कपोतों का प्रयोग हुआ है जो गुजरात के मध्यकालीन मंदिरों का एक विशिष्ट लक्षण है।[20] द्वितीय जंघा की निचली पंक्ति की देवप्रतिमाएं ऐसी रथिकाओं में विराजमान हैं, जिनके वृत्ताकार अर्धस्तंभों के किरीटों पर हीरक है और तोरण मेहराबों से आच्छादित है। यह विशेषता भी गुजरात के मध्ययुगीन मंदिरों में मिलती है किंतु इसका निकटतम सादृश्य उदयपुर के उदयेश्वर (1059-80 ई०) और ग्वालियर के सास-बहू (1093) मंदिरों में मिलता है।[21] इस मंदिर की सुरसुंदरियों का केशविन्यास धम्मिल प्रकार का नहीं है और उनमें से अधिकांश दो लड़ोंवाली मेखलाएं पहने हैं। इसके शिखर की गवाक्षनुमा चैत्य मेहराबें भारी तथा पेचीदा हैं। अंत में इसके द्वार की देहली पर निर्मित सरितदेवियां गंगा-यमुना नृत्य मुद्रा में प्रतीत होती हैं। उनका इसी प्रकार का अंकन दूलादेव मंदिर में भी प्राप्त होता है।

मंदिर के गर्भगृह में विष्णु एक पद्मपीठ पर समभंग खड़े हैं। उनका मस्तक तथा चारों हाथ खंडित हैं। वे सामान्य खजुराहो अलंकारों से अलंकृत हैं। उनकी प्रभावली के ऊपर ब्रह्मा, विष्णु और शिव की छोटी प्रतिमाएं हैं।

वास्तु और शिल्प के आधार पर इस मंदिर का निर्माणकाल आदिनाथ तथा चतुर्भुज मंदिरों के मध्य (1075-1100 ई०) निर्धारित किया जा सकता है।[22]

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चतुर्भुज : यह मंदिर जटकरा ग्राम से लगभग आधा किलोमीटर दक्षिण में स्थित है। यह विष्णु मंदिर निरंधार प्रकार का है। इसमें अर्धमंडप, मंडप, संकीर्ण अंतराल तथा गर्भगृह है। मंदिर योजना में सप्तरथ है। इसका शिखर स्थूल और भारी है तथा इसमें गौण शिखरों का पूर्णतया अभाव है। मंदिर की कुछ अपनी विशेषताएं हैं। बलुवे पत्थर से निर्मित खजुराहो का यह एकमात्र ऐसा मंदिर है, जिसमें मिथुन मूर्तियों का सर्वथा अभाव है। सामान्य रूप से इस मंदिर की शिल्पकला अवनति का संकेत करती है। मूर्तियों के आभूषणों का रेखांकन मात्र हुआ है और उनका सूक्ष्म अंकन अपूर्ण छोड़ दिया गया है। पशु आकृतियां अपरिष्कृत तथा अरुचिकर हैं। अप्सराओं सहित अन्य शिल्प विधान रूढ़िगत है, जिसमें सजीवता और भावाभिव्यक्ति का अभाव है। तो भी, विद्याधरों का अंकन आकर्षक और मनभावन मुद्राओं में किया गया है। इस प्रकार शिल्प सौंदर्य और शैलीगत विशेषताओं के आधार पर यह मंदिर सबसे बाद में निर्मित दूलादेव के निकट प्रतीत होता है। इन दोनों मंदिरों में अलंकरण संबंधी विशिष्ट समानताएं हैं, यथा द्वार के शार्दूल सर्पिल प्रकार के हैं। इन दोनों मंदिरों में कुछ सुरसुंदरियां अधबनी ही छोड़ दी गई हैं। यहां की अधिकांश अप्सराएं और कुछ देव दोहरी मेखला धारण किए हुए अंकित किए गए हैं और मंदिर की रथिकाओं के अर्धस्तंभ वर्तुलाकार बनाए गए हैं। ये सारी विशेषताएं मंदिर के परवर्ती निर्माण की सूचक हैं। अतः चतुर्भुज का निर्माण जवारी और दूलादेव के मध्य माना जा सकता है।

दूलादेव : कनिंघम ने इस मंदिर का नाम कुंवरमठ लिखा है। उनके मतानुसार इसका निर्माण किसी चंदेल राजकुमार ने किया था जिससे यह कुंवरमठ नाम से विख्यात हो गया। गर्भगृह के प्रवेशद्वार पर ब्रह्मा और विष्णु के मध्य भगवान शिव की प्रतिमा उत्कीर्ण है जिससे यह एक शैव मंदिर प्रमाणित होता है।

69 फुट लंबे तथा 40 फुट चौड़े इस निरंधारप्रासाद में गर्भगृह, अंतराल, महामंडप और अर्धमंडप हैं। योजना, आक्रांत और अपने गर्भगृह के कारण यह खजुराहो समूह के मंदिरों में विशिष्ट है और पूर्वमध्ययुगीन दक्कन तथा पश्चिमी भारत के विकसित मंदिरों के समान मध्य धुरी में वर्तुलाकार घूमता प्रतीत होता है। इसका शिखर अन्य खजुराहो मंदिरों के शिखर के ही समान है जिसके चारों ओर उरुश्रृंगों और कर्णश्रृंगों की तीन पंक्तियां हैं। इसके महामंडप की आकृति और अलंकरण की कुछ निजी विशेषताएं हैं। महामंडप और अर्धमंडप के कक्षासनों के बाहरी ओर असामान्य ऊंची वेदिका है। भीतर 18 फुट व्यास का अष्टकोणीय महामंडप है जो खजुराहो मंदिरों में सबसे बड़ा है। महामंडप के वितान में बीस आलंबनबाहु हैं जिनकी अप्सराएं अपनी हृदयग्राही मनोहारिता और लालित्य के कारण दर्शक पर चुंबकीय प्रभाव डालती हैं। महामंडप के वितान की

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रचना अन्य मंदिरों की अपेक्षा कुछ भिन्न है। इसके निर्माण में एक के बाद एक पत्थर इस प्रकार रखा गया है कि इसके बड़े वृत्त उत्तरोत्तर संकुचित होते गए हैं। अन्य मंदिरों की भांति इसमें छोटे वृत्तों का विभाजन नहीं हुआ।

इस मंदिर की प्रतिमाओं की भी कुछ विशेषताएं हैं। यहां नंदीश्वर प्रतिमाओं को नंदी के स्थान पर मकरारूढ़ दिखाया गया है। यम और निऋति प्रतिमाओं के ऊर्ध्वकेश पंख के सदृश प्रदर्शित हैं। जंघा की मूर्तियों में विविधता और मौलिकता का अभाव है तथा शिव और शंकर-पार्वती की एक ही प्रकार की मूर्तियों का अंकन बार बार हुआ है जो शिल्पी की कल्पनाशक्ति के ह्रास का द्योतक है। घटपल्लव, चैत्यतोरण और पत्रलता सदृश्य प्रचलित परंपरागत सज्जा का भी इस मंदिर में अभाव है। खजुराहो के मंदिर जिस शिल्प विधान के लिए संसार में प्रसिद्ध हैं, उस सजीवता का ह्रास इस मंदिर में देखा जा सकता है। इस प्रकार वास्तु तथा शिल्प विधान के आधार पर इसे खजुराहो के पूर्ण विकसित मंदिरों के बाद में निर्मित (1100-1150 ई०) माना जा सकता है। इस मंदिर में उत्कीर्ण 'वसल' शब्द की लिपि से भी उपर्युक्त तथ्य प्रमाणित होता है।

घंटई मंदिर : कला की दृष्टि से खजुराहो के मंदिरों में घंटई मंदिर का निर्माण सबसे बाद में हुआ। 45 फुट लंबे और 25 फुट चौड़े अधिष्ठान पर 14 फुट ऊंचे बारह खंभों द्वारा निर्मित अर्धमंडप और महामंडप के रूप में अवशिष्ट इस मंदिर कंकाल में किसी समय अंतराल और गर्भगृह तो थे ही, अनुपम साज-सज्जा तथा उत्कृष्ट सौंदर्य भी था।

स्तंभों पर झूमते घंटों और क्षुद्र घंटिकाओं की मनोहर तथा जीवंत संयोजना के कारण ही स्थानीय लोग इसे 'घंटई मंदिर' के नाम से पुकारते हैं।

अपनी प्रथम यात्रा में कनिंघम ने मंदिर के बाहर पड़ी हुई बुद्धमूर्ति के आधार पर इसे एक बौद्धमंदिर समझा था।[23] परंतु पांच वर्ष बाद जब वे फर्गुसन के साथ इस स्थान के सर्वेक्षण के लिए आए तब मंदिर के चतुर्दिक फैली मूर्तियों और अन्य सामग्री की परीक्षा करके उन्होंने इसे जैन मंदिर स्वीकार किया।[24] कालांतर में डा० स्मिथ[25] ने भी उनके मत का समर्थन किया। कनिंघम[26] को इस मंदिर के समीप आदिनाथ की एक प्रतिमा मिली थी। मंदिर के महामंडप के प्रवेशद्वार के ललाटबिंब के रूप में आदिनाथ की यक्षी अष्टभुजी गरुड़वाहिनी चक्रेश्वरी भी स्थित है। अतः इसे आदिनाथ का मंदिर कहा जा सकता है।

मंदिर एक साधारण जगती पर स्थित है। अर्धमंडप चार स्तंभों पर आधारित है। स्तंभों के मध्यभाग तल में अष्टकोणीय, बीच में सोलह कोणीय तथा सबसे ऊपर वर्तुलाकार हैं। प्रत्येक स्तंभ के ऊपर एक गोल शीर्ष है जिसमें दांतेदार आमलक और पद्म अंकित हैं। सभी कीचकों के पेट में छेद बनाए गए हैं

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ताकि उनमें अप्सराओं के आलंबनबाहु फंसाए जा सकें। आलंबनबाहुओं पर एक सरदल है, जिसपर भक्त, संगीतकार, नर्तक तथा शोभायात्राओं में सम्मिलित हाथियों से अंकित एक चित्रवल्लरी है। चित्रवल्लरी के ऊपर एक अलंकृत समतल और चौकोर वितान है जिसके किनारों का अलंकरण कमललताओं से किया गया है। वितान के फलकों की सज्जा नर्तकों, गायकों, मिथुनों तथा गजतालुओं से की गई है।

अर्धमंडप के आगे महामंडप है। अब इसमें दीवारें नहीं हैं। पार्श्वनाथ मंदिर के विपरीत इसमें सामने की ओर एक आड़ी पंक्ति में तीन चतुष्कियां है। पूर्व में उनका वितान अलंकृत रहा होगा, किंतु अब सादा है। महामंडप के द्वारपार्श्वों की भित्तियों की आधार वेदियों पर आमने सामने मुख किए दो सशस्त्र द्वारपाल अंकित हैं। वे करंड मुकुट धारण किए हैं। प्रत्येक द्वारपाल के पीछे सिंह से मिलती जुलती आकृति अंकित है। भद्रक प्रकार के अर्धस्तंभों के मध्य बंध के ऊपरी और निचले भागों में घटपल्लव के पारंपरिक अलंकरण हैं।

गर्भगृह का द्वारमार्ग सप्तशाखायुक्त है। पहली शाखा का अलंकरण फुल्लिकाओं से, दूसरी और छठी का व्यालों से, तीसरी तथा पांचवी का नृत्य और संगीतमग्न गणों से किया गया है। चौथी शाखा में कर्णिका और कमल तथा द्वारमार्ग को आवृत करनेवाली सातवीं शाखा में सर्पिल बेलबूटों तथा उसके पार्श्व में एक खड़ी चित्रवल्लरी का अंकन किया गया है। चौथी या स्तंभशाखा पर एक सरदल है जिसके मध्य में गरुड़ासीन अष्टभुजी चक्रेश्वरी अंकित है। उनके हाथों में फल, बाण, चार चक्र, धनुष और शंख हैं। सरदल के दोनों किनारों पर तीर्थंकर प्रतिमाएं और अंतर्वर्ती भाग में दाईं ओर नवग्रहों की आसीन प्रतिमाएं हैं। बाईं ओर द्विभुजी एवं वृषभमुख अष्टवसुओं की आठ मूर्तियां हैं।

सरदल की ऊपरी चित्रवल्लरी में तीर्थंकर माता के सोलह स्वप्न अंकित किए गए हैं। सरदल की तीनों देवकुलिकाओं के ऊपर चैत्य तोरणों के उद्गम या त्रिकोण शीर्ष हैं। तोरण के त्रिरथ स्तूपाकार शिखर के ऊपर चंद्रिका तथा आमलक हैं। द्वारमार्ग के अधिष्ठान पर सरितदेवियों—गंगा तथा यमुना—का अंकन है। देवियों के पार्श्व में एक चामरधारिणी है। द्वारशाखा के दोनों ओर पद्म तथा गदाधारी एक एक द्वारपाल है। द्वारमार्ग के परिवेष्टन में भी उनका अंकन मिलता है। मंदारक के मध्यवर्ती बाहर निकले भागों पर कमलपत्रों का चित्रण है। सज्जा के दोनों ओर एक एक द्विभुजी सरस्वती है। पार्श्ववर्ती देवकुलिकाओं पर छः जलदेवता अंकित हैं।

महामंडप का मध्यवर्ती वितान चार स्तंभों पर आधारित है। प्रत्येक स्तंभ पर तीन दीवट आलंबनबाहु हैं। सरदल पर तीन सज्जापट्टियां हैं। पहली पट्टी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

में एक दूसरे से आवद्ध शृंखलाएं, दूसरे में त्रिकोण और तीसरी सादी है। इसके ऊपर ही समतल वितान है।

संदर्भ

1. इंडियन आर्कीटेक्चर, पृ० 111.
2. वही.
3. वही.
4. वही.
5. स्ट्रगल फार एम्पायर, पृ० 557-76.
6. ऍ० इं०, खंड 15, पृ० 49-51.
7. मंदिरों के विवरण के लिए दे०, क० आ० सा० रि०, खंड 2, पृ० 416-17; धामा और चंद्रा, खजुराहो, पृ० 20-43; कृष्णदेव, ऍ० इं०, खंड 15, पृ० 51-60; खजुराहो, पृ० 20-43; मजूमदार (सं०) स्ट्रगल फार एम्पायर, पृ० 557-76; जनास और एवाय, खजुराहो, पृ० 87-160.
8. ऍ० इं०, खंड 15, पृ० 52.
9. ए० इं०, खंड 1, पृ० 129, श्लो० 37, 39 तथा 45.
10. ऍ० इं०, खंड 15, पृ० 53.
11. वही, पृ०54.
12. ए० इं०, खंड 1, पृ० 135-36.
13. क० आ० स० रि०, खंड 2, पृ० 433; ब्राउन, इंडियन आर्कीटेक्चर, खंड 1, पृ० 133. मित्र, अर्ली रूलर्स आफ खजुराहो, पृ० 70, 181, 205.
14. क० आ० स० रि०, खंड 2, पृ० 433 तथा आगे.
15. ऍ० इं०, खंड 15, पृ० 54.
16. ऍ० इं०, खंड 15, पृ० 54-55
17. कुछ विद्वानों ने इस प्रतिमा का अभिज्ञान शैव विशिष्टताओं की अनदेखी कर लक्ष्मी या मकरवाहिनी गंगा से किया है. दे० क० आ० स० रि०, खंड 2, पृ० 421; गांगुली, आर्ट आफ द चंदेलाज, पृ० 34; जनास और एवाय, खजुराहो, पृ० 103.
18. ऍ० इं०, खंड 15, पृ० 58.
19. वही.
20. वही.
21. वही.
22. वही.
23. क० आ० स० रि०, खंड 2, पृ० 431.
24. वही, खंड 10, पृ० 1.
25. ज० ए० सो० बं, खंड 46, पृ० 285.
26. क० आ० स० रि०, खंड 10, पृ० 16.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

6

मूर्तिकला

वास्तुकला के समान खजुराहो का मूर्तिशिल्प भी असाधारण महत्व का है। यहां उपलब्ध मूर्तियों को चार प्रमुख वर्गों में बांटा जा सकता है। प्रथम वर्ग में वे आराध्य मूर्तियां हैं जो चारों ओर कोरकर बनाई गई हैं। वे रूढ़िगत हैं तथा सामान्यत: पद्मासन या समभंग रूप में खड़ी प्रदर्शित की गई हैं। उनकी प्रभावली विस्तृत है तथा पीछे सज्जापट है जिसमें पार्श्व देवी-देवताओं को अंकित किया गया है। वे शिल्पशास्त्रों द्वारा अनुमोदित नियमों, सूत्रों तथा विहित अनुपातों, चिह्नों तथा लांछनों की सीमा में पूर्णतया बद्ध हैं। इससे उनका सौंदर्यपक्ष कहीं कहीं उपेक्षित सा प्रतीत होता है।

दूसरे वर्ग के अंतर्गत परिवार, पार्श्व या आवरण देवता आते हैं। ये अधिकतर मंदिरों की वाह्य भित्तियों पर या देवकुलिकाओं-रथिकाओं में विराजमान हैं। इनमें विविध प्रकार के दिक्पालों, गणों, जैन शासनदेवताओं, विद्यादेवियों आदि की मूर्तियां हैं। ये पूर्ण या मध्यम उद्भृति में कोरकर बनाए गए हैं। ये पार्श्व-देवता या तो त्रिभंग मुद्रा में खड़े हैं या ललितासन या सुखासन में आसीन हैं। अधिकतर देव-देवियां मानवमूर्तियों सदृश वस्त्रालंकारों से सज्जित हैं। अत: उनके जटा, किरीट या करंड-मुकुट, वाहन और विशिष्ट लांछन ही उन्हें साधारण अलंकरण मूर्तियों से पृथक करते हैं।

तीसरे वर्ग में वे प्रतिमाएं हैं जिन्हें 'सुरसुंदरी' या 'अप्सरा' कहते हैं। इनकी संख्या विपुल है। ये मंदिर की जंघाओं, स्तंभों, वितान के आलंबनबाहुओं, मंडप-महामंडप के अर्धस्तंभों के बीच अंतरालों पर निर्मित की गई हैं। उनको सर्वांग सुंदर और पूर्णयौवना अप्सराओं के रूप में अनेक चित्ताकर्षक भावभंगिमाओं में उत्कीर्ण किया गया है। देवताओं की अनुचरियों के रूप में उन्हें अंजलि मुद्रा में या कमलपुष्प, दर्पण, जलकुंभ, वस्त्रालंकर आदि वस्तुएं लिए हुए प्रदर्शित किया गया है। अधिकांश अप्सराएं सामान्य मानवीय संवेगों तथा क्रियाकलापों को व्यक्त करती हुई अंकित है। इन प्रतिमाओं में उन अनेक नायिकाओं के मूर्तरूप दृष्टव्य हैं जिनका वर्णन भारतीय साहित्य में उपलब्ध है तथा जिनका पूर्ववर्ती रूप मथुरा, अमरावती, नागार्जुनकोंडा आदि की मूर्तिकला में देखा जा सकता है।

चतुर्थ में पशु-पक्षियों की प्रतिमाएं हैं। पशुओं में सबसे अधिक शार्दूल या ब्याल मिलता है, जिसे प्राय: सींगोंवाले शेर के रूप में चित्रित किया गया है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कला में प्रदर्शित यह एक कल्पित पशु है, जिसमें कोई गूढ़ रहस्य अंतर्निहित है। पांचवें और अंतिम वर्ग में मिथुन मूर्तियां हैं।

इन देवप्रतिमाओं का पृथक वर्णन यहां दिया जा रहा है :

आराध्य देवता

विष्णु

हिंदू देव परिवार में विष्णु का स्थान सर्वोच्च है। उनकी पूजा वैदिककाल से आज तक समाज में प्रचलित है। ऋग्वेद काल में वे एक गौण देवता थे। उनकी एक संज्ञा आदित्य भी थी। अंतरिक्ष की यात्रा तीन पगों में पूरी कर देने के कारण ही उस युग में उनकी स्तुति की जाती थी। उनके ये तीन पग सूर्य के उदय, मध्याह्न और अस्त के बोधक हैं। विष्णु के ये तीन पग वेदोत्तरकालीन साहित्य में वामनावतार से संबद्ध कर दिए गए। उत्तर वैदिककाल से उनकी प्रतिष्ठा बढ़ाने लगी, किंतु तब तक वे किसी संप्रदाय के केंद्रबिंदु नहीं बने थे। महाकाव्यों और पुराणों के समय विष्णु हिंदू देवत्रयी—ब्रह्मा, विष्णु और शिव, क्रमशः सर्जक, रक्षक और संहारक—में सिरमौर बन गए।

विष्णु का स्वरूप ऐतिहासिक देवता वासुदेव-कृष्ण, वैदिक सौर देवता विष्णु और ब्राह्मणों के देवता नारायण के समन्वय का परिणाम था। इनमें से वासुदेव-कृष्ण को उनके कुछ संबंधियों—संकर्षण (बड़े भाई), प्रद्युम्न (रुक्मिणी-पुत्र), साम्ब (जाम्बवती-पुत्र) तथा अनिरुद्ध (प्रद्युम्न के पुत्र) के साथ उनके भक्तों द्वारा देवत्व प्रदान किया गया। इन्हें ही पहले पंचवीर कहा गया। बाद में इनमें से साम्ब को हटाकर शेष चार को वासुदेव के 'पर' स्वरूप के रूप में स्वीकार किया गया। कालांतर में इसमें वासुदेव संबंधी विभववाद (अवतारवाद) को सम्मिलित कर दिया गया। ई० पू० में किसी समय इन्हीं वासुदेव का तादात्म्य विष्णु और नारायण से स्थापित किया गया।[1]

पांचरात्र दर्शन के अनुसार विष्णु के पांच रूप हैं : पर (सर्वोच्च), व्यूह (उद्भूत), विभव (अवतीर्ण), अंतर्यामी (सभी प्राणियों के हृदय में स्थित) और अर्चा (पूजा मूर्तियां या विग्रह)।[2] इनमें से भगवान के अंतिम रूप 'अर्चा' से प्रतिमा विज्ञान का सीधा संबंध है। इसके द्वारा पहले तीन रूपों का अंकन होता है और चौथा अंतर्यामी रूप प्रत्येक जीव के हृदय में स्थित होने के कारण प्रतिमा विज्ञान की परिधि में नहीं आता।[3]

व्यूहवाद

पांचरात्र मत कालांतर में वैष्णव या भागवत धर्म के नाम से विख्यात हुआ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भागवत धर्म का उदय वासुदेव-कृष्ण से संबंधित है। वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न तथा अनिरुद्ध के नामों पर ही चारों व्यूहों का नामकरण किया गया। ब्रह्मपुराण में ऐसा उल्लेख है कि नारायण ने अपनी मूर्ति को चार भागों में विभक्त किया। उनका एक निर्गुण रूप वासुदेव नाम से तथा तीन सगुण रूप संकर्षण, प्रद्युम्न तथा अनिरुद्ध नाम से विख्यात हुए। योगीजन वासुदेव की आराधना करते हैं। संकर्षण या शेष मस्तक पर पृथ्वी को धारण करते हैं; प्रद्युम्न धर्म की स्थापना तथा प्रजा का पालन करते हैं और अनिरुद्ध क्षीर सागर में शेषशय्या पर शयन करते हैं। यह चतुर्व्यूहवाद भागवतजनों का विशिष्ट सिद्धांत है। महाभारत[4] में भी इसी सिद्धांत का प्रतिपादन हुआ है। आचार्य शंकर के अनुसार परमात्मा के प्रतीक बासुदेव से संकर्षण (जीव), संकर्षण से प्रद्युम्न (मन) और प्रद्युम्न से अनिरुद्ध (अहंकार) की उत्पत्ति होती है। पांचरात्रों के इस चतुर्व्यूह सिद्धांत की रचना ई० पू० द्वितीय शती में हो गई थी। पांचरात्र धर्माचार्यों ने गुप्तोत्तरकाल में इन चार व्यूहों की संख्या बढ़ाकर चौबीस[5] कर दी और संप्रदाय के प्रधान देवता पद पर विष्णु को प्रतिष्ठित कर दिया। विष्णु के नाम पर ही इस संप्रदाय का नामकरण वैष्णव (भागवत) संप्रदाय हुआ।

अवतारवाद

वैष्णव मत में अवतारवाद का सिद्धांत प्रमुख है। 'अवतार' शब्द ऊंचे से नीचे उतरने की क्रिया का द्योतक है। पुराणों में 'आविर्भाव' शब्द का प्रयोग इसी अर्थ में किया गया है।[6] गीता में कहा गया है कि जब जब धर्म की हानि और अधर्म की वृद्धि होती है तब तब ही मैं साधु पुरुषों का उद्धार करने के लिए और दूषित कर्मों का निरोध करने के लिए तथा धर्म स्थापन हेतु युग युग में प्रकट होता हूं। अवतार तीन प्रकार के होते हैं: पूर्णावतार, आवेशावतार और अंशावतार। पूर्णावतार का प्रतिनिधित्व राम और कृष्ण करते हैं, जो संपूर्ण जीवन के लिए पृथ्वी पर अवतीर्ण हुए थे। आवेशावतार के उदाहरण परशुराम हैं, जो मदोन्मत्त क्षत्रियों के मद का विनाश करने के लिए ही अवतीर्ण हुए थे और कार्य समाप्ति पर अपनी भागवती शक्ति राम को समर्पित कर तप के लिए चले गए थे। अंशावतारों में विष्णु के आयुध पुरुष शंख, चक्र आदि भगवान के आदेश से मानव रूप धारण कर साधु-संतों के रूप में अपने दैविक कार्य निष्पन्न करते हैं।[7]

अवतारों की संख्या

गीता में भगवान कृष्ण के 'युग युग में प्रकट होता हूं' कथन से अवतारों की संख्या असीमित हो गई है। इसी प्रकार भागवतपुराण में हरि के असंख्य अवतार बताए

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

गए हैं। महाभारत में अनेक मत्स्य, कूर्म, वराह, नृसिंह तथा वामन अवतारों का उल्लेख किया गया है। इन्हीं अवतारों में कृष्ण-बलराम, भार्गव राम, दाशरथि राम और कल्कि के नाम जोड़कर उनकी संख्या दस कर दी गई। इन अवतारों में बुद्ध का उल्लेख नहीं किया गया। दशावतारों में बुद्ध के समावेश का ठीक समय ज्ञात नहीं। कुमारिल भट्ट के 'तंत्रवार्त्तिक' से ज्ञात होता है कि आठवीं शती ई० तक बुद्ध को अवतार के रूप में स्वीकृत नहीं किया गया था। किंतु क्षेमेंद्र (1066 ई०) और जयदेव (1150 ई०) बुद्धावतार का वर्णन करते हैं जिससे ज्ञात होता है कि ग्यारहवीं शती ईसवी तक वे दशावतार के अंतर्गत प्रतिष्ठित हो चुके थे।

भागवतपुराण में अवतारों की तीन सूचियां तीन भिन्न स्थलों पर मिलती हैं। पहली सूची में इनकी संख्या 22, दूसरी में 23 और तीसरी में 16 है। पहली सूची के नाम इस प्रकार हैं: (1) पुरुष (2) वराह (3) नारद (4) नर-नारायण (5) कपिल (6) दत्तात्रेय (7) यज्ञ (8) ऋषभ (9) पृथु (10) मत्स्य (11) कूर्म (12) धन्वंतरि (13) मोहिनी (14) नरसिंह (15) वामन (16) भार्गव राम (17) वेदव्यास (18) दाशरथि राम (19) बलराम (20) कृष्ण, (21) बुद्ध, और (22) कल्कि। इन अवतारों में जैनों के प्रथम तीर्थंकर ऋषभनाथ को और बौद्धों के बुद्ध को भी सम्मिलित कर इन धर्मों में समन्वय स्थापित करने का प्रयास किया गया है। उपर्युक्त अवतारों में भी विष्णु के दस[8]—मत्स्य, कूर्म, वराह, नृसिंह, वामन, भार्गव-राम (परशुराम), दाशरथि-राम, कृष्ण-बलराम, बुद्ध और कल्कि—प्रमुख अवतार स्वीकार किए गए हैं। अवतारों के क्रमवद्ध विकास का आधार वैज्ञानिक है। सृष्टि का विकास लघुकाय जीवों से प्रारंभ होता है और क्रमश. महाकाय प्राणियों में परिवर्तित होता है। सृष्टि की रचना जल से प्रारंभ हुई। इसलिए सबसे पहले मत्स्य का जन्म हुआ। ततपश्चात कच्छप हुआ, जो जल और स्थल दोनों में रह सकता था। इसके अनंतर स्थल पर रहने वाले और जल या पंक से अपना भोजन ग्रहण कर लेने वाले प्राणी का प्रतीक वराह आया। वराह के बाद मानव और पशु के बीच की कड़ी नृसिंह का अवतरण माना गया। नृसिंह के बाद लघुकाय वामन आया जो अविकसित मानव का प्रतीक था। मानव का जन्म हो जाने के पश्चात दाशरथि राम ने मनुष्यों में मर्यादाएं स्थापित कीं। बलराम ने शक्ति का प्रदर्शन किया तो बुद्ध ने करुणा, मैत्री और कृपा का संदेश दिया। इस प्रकार अवतारवाद का सिद्धांत पूर्णतया वैज्ञानिक प्रतीत होता है।

भारत में विष्णु की प्राचीनतम पूज्य प्रतिमा मल्हार (जि० विलासपुर, म० प्र०) में मिली है।[9] यह चतुर्भुजी है तथा चारों ओर से कोरकर बनाई गई है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मूर्ति पर उत्कीर्ण ब्राह्मी लेख से पता चला है कि इस प्रतिमा का निर्माण ई० पू० द्वितीय शती के लगभग हुआ था। विष्णु की कुषाणकालीन प्रतिमाएं मथुरा से मिली हैं। गुप्तकाल तथा उसके पश्चात पंचदेवों में प्रमुख होने के कारण विष्णु की प्रतिमाओं का निर्माण प्रायः संपूर्ण देश में बड़े पैमाने पर हुआ।

खजुराहो से प्राप्त वैष्णव मूर्तियों को निम्नलिखित पांच वर्गों में विभक्त किया जा सकता है :

1. सामान्य मूर्तियां
2. चतुर्विंशति मूर्तियां
3. दशावतार मूर्तियां
4. अन्य अवतार मूर्तियां
5. गरुड़ तथा आयुध पुरुष

सामान्य मूर्तियां

खजुराहो में उपलब्ध विष्णु की सामान्य प्रतिमाएं तीन प्रकार की हैं : स्थानक, आसन और शयन।

स्थानक प्रतिमाएं : विष्णु की एक सुंदर स्थानक प्रतिमा खजुराहो संग्रहालय (क्र० 117) में प्रदर्शित है। इसमें समभंग खड़े विष्णु किरीट मुकुट, रत्नकुंडल, केयूर, कंकण, मेखला, वैजयंतीमाला, यज्ञोपवीत और नूपुरों से अलंकृत हैं। वे शंख, चक्र, गदा और पद्म धारण किए हैं। उनके मस्तक के पीछे प्रभामंडल है, जिसके ऊपर ब्रह्मा, शिव और मालाधारी विद्याधर युगल अंकित हैं। नीचे देवता के दोनों पार्श्वों में चक्र तथा शंख पुरुष अंकित हैं। उनके ऊपर विष्णु की पत्नियां क्रमशः श्री और पुष्टि उत्कीर्ण है। इसके अतिरिक्त शिरश्चक्र में मत्स्य, कूर्म, वराह, नृसिंह, वामन, परशुराम, राम, बलराम और कल्कि अवतारों का अंकन है।

इसी संग्रहालय (क्र० 124) में विष्णु की एक मनोरम प्रतिमा है जिसमें वे समभंग खड़े हैं। वे अपने सामान्य आभूषणों से अलंकृत हैं। उनके तीन हाथों में क्रमशः अक्षमाला, गदा और चक्र हैं। चौथे हाथ में शंख रहा होगा किंतु अब वह खंडित है। प्रभामंडल के ऊपर दाएं-बाएं क्रमशः ब्रह्मा और शिव की मूर्तियां प्रदर्शित हैं। उनके दोनों ओर मालाधारी विद्याधर अंकित हैं। प्रभामंडल के नीचे दाएं-बाएं पार्श्वों में क्रमशः चक्र और शंख पुरुष हैं। पद्मपीठ के नीचे कूर्मासन पर लक्ष्मी विराजमान है। इनके अतिरिक्त विष्णु के वामन, परशुराम, राम, बल-राम, बुद्ध और कल्कि अवतार भी अंकित हैं।

विष्णु की सर्वाधिक विलक्षण प्रतिमा चतुर्भुज मंदिर के गर्भगृह में प्रतिष्ठित है। यहां चतुर्भुज देवता त्रिभंग खड़े हैं तथा जटा-मुकुट, हार, ग्रैवेयक, कौस्तु-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भमणि, कुंडल, केयूर, कंकण, नूपुर, किंकिणी तथा यज्ञोपवीत धारण किए हैं। उनका पहला हाथ खंडित है, दूसरा अभयमुद्रा में है, तीसरे में वेकुंडलित कमलनाल और पुस्तक लिए हैं और चौथा नीचे लटकता हुआ प्रदर्शित है। इस हाथ की अंगुलियां खंडित हैं। प्रभामंडल के स्थान पर एक मकर तोरण है, जिसके आधे भाग में नवग्रहों का अंकन है। देवता के दोनों पार्श्वों में एक एक देवी खड़ी है। दाएं पार्श्व की देवी के सामने एक अष्टभुजी प्रतिमा तथा बाएं पार्श्व की देवी के सामने एक खंडित प्रतिमा है। इनके अतिरिक्त भक्त आदि प्रदर्शित हैं।

आसन प्रतिमाएं : खजुराहो में विष्णु की योगासन, ललितासन और गरुड़ासन प्रकार की आसन प्रतिमाएं मिलती हैं। इनका वर्णन इस प्रकार है :

योगासन : योगासन प्रतिमाओं में सबसे दुर्लभ प्रतिमा मौनव्रतिन विष्णु (खजुराहो संग्रहालय, क्र० 125) की है। इस मूर्ति में भगवान एक पद्मपीठ पर पद्मासन पर आसीन हैं। किरीट-मुकुट, ग्रैवेयक, मौक्तिकमाल, वैजयंतीमाला, कुंडल, केयूर, कंकण, कौस्तुभमणि, यज्ञोपवीत तथा मेखला से वे अलंकृत हैं। उनका कमलाकार प्रभामंडल अत्यंत मनोरम है। देवता के मुख की ओर मुड़े हुए बाएं ऊपरी हाथ की तर्जनी, अधरों के बाएं छोर को स्पर्श करती हुई उनके मौन स्वरूप को अभिव्यक्त करती है। दूसरे बाएं हाथ में चक्र है। उनके दोनों दाएं हाथ खंडित हैं, किंतु दाईं ओर गदा का अंकन स्पष्ट दिखाई पड़ता है। पद्मपीठ पर दोनों कोनों पर हाथ जोड़े हुए भक्त बैठे हैं। संभवत: मध्य में विराजमान प्रतिमा गरुड़ की है।

ललितासन : विष्णु की सभी ललितासन प्रतिमाएं चतुर्भुजी हैं।[10] इनका पहला हाथ पद्मपाणि मुद्रा में और शेष तीन हाथों में क्रमश: गदा, चक्र और शंख हैं। सभी मूर्तियां किरीट-मुकुट तथा सामान्य आभूषणों से सज्जित हैं। छोटी प्रतिमाओं के विपरीत बड़ी मूर्तियों की प्रभावली में ब्रह्मा और शिव का अंकन मिलता है। इस प्रकार की एक प्रतिमा में लक्ष्मी और गरुड़ भी प्रदर्शित हैं।

गरुड़ासन : खजुराहो में गरुड़ासन विष्णु का अंकन एकल तथा लक्ष्मी के साथ आलिंगन मुद्रा में किया गया है। खजुराहो संग्रहालय (क्र० 19) में प्रदर्शित मूर्ति में अष्टभुजी विष्णु अलंकृत नर-गरुड़ पर ललितासन में विराजमान हैं। यहां गरुड़ का मूंछें तथा डाढ़ी भी अंकित है। उड़ान के लिए उद्यत उसने दोनों हाथों पर देवता को अवलंब दे रखा है। देवता का मस्तक तथा आठों भुजाएं खंडित हैं। ऊपर की बनी रथिकाओं में क्रमश: ब्रह्मा, विष्णु और महेश आसीन हैं। प्रभावली में विष्णु के मत्स्य, कूर्म, वराह, नृसिंह, राम, बलराम, बुद्ध और कल्कि अवतारों का मनोरम अंकन किया गया है। गरुड़ के दोनों पार्श्वों में दो दो अनुचरियां खड़ी हैं, जो विष्णु की पत्नियां श्री-पुष्टि और श्री-भूमि हो सकती हैं। नीचे पद्मपीठ

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पर चतुर्भुजी लक्ष्मी तथा भक्त बैठे हुए चित्रत किए गए हैं।

शयन : खजुराहो में शयन मूर्तियों की संख्या अधिक नहीं है। प्राप्त प्रतिमाओं में खजुराहो संग्रहालय (क्र० 566) में प्रदर्शित शयनमूर्ति विशेष उल्लेखनीय है, जिसमें किरीट-मुकुट, वैजयंतीमाला आदि सामान्य आभूषणों से सज्जित चतुर्भुज विष्णु शेषशय्या पर शयन करते प्रदर्शित हैं। उनके मुकुट के ऊपर शेषनाग के सात फणों वाला घटाटोप है। उनका दायां पैर लक्ष्मी की गोद में तथा बायां शेषशय्या पर स्थित है। उनके पहले दाएं हाथ में गदा है और दूसरे पर उनका सिर अवलंबित है। दोनों बाएं हाथ खंडित हैं। नाभिकमल पर ब्रह्मा विराजमान है। विष्णु के सिर से लेकर चरणों तक एक पंक्ति में अनेक पार्श्वचर अंकित हैं जिनमें अनुचर देवता तथा आयुध पुरुषों का अंकन है। मूर्ति के सबसे ऊपरी भाग पर पंक्तिबद्ध नवग्रह और उनके पीछे विष्णु के मत्स्य, वराह, नृसिंह, वामन, राम और कल्कि अवतार प्रदर्शित हैं। मूर्ति के निचले भाग में एक अनुचर दोनों हाथों से चक्र पकड़े है। समीप ही दो अनुचरों में से एक उत्कूटिकासन में बैठा है तथा दूसरा कमर से पूर्णतया नीचे झुका है। यहीं अश्व के सामने एक खड्गधारी भी बैठा है। तत्पश्चात खड्गधारी मधुकैटभ के पौराणिक आख्यान का अंकन है। बिलकुल किनारे पर राजलक्ष्मी प्रदर्शित है। यह मूर्ति खराखुहो कला की उत्कृष्ट कृतियों में से एक है।

चतुर्विशति मूर्तियां

विष्णु के चतुर्व्यूह (वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न और अनिरुद्ध) के आधार पर उनकी चौबीस मूर्तियों का निर्माण किया गया। महाभारत में उनके एक सहस्र नामों का उल्लेख मिलता है, जिनमें केशव, नारायण, माधव, गोविंद, विष्णु, मधुसूदन, त्रिविक्रम, वामन, श्रीधर, हृषीकेश, पद्मनाभ, दामोदर, वासुदेव, संकर्षण, प्रद्युम्न, अनिरुद्ध, पुरुषोत्तम, अधोक्षज, नृसिंह, अच्युत, उपेन्द्र, हरि, कृष्ण जैसे नाम प्रमुख हैं। गुप्तकाकीन तथा परवर्ती अभिलेखों में भी इनमें से कई संज्ञाएं मिली हैं। इनकी खड़ी अभंग प्रतिमाएं प्रतिष्ठित की गईं। सभी मूर्तियां चतुर्भुजी हैं तथा किरीट मुकुट और सामान्य खजुराहो आभूषणों से अलंकृत हैं। ये सभी मूर्तियां एक जैसी हैं, केवल उनके आयुधों के हेरफेर से उनका अभिज्ञान होता है। विष्णु की चार भुजाओं में शंख, चक्र, गदा और पद्म को बदल बदल कर रखने से उनके चौबीस रूप बनते हैं। इन्हीं क्रमों के आधार पर उन्हें विभिन्न नामों से संबोधित किया जाता है। रूप-योजना की तालिका पृष्ठ 74 के अनुसार है। चतुर्विशति मूर्तियों की इस तालिका में से विष्णु, माधव, पुरुषोत्तम, पद्मनाभ, हृषीकेश, अच्युत, संकर्षण, त्रिविक्रम, गोविंद, अनिरुद्ध, नारायण, केशव, वामन,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

1. वासुदेव	गदा	शंख	चक्र	पद्म
2. केशव	पद्म	शंख	चक्र	गदा
3. नारायण	शंख	पद्म	गदा	चक्र
4. माधव	गदा	चक्र	शंख	पद्म
5. पुरुषोत्तम	चक्र	पद्म	शंख	गदा
6. अधोक्षज	पद्म	गदा	शंख	चक्र
7. संकर्षण	गदा	शंख	पद्म	चक्र
8. गोविन्द	चक्र	गदा	पद्म	शंख
9. विष्णु	गदा	पद्म	शंख	चक्र
10. मधुसूदन	चक्र	शंख	गदा	पद्म
11. अच्युत	गदा	पद्म	चक्र	शंख
12. उपेन्द्र	शंख	गदा	चक्र	पद्म
13. प्रद्युम्न	चक्र	शंख	गदा	पद्म
14. त्रिविक्रम	पद्म	गदा	चक्र	शंख
15. नृसिंह	चक्र	पद्म	गदा	शंख
16. जनार्दन	पद्म	चक्र	शंख	गदा
17. वामन	शंख	चक्र	गदा	पद्म
18. श्रीधर	पद्म	चक्र	गदा	शंख
19. अनिरुद्ध	चक्र	गदा	शंख	पद्म
20. हृषीकेश	गदा	चक्र	पद्म	शंख
21. पद्मनाभ	शंख	पद्म	चक्र	गदा
22. दामोदर	पद्म	शंख	गदा	चक्र
23. हरि	शंख	चक्र	पद्म	गदा
24. कृष्ण	शंख	गदा	पद्म	चक्र

श्रीधर तथा दामोदर आदि का अंकन खजुराहो के मंदिरों में प्राप्त हैं।[11] ६

दशावतार मूर्तियां

विभववाद का वर्णन करते समय इस अध्याय के प्रारंभ में सर्वमान्य दशावतारों—मत्स्य, कूर्म, वराह, नृसिंह, वामन, परशुराम, राम, कृष्ण, बुद्ध और कल्कि का उल्लेख किया जा चुका है। इनका वर्णन इस प्रकार है :

मत्स्यावतार : भागवतपुराण[12] से ज्ञात होता है कि पिछले कल्प के अंत में ब्रह्मा के निद्रामग्न हो जाने के कारण ब्राह्म नामक नैमित्तिक प्रलय हुआ। इससे पृथ्वी सहित सारे लोक जलमग्न हो गए। प्राक् प्रलयकाल में जब ब्रह्मा निद्रालीन हो

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रहे थे, तब उनके मुख से वेदों का उच्चारण हुआ। हयग्रीव नामक एक बलशाली दैत्य ने चोरी से उनकी धारणा कर ली। भगवान ने मत्स्यावतार धारण कर हयग्रीव का वध कर वेदों का उद्धार किया। यही इस अवतार का मुख्य उद्देश्य था।

खजुराहो में मत्स्यावतार का अंकन प्राय: मत्स्य अवतार विग्रह में हुआ है। लक्ष्मण मंदिर की उत्तरी ऊर्ध्व रथिका में उत्कीर्ण मत्स्य अवतार विग्रह में चतुर्भुज विष्णु पद्मासन विराजमान हैं। वे किरीट मुकुट तथा अन्य सामान्य आभूषणों से सज्जित हैं। उनके ऊपरी दाएं-बाएं हाथों में क्रमश: गदा और चक्र हैं। शेष दोनों हाथ योगमुद्रा में हैं। पीठिका पर एक मत्स्य अंकित है। प्रतिमा के पीछे की ओर छ: मानवाकृतियां दिखाई गई हैं, जिनमें हयग्रीव भी अंकित है। इसी मंदिर के गर्भगृह द्वार की एक रथिका में कमलपत्र के ऊपर एक साधारण मत्स्य स्वतंत्र-रूप से अंकित है। उसके ऊपर वेदों के प्रतिनिधि चार पुरुष मुख बने हैं। इस शिल्प में मत्स्यावतार द्वारा वेदों का उद्धार प्रदर्शित किया गया है।

कूर्मावतार : भागवतपुराण[13] से ज्ञात होता है कि अमृतप्रप्ति के लिए देव-दानवों ने जब सागरमंथन किया, तब भगवान विष्णु ने कच्छप रूप धारण कर मंदराचल रूपी मथानी को अपनी पीठ पर आधार दिया था। कूर्मावतार का यह अंकन कमलपत्र पर किया गया है तथा समुद्रमंथन की पूर्ण प्रक्रिया इसमें अंकित है।[14]

वराह अवतार : भागवतपुराण[15] के अनुसार विष्णु ने प्रलयजल में निमग्न पृथ्वी का उद्धार करने के लिए वराह रूप धारण किया था। जल के भीतर पृथ्वी का उद्धार करते समय हिरण्याक्ष नामक दैत्य से उनका युद्ध हुआ जिसे उन्होंने अपने डाढों से खंड खंड करके पाताल से भूदेवी का उद्धार किया। खजुराहो में वराह अवतार की मूर्तियों का बाहुल्य है जिनमें कुछ तो यहां की कलाकृतियों में अपना महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं। यहां के वराह मंदिर में प्रतिष्ठित महाकाय चतुष्पाद वराह पादपीठ पर खड़े हैं। उनके संपूर्ण शरीर में अनेक हिंदू देव-देवियां, यथा ब्रह्मा, विष्णु, महेश, सूर्य, लक्ष्मी, सरस्वती, वीरभद्र, गणेश, सप्तमातृकाएं, अष्ट दिक्पाल आदि उत्कीर्ण हैं। वराह द्वारा उद्भूत पृथ्वी की आकृति इस प्रतिमा में प्राय: पूर्णरूपेण नष्ट हो गई है।

खजुराहो के मंदिरों में उत्कीर्ण नृवराह मूर्तियों की भी कमी नहीं है। खजुराहो संग्रहालय (क्र० 861) में प्रदर्शित मूर्ति में वराहमुख विष्णु का अंकन है। वे हार, ग्रैवेयक, अंगद, कंकण, मेखला, नूपुर तथा वनमाला से अलंकृत हैं। उनका पहला हाथ कटि पर है और शेष तीन हाथों में क्रमश: गदा, शंख और चक्र हैं। उनकी कुहनी पर अवलंबित भूदेवी की सुंदर आकृति बनी है जिसके हाथ में कमल प्रदर्शित है। मूर्ति के तीन ओर बनी रथिकाओं में ब्रह्मा, सूर्य-नारायण और शिव आसीन हैं। नीचे दाएं पार्श्व में गरुड़ और बाएं में लक्ष्मी खड़ी हैं। इसके अति-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रिक्त प्रभामंडप में विष्णु के अवतारों का चित्रण है।

नृसिंह अवतार : हिरण्यकशिपु नामक दैत्य का वध करने के लिए विष्णु ने नृसिंह अवतार लिया। इस दैत्य ने ब्रह्मा से यह वर मांगा कि किसी भी प्राणी से आकाश या धरती पर, दिन में या रात में उसका वध न हो सके। इसीलिए जब वह अपने पुत्र को खंभे में बांधकर मारने को उद्यत हुआ तब खंभे को तोड़कर भगवान का जो रूप प्रकट हुआ वह नृसिंह का था, न पूरा पशु न पूरा मनुष्य। दैत्यराज ने शीघ्र ही उनपर गदा प्रहार किया। देर तक दोनों में युद्ध चलता रहा। अंत में दिन और रात्रि के बीच संध्याकाल में नृसिंह ने दैत्यराज को उठाकर अपने लंबे और तेज नाखूनों से उसका पेट विदीर्ण कर डाला। इस प्रकार दैत्य का अंत हुआ। खजुराहो में नृसिंह अवतार की दो से लेकर चौसठ भुजाओं तक की मूर्तियां पाई जाती हैं। सभी मूर्तियों में सिंहमुख, विकराल नेत्र, लहराती केशराशि, आलीढ़, प्रत्यालीढ़ या त्रिभंग मुद्रा, जंघाओं पर पड़े हिरण्यकशिपु, दो हाथों द्वारा विदीर्ण पेट या वक्षस्थल का अंकन किया गया है। इस संदर्भ में खजुराहो संग्रहालय की मूर्ति (क्र० 1252) विशेष उल्लेखनीय है। इसमें चौसठ भुजाओं से युक्त नृसिंह अपनी एक बाईं भुजा से हिरण्यकशिपु का बायां हाथ पकड़े हैं। उनकी बाईं जंघा पर पड़े दैत्यराज के उदर से रक्त बह रहा है। देवता के दाईं ओर चार असुरों का चित्रण है। उनका मस्तक खंडित हो गया है किंतु उसके दोनों ओर बनी रथिकाओं में ब्रह्मा और शिव दर्शनीय हैं। मस्तक के ठीक ऊपर विष्णु प्रतिमायुक्त रथिका टूट गई है। खजुराहो की नृसिंह मूर्तियों में यह सबसे बड़ी, तथा अभिव्यक्ति और रचना की दृष्टि से एक उज्ज्वल कृति है।

वामन अवतार : भागवतपुराण[16] से ज्ञात होता है कि अदिति की तपस्या से प्रसन्न होकर भगवान ने वामन अवतार लिया। उनका शरीर छोटा होने के कारण अंग भी उसी के अनुरूप छोटे और सुंदर थे। ऐसे रूप को देखकर दैत्यराज बलि अत्यंत प्रसन्न हुए। इसीलिए जब वामन ने उनसे तीन पग भूमि मांगी तब अपने गुरु शुक्राचार्य के मना करने पर भी उन्हें तीन पग भूमि देने का बलि ने संकल्प कर दिया। तत्काल भगवान ने अपना वामन रूप विराट बनाकर तीनों लोकों को दो ही पग में नाप लिया। खजुराहो में वामन की अनेक मूर्तियां हैं। यहां के वामनावतार मंदिर में एक विशाल चतुर्भुजी प्रतिमा स्थापित है। उनके चारों हाथ खंडित हैं। सिर पर कुंतल केशराशि है तथा वे हार, ग्रैवेयक, कुंडल, कौस्तुभमणि केयूर, यज्ञोपवीत, अजिनोपवीत, मेखला, नूपुर और वनमाला धारण किए हैं। उनके पार्श्वों में क्रमशः शंख और चक्र पुरुष विद्यमान हैं। भूदेवी शंख पुरुष के पीछे खड़ी हैं तथा चक्र पुरुष के पीछे गरुड़ है। देवता के मस्तक के पीछे प्रभामंडल है जिसके एक कोने में ब्रह्मा तथा दूसरे कोने में शिव हैं। प्रभामंडल में वराह,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

नृसिंह, वामन, परशुराम बुद्ध और कल्कि अवतारों के चित्रण हैं। प्रभामंडल के ऊपरी खंडित भाग में कुछ अवतारों के भी अंकन रहे होंगे। पद्मपीठ के नीचे कूर्म पर एक देवी आसीन है।

परशुराम : मदोन्मत्त क्षत्रियों का संहार करने के लिए स्वयं विष्णु ने परशुराम के रूप में अवतार लिया। भागवतपुराण में कहा गया है कि जब ब्राह्मणद्रोही तथा आर्यमर्यादा का उल्लंघन करने वाले क्षत्रिय भूभार वन गए तब महापराक्रमी परशुराम ने अपने भयंकर परशु से इक्कीस बार उनका विनाश किया। खजुराहो में परशुराम की प्रतिमाएं विरल हैं। उनकी एक प्रतिमा पार्श्वनाथ मंदिर की उत्तरी वाह्य भित्ति पर उत्कीर्ण है जिसमें वे किरीट-मुकुट, वनमाला आदि से अलंकृत त्रिभंग मुद्रा में खड़े हैं। उनके चारों हाथों में क्रमशः परशु, शंख, पद्म और चक्र है। शक्ति सहित परशुराम की एक सर्वाधिक महत्वपूर्ण प्रतिमा भी इसी मंदिर की पश्चिमी वाह्यभित्ति पर निचली पंक्ति में मिलती है। उपर्युक्त मूर्ति की भांति सामान्य आभूषणों से अलंकृत देवता त्रिभंग खड़े हैं। सामान्य आभूषणों से सज्जित उनकी शक्ति भी स्वामी के वाम पार्श्व में आलिंगनबद्ध खड़ी है।

राम : सूर्यवंशी राजा दशरथ के पुत्र मर्यादा पुरुषोत्तम राम के चरित का विशद वर्णन वाल्मीकि रामायण में मिलता है। संपूर्ण भारत में उनका चरित युगों युगों से लोकप्रिय रहा है। यह आश्चर्य की बात है कि रामकथा साहित्य में जितनी प्रचलित है, पुरातत्व के क्षेत्र में उतनी ही अछूती प्रतीत होती है। खजुराहो में रामकथा के कुछ शिलाफलक पार्श्वनाथ तथा लक्ष्मण मंदिरों में प्राप्त होते हैं। पार्श्वनाथ मंदिर की वाह्य पश्चिमी भित्ति की निचली पंक्ति में किरीट मुकुट, वनमाला तथा अन्य आभूषणों से अलंकृत चतुर्भुज राम खड़े हैं। वे पहले तथा तीसरे हाथों में क्रमशः गदा और शंख लिए हैं। शेष हाथ खंडित हैं। उनके बाएं स्कंध पर एक धनुष और दाएं पर एक निषंग है जिसके ऊपर निकले बाण दिखाई दे रहे हैं। इसी मंदिर की उत्तरी वाह्य भित्ति की निचली पंक्ति में राम-सीता की एक आलिंगन मूर्ति उत्कीर्ण है। इसमें किरीट मुकुट, वनमाला आदि आभूषणों से अलंकृत चतुर्भुज देवता त्रिभंग खड़े हैं। वे अपने पहले हाथ से हनुमान के सिर का स्पर्श कर रहे हैं; दूसरे तथा चौथे हाथों में वे एक लंबा बाण पकड़े हैं और तीसरे हाथ से सीता का आलिंगन कर रहे हैं। राम की पीठ पर तूणीर बंधा है।

कृष्णावतार : कृष्ण वसुदेव-देवकी के पुत्र थे। उनका व्यक्तित्व अत्यधिक उदात्त, लोकरंजक एवं व्यापक होने के कारण भारतीय साहित्य में प्रमुखता से अंकित किया गया है। शिल्पियों के लिए उनकी लीलाएं अत्यंत प्राचीनकाल से एक प्रिय विषय रही हैं जिसे अंकित कर उन्होंने अपनी कला को धन्य माना है। खजुराहो में कृष्णलीला संबंधी अंकन अधिकांशतः लक्ष्मण मंदिर के प्रदक्षिणापथ के चारों

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ओर मिलते हैं। इनमें पूतनावध, शकटभंग, तृणावर्त्तवध, यमलार्जुन उद्धार, वत्सांसुर वध, कालियमर्दन, अरिष्टासुरवध, कुवजानुग्रह, कुवलयापीडवध, चाणूर युद्ध, शल युद्ध तथा बलराम द्वारा लोमहर्षण के वध आदि के मनोरम चित्रण उल्लेखनीय हैं। लक्ष्नण मंदिर के अतिरिक्त पार्श्वनाथ और विश्वनाथ मंदिरों में भी एकाधिक कृष्णलीलाएं उत्कीर्ण की गई हैं।

बलराम अवतार : बलराम कृष्ण के बड़े भाई थे। इसीलिए कृष्ण के समान उनका जीवन चरित्र भी अनेक पुराण ग्रंथों में वर्णित किया गया है। खजुराहो में बलराम की स्वतंत्र मूर्तियां उपलब्ध हैं। इनमें से एक प्रतिमा लक्ष्मण मंदिर की प्रदक्षिणापथ की पश्चिमी दीवार में अंकित है जिसमें चतुर्भुज बलराम द्विभंग खड़े हैं। वे स्थूलकाय हैं और करंड मुकुट, कुंडल, हार, ग्रैवेयक, कौस्तुभमणि, केयूर, वनमाला, मेखला आदि से अलंकृत हैं। सिर पर नागफणों का घटाटोप और दोनों पार्श्वों में दो दो अनुचरियां खड़ी हैं। दाएं पार्श्व में एक सेविका वारुणी पात्र लिए खड़ी है। पार्श्वनाथ मंदिर की दक्षिणी वाह्यभित्ति की निचली मूर्ति पंक्ति में बलराम और उनकी पत्नी रेवती आलिंगन मुद्रा में खड़े प्रदर्शित किए गए हैं। चतुर्भुज बलराम सामान्य आभूषणों से सज्जित हैं। उनका दायां हाथ रेवती को आलिंगन में भरता हुआ उसके स्तन का स्पर्श कर रहा है।

बुद्ध और कल्कि अवतार : खजुराहो में विष्णु के बुद्ध और कल्कि अवतारों की स्वतंत्र प्रतिमाएं उपलब्ध नहीं हैं। उनका अंकन विशाल विष्णु-मूर्तियों के प्रभा-मंडल में अन्य अवतारों के साथ ही किया गया है।

दशावतारों की सम्मिलित मूर्ति : खजुराहो में दशावतारों की एक विलक्षण मूर्ति उपलब्ध है[17] जिसमें सभी प्रमुख अवतारों का सम्मिलित अंकन है। मूर्ति में सामान्य आभूषणों से सज्जित एकादशमुख विष्णु त्रिभंग खड़े हैं। केंद्रीय मुख के दोनों ओर छोटे छोटे पांच मुख हैं जो उनके दश अवतारों का प्रतिनिधित्व करते हैं। विष्णु के दाएं पार्श्व में लक्ष्मी तथा वाएं में गरुड़ अंकित हैं। उनके पीछे क्रमशः चक्र और शंख पुरुष उपस्थित हैं। प्रभामंडल के ऊपर एक ओर ब्रह्मा और दूसरी ओर शिव प्रदर्शित हैं।

अन्य अवतार मूर्तियां

दत्तात्रेय : दत्तात्रेय (हरि-हर पितामह) भी विष्णु के एक अवतार हैं। उनके जन्म तथा जीवन चरित्र की विस्तृत कथा पुराणों में मिलती है।[18] खजुराहो में दत्तात्रेय के दो अंकन खजुराहो संग्रहालय (क्र० 63 और 64) में प्रदर्शित हैं। इनमें से पहली प्रतिमा में ब्रह्मा, विष्णु और शिव की अलग अलग आकृतियां एक पंक्ति में बनी हैं। तीनों चतुर्भुज तथा समभंग खड़े हैं। ब्रह्मा त्रिमुख हैं। उनका सिर खंडित हो

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

गया है। वे सामान्य खजुराहो अलंकारों से सज्जित हैं। उनका पहला हाथ वरद मुद्रा में है और शेष तीन में क्रमशः स्रुक, सनाल कमल सहित पुस्तक और कमंडलु हैं।

वैकुंठ : वैकुंठ अवतार की एक रोचक कथा खजुराहो लक्ष्मण मंदिर अभिलेख में मिलती है। इसके अनुसार विष्णु ने कपिल आदि तीन असुरों को मारने के लिए वैकुंठरूप धारण किया था। वराह और नृसिंह के रूपों से युक्त इन असुरों का एक ही सम्मिलित शरीर था। ब्रह्मा से उन्हें यह वर प्राप्त था कि उनका वध उन्हीं का रूप धारण करने वाला ही कर सकता है। अतः विष्णु ने सौम्य, वराह, नृसिंह और कपिल आदि के मुखों से युक्त वैकुंठ रूप धारण कर भूभार हलका किया। खजुराहो में वैकुंठ की अनेक प्रतिमाएं हैं जिनमें लक्ष्मण मंदिर की मुख्य मूर्ति विशालतम है। तीन मुखवाली इस प्रतिमा की ऊंचाई चार फुट से कुछ अधिक है। सामने का मुख पुरुष का, दायां नृसिंह का और बायां वराह का है। सिर पर किरीट मुकुट है। मुकुट के अतिरिक्त वे हार, ग्रैवेयक, कौस्तुभमणि, कुंडल, केयूर, यज्ञोपवीत, मुक्ताओं की मेखला, नूपुर आदि से अलंकृत हैं। सिरों के पीछे शिरश्चक्र है जिसमें दशावतार चित्रित हैं। प्रतिमा की चारों भुजाएं खंडित हैं। उनके दाएं-बाएं पार्श्वों में क्रमशः चक्र और शंख पुरुष खड़े हैं। चक्र पुरुष के दाएं पार्श्व में पद्मधारिणी लक्ष्मी और शंख पुरुष के पीछे गरुड़ अंकितहैं। सिंहासन पर नागदेवियों का चित्रण है।

अनंत : भगवान के अनंत रूप की प्रतिमाएं भी वैकुंठ मूर्तियों के समान ही त्रिमुख होती हैं, किंतु इनमें बारह हाथ होते हैं। खजुराहो में विश्वनाथ मंदिर के शिखर की एक उत्तरी रथिका में अनंत त्रिभंग मुद्रा में खड़े हैं। उनका सामने का मुख पुरुष का और दाएं-बाएं मुख सिंह और वराह के हैं। केंद्रीय मस्तक किरीट मुकुट और पार्श्व मस्तक करंड मुकुट के अतिरिक्त देवता सामान्य आभूषणों से सज्जित हैं। उनके हाथों में क्रमशः अक्षमाला, पद्म, खड्ग, पाश, तीन बाण, चक्र, खेटक, धनुष, अंकुश, शंख, सर्प और कमंडलु हैं। उनके पार्श्वों में खड़ी, चामर-धारिणियों के पीछे क्रमशः चक्र और शंख पुरुष दिखाए गए हैं। प्रभामंडल के ऊपरी कोनों पर ब्रह्मा और शिव की छोटी प्रतिमाएं हैं।[19]

विश्वरूप : विष्णु का व्यापक रूप प्रदर्शित करने के लिए उनका अंकन विश्वरूप में किया जाता है। भागवतपुराण[20] से ज्ञात होता है कि वाणी, अग्नि आदि सभी देव उनके मुख से; अमृत, अन्न तथा रस रसनेंद्रिय जिह्वा से, अश्विनीकुमार नासिका से; लोकपाल भुजाओं से; डाढ़ी, मूंछों और नखों से मेघ, बिजली, शिला, लोहा; नाड़ियों से नदी-नद और अस्थियों से पर्वतों का निर्माण हुआ। गीता में भी अर्जुन की प्रार्थना पर कृष्ण ने अपना विश्वरूप प्रकट करते हुए अर्जुन से कहा : 'हे

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भरतवंशी ! आदित्यों, वसुओं, रुद्रों, अश्विनों और मरुतों को देख, पहले न देखे हुए बहुत से आश्चर्यों को देख, और हे अर्जुन ! अब मेरे इस शरीर में एक स्थान पर स्थित चराचर सहित संपूर्ण जगत को देख तथा और भी जो कुछ देखने की इच्छा हो देख ।'[21] खजुराहो की एकमात्र विश्वरूप प्रतिमा लक्ष्मण मंदिर के महामंडप की एक रथिका में प्रतिष्ठित है जिसमें विष्णु त्रिभंग खड़े हैं। उनका केंद्रीय मुख पुरुष का, दायां नृसिंह का और बायां वराह का है । नृसिंह तथा वराह मुखों के पीछे क्रमशः मत्स्य और कूर्म मुख बने हैं। मूर्ति द्वादशभुजी है किंतु उसकी अधिकांश भुजाएं खंडित हैं । देवता वैजयंतीमाला सहित सामान्य आभूषणों से सज्जित हैं। उनके दाएं-बाएं पार्श्वों में गदा और खड्गधारी अनुचर खड़े हैं। मूर्ति के ऊपरी कोने में ब्रह्मा तथा शिव उत्कीर्ण हैं।

लक्ष्मी नारायण : खजुराहो में लक्ष्मी नारायण की मूर्तियां तीन प्रकार की हैं। पहले में विष्णु और लक्ष्मी आलिंगन मुद्रा में खड़े, दूसरे में ललितासन में बैठे हैं जिसमें लक्ष्मी को भगवान की जंघा पर बैठा प्रदर्शित किया गया है और तीसरे में इसी प्रकार लक्ष्मी नारायण को गरुड़ पर आरूढ़ दिखाया गया है। खजुराहो में पहले प्रकार की मूर्तियां सबसे अधिक मिली हैं। पार्श्वनाथ मंदिर की दक्षिणी बाह्य भित्ति की प्रथम पंक्ति में लक्ष्मी नारायण आलिंगन मुद्रा में त्रिभंग खड़े हैं। विष्णु किरीट मुकुट, वैजयंतीमाला आदि तथा लक्ष्मी कुंडल, हार, ग्रैवेयक आदि सामान्य आभूषणों से अलंकृत हैं। चतुर्भुज विष्णु के तीन हाथों में गदा, शंख और चक्र है तथा चौथा हाथ लक्ष्मी को वेष्टित किए है। दूसरे प्रकार[22] की मूर्तियों में ललितासन में बैठे विष्णु की बाईं जंघा पर लक्ष्मी भी इसी मुद्रा में बैठी हैं। दोनों का अलंकरण पहले प्रकार का है। तीसरे प्रकार में लक्ष्मी-नारायण गरुड़ पर आरूढ़ हैं।[23] विष्णु अपना बायां पैर मोड़कर गरुड़ के कंधों पर रखे हैं तथा दायां ललितासन मुद्रा के समान नीचे लटकाए हैं। उनकी मुड़ी हुई बाईं जंघा पर लक्ष्मी विराजमान है। गरुड़ को उड़ता हुआ अंकित किया गया है।

हयग्रीव : यह एक राक्षस था, जिसे हिरण्यकशिपु के समान वर प्राप्त था कि वह मानवों अथवा पशुओं से अवध्य है। अतः उससे मुक्ति पाने के लिए देवताओं ने विष्णु के पास जाकर अश्व-मुख और मानव-शरीर में अवतार लेकर राक्षस के वध करने का निवेदन किया। प्रसन्न होकर उपयुक्त रूप धारण कर विष्णु ने राक्षस का वध किया। खजुराहो में लक्ष्मण मंदिर के अंतर्भाग की उत्तरी रथिका में अश्व-मुख-मानवदेहधारी हयग्रीव पद्मपीठ पर समभंग खड़े हैं। वे करंड-मुकुट, हार, ग्रैवेयक, वनमाला आदि से सज्जित हैं। मस्तक के पीछे शिरश्चक्र है। उनके दाएं-बाएं पार्श्वों में लक्ष्मी और गरुड़ खड़े हैं। इन दोनों के पीछे क्रमशः शंख और चक्र पुरुष त्रिभंग खड़े हैं। मूर्ति के ऊपरी कोनों पर ब्रह्मा तथा शिव विराजमान हैं।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

गजेंद्र मोक्ष : भागवतपुराण में कहा गया है कि एक समय जब गजेंद्र बहुत सी हथिनियों के साथ एक सरोवर में जलक्रीड़ा कर रहा था, तब एक बलवान ग्राह ने उसका पैर पकड़ लिया। गज ने अपने को छुड़ाने का बड़ा यत्न किया, किंतु पराजित हुआ। अत: गज ने अपनी सूंड में कमल पुष्प लेकर भक्तिपूर्वक विष्णु का स्मरण किया। तत्क्षण चक्रधारी विष्णु आकाश में प्रकट हो गए और चक्र से ग्राह का सिर काट कर गजेंद्र की रक्षा की। खजुराहो में गजेंद्र मोक्ष की अनेक प्रतिमाएं उपलब्ध हैं। खजुराहो संग्रहालय (क्र० 1875) में प्रदर्शित प्रतिमा में विष्णु का दायां पैर पादपीठ पर और बायां गजेंद्र के ऊपर स्थित है। एक लंबे सर्प ने गजेंद्र के अगले बाएं पैर तथा शरीर को जकड़ रखा है। अष्टभुज विष्णु अपने एक बाएं हाथ से गजेंद्र की सूंड अपनी ओर खींच रहे हैं। उनके अन्य हाथों में गदा, पद्म, खड्ग, चक्र, खेटक और शंख हैं तथा अन्य एक हाथ खंडित है। मूर्ति के ऊपरी कोनों पर ब्रह्मा तथा शिव विराजमान हैं।

गरुड़ तथा आयुद्ध पुरुष

गरुड़ : खजुराहो में विष्णु के वाहन गरुड़ का अंकन दो प्रकार से किया गया है। पहला प्रकार खजुराहो संग्रहालय (क्र० 282) में प्रदर्शित है जिसमें बाएं पैर को मोड़े और दाएं जानु को पादपीठ पर रखे हैं। वे द्विभुज हैं तथा हार, ग्रैवेयक, कौस्तुभमणि, कुंडल, केयूर, कंकण, यज्ञोपवीत तथा मेखला से अलंकृत हैं। दूसरे प्रकार की मूर्ति खजुराहो संग्रहालय (क्र० 19) में प्रदर्शित है जिसमें गरुड़ अपने कंधों पर लक्ष्मी-नारायण को सुखासन मुद्रा में बैठाकर उड़ते हुए अंकित हैं। उनके केश ऊर्ध्वोन्मुखी हैं और वे विष्णु के समान अलंकारों से अलंकृत हैं।

आयुध पुरुष : विभिन्न देव-देवियों के आयुध और लांछन, यथा, शंख, चक्र, गदा, पद्म आदि भी मानव रूप में उत्कीर्ण किए गए हैं। इन्हें ही आयुध पुरुष कहते हैं। इनका वर्णन इस प्रकार है :

शंख पुरुष : खजुराहो संग्रहालय (क्र० 250) की मूर्ति में शंख पुरुष त्रिभंग खड़े हैं। उनके सिर पर किरीट मुकुट है और वे विष्णु के समान वनमाला धारण किए हैं। उनका दायां हाथ कमर पर है तथा बाएं में वे शंख लिए हैं।

चक्र पुरुष : शंख पुरुष के समान ही चक्र पुरुष का भी अंकन हुआ है। उनके हाथ में शंख के स्थान पर चक्र है।

शिव : हिंदू धर्म के त्रिदेवों में विष्णु के बाद शिव का स्थान है। वैदिककाल में उन्हें रुद्र कहा गया है और मध्यमश्रेणी का देवता माना गया है। अथर्ववेद में रुद्र के सात नाम—ईशान, भव, शर्व, पशुपति, उग्र, रुद्र और महादेव—बताए गए हैं। इसी समय से रुद्र के अनुचर गणों की चर्चा होने लगी, जो आगे चलकर एकादश

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

रुद्र कहलाए। शतपथ तथा कौशीतकि ब्राह्मण में उपर्युक्त सात नामों के साथ अशनि रूप मिलाकर आठ नाम कहे गए हैं। इनमें भव, पशुपति, महादेव और ईशान ये चार कल्याणकारी रूप हैं तथा शर्व, रुद्र, उग्र और अशनि ये चार संहारकर्ता रूप हैं।

आर० जी० भंडारकर का मत है कि वैदिक रुद्र को अनार्यों ने भी अपनाया। इसीलिए वे पशुपति से सर्पधारी तथा श्मशानवासी बन गए। उन्हें चर्म धारण करने वाला (कृत्ति वसानः) भी कहा जाता है। अन्य विद्वानों के अनुसार ऋग्वेद में अनार्य 'शिश्न देवता' की उपासना करते थे। आर्यों ने उसे रुद्र का परिष्कृत रूप प्रदान किया।

उपनिषदों में रुद्र को 'ईश', 'महेश्वर', 'शिव' और 'ईशान' कहा गया है। इस समय वे आर्यों के सबसे प्रगतिशील वर्गों के आराध्यदेव बन चुके थे। गृह्य-सूत्रों में उनके बारह नामों का उल्लेख है—रुद्र, शर्व, उग्र, भव, पशुपति, महादेव, ईशान, हर, मृड, शिव, भीम तथा शंकर। इनमें उनके पालक तथा संहारक दोनों रूपों का समन्वय है। इन्हीं गृह्यसूत्रों में पहली बार रुद्रादि देवों की मूर्ति प्रतिष्ठा और पूजन का उल्लेख मिलता है और शिवलिंग को शिव का प्रतीक माना गया है।

महाकाव्यकाल में रुद्र की उपासना का विस्तृत वर्णन मिलता है। रामायण में उनका भयावह रूप समाप्त होकर उनकी प्रतिष्ठा सौम्य और कल्याणकारी रूप में हुई। महाभारत में शिव को असीम, अचिंत्य, विश्वसृष्टा आदि कहा गया है। इस प्रकार वैदिक 'रुद्र' का उग्र रूप 'शिव' के सौम्य रूप में परिवर्तित हो गया परंतु सर्वथा लुप्त नहीं हुआ। वेदोत्तरकाल में त्रिमूर्ति की कल्पना होने पर 'शिव' को सृष्टि का संहारक बनाया गया।

पुराण ग्रंथों में 'शिव' के अनेक रूपों की कल्पना की गई तथा अपने आराध्य-देव को देवाधिदेव प्रदर्शित करने में विभिन्न प्रतीक रूपों की रचना की गई। इनमें से कुछ प्रतीक इस प्रकार हैं : मानव शरीर के स्थूल, सूक्ष्म तथा कारण तीन भाग माने गए हैं। साधना की अग्नि में तीनों शरीरों का दाह ही 'त्रिपुर दाह' है। शिव का अर्धनारीश्वर रूप नर-नारी की समान महत्ता का द्योतक है। विभिन्न पुराणों में वर्णित एकादश रुद्र तन में विद्यमान दश वायु—प्राण, अपान, व्यान, समान, उदान, नाग, कूर्म, कृकल, देवदत्त तथा धनंजय—एवं आत्मा का समूह है। इनको जानकर आत्मरूप हो जाने वाला साधक ही 'शिवोऽहं' की उद्घोषणा करता है। अभिज्ञान शाकुन्तल में रुद्र के वासस्थल अग्नि, जल, सूर्य, चंद्र, गगन, पवन, धरती एवं यज्ञकर्ता ही संयुक्त रूप से अष्टमूर्ति कहे गए हैं। कालांतर में इन्हीं कथाओं के आधार पर उनकी प्रतिमाओं का निर्माण किया गया।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

शिव की मूर्तियों को मोटे तौर से दो वर्गों में बांटा जा सकता है : लिंगमूर्ति और मानवाकार मूर्ति।

लिंग मूर्तियां : भारत में लिंग पूजा का प्रचार प्रागैतिहासिक युग में था। सिंधु सभ्यता के समय शिव प्रमुख आराध्यदेव थे। मुद्राओं पर उत्कीर्ण उनकी अनेक प्रतिमाएं और लिंग विग्रह प्राप्त हुए हैं। ऋग्वेद में उल्लिखित शिश्न उपासना ही कालांतर में होने वाली लिंग पूजा है। लिंग पूजा के इतिहास में गुड्डीमल्ल (आंध्र प्रदेश) का मुख लिंग कला की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। पांच फीट ऊंचा यह शिवलिंग काले पाषाण से निर्मित है। इसमें पीठिका का अभाव है। लिंग के निम्न भाग में शिव की स्थानक प्रतिमा अप्समार के पीठ पर स्थित है। खजुराहो में लिंग मूर्तियों का अभाव नहीं है। यहां के लालगुआं महादेव, मातंगेश्वर, विश्वनाथ, कंदरिया महादेव आदि मंदिर शिव को समर्पित हैं। इनके गर्भगृह में प्रतिष्ठित कुछ शिवलिंग आकार की दृष्टि से विशाल होते हुए भी सादे हैं।

मानवाकार मूर्तियां : शिव की मानवाकार मूर्तियों को दो भागों में बांटा जा सकता है : (1) सौम्य (अनुग्रह) मूर्तियां और (2) उग्र (संहार) मूर्तियां।

सौम्य प्रतिमाएं

नीलकंठ : जब समुद्रमंथन करते समय हलाहल प्रकट हुआ तब सभी देवों की प्रार्थना तथा पार्वती के अनुमोदन से शिव ने उसका पान कर लिया। किंतु विष उनके कंठ में ही विलीन हो गया, जिससे उनका कंठ नीला पड़ गया। खजुराहो में नीलकंठ की कुछ प्रतिमाएं उपलब्ध हैं। चित्रगुप्त मंदिर की बहिर्भित्ति पर विराजमान शिव के हाथों में विषपात्र, त्रिशूल, खट्वांग और कमंडलु अथवा खप्पर, डमरू, कमल और खट्वांग है। लक्ष्मण मंदिर के दाएं खूंटरा मंदिर में, कंदरिया महादेव की अंत:प्रदक्षिणा में और देवी जगदंबी की बहिर्भित्ति पर भी नीलकंठ की एकल या देवी सहित युगल प्रतिमाएं प्राप्त होती हैं।

उमा महेश्वर : विष्णुधर्मोत्तर पुराण के अनुसार इस रूप में उमा महेश्वर एक साथ प्रदर्शित किए जाते हैं। महेश्वर के जटाजूटयुक्त आठ सिर होते हैं। उनकी दो भुजाएं होती हैं जिनमें से बायां हाथ देवी के स्कंध पर और दायां कमलयुक्त रहता है। देवी का दायां हाथ शिव के स्कंध पर और बायां दर्पणयुक्त होता है। खजुराहो संग्रहालय (क्र० 504) में उमा महेश्वर की मूर्ति में शिव-पार्वती ललितासन में विराजमान हैं। शिव का लटकता हुआ दायां पैर पीठिका पर स्थित है और बायां पैर आसन पर इस प्रकार मुड़ा हुआ है कि उसी पर पार्वती (उमा) आसीन हैं। द्विभुजी शिव के एक हाथ में त्रिशूल है और दूसरा देवी के स्कंध पर रखा है। उमा का दायां हाथ शिव के गले को वेष्टित किए हुए है। इसी के साथ

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मूर्ति में पार्श्व देवताओं का भी अंकन किया गया है।

कल्याणसुंदर : शिव के विवाहोत्व का प्रदर्शन करने वाली मूर्तियों को कल्याण-सुंदर कहा जाता है। इन मूर्तियों में शिव और गौरी-पार्वती विवाह मंडप में खड़े हुए अंकित किए जाते हैं। यहां देवी का स्थान शिव के दाईं ओर होता है क्योंकि विवाह के बाद ही पत्नी वामांगिनी होती है। कंदरिया महादेव मंदिर के मंडप में इस प्रकार की बड़ी सुंदर प्रतिमा उत्कीर्ण है। यहां अग्नि की साक्षी में शिव पार्वती वर-वधू की तरह खड़े हैं। पार्वती के मुख पर वधूसुलभ लज्जा का अंकन इस प्रतिमा की विशेषता है। पार्वती के पिता हिमालय और उनकी माता मैना तथा अन्य इष्टजन उपस्थित हैं।

अर्धनारीश्वर : यह प्रकृति और पुरुष का अभिन्न रूप है जो अर्धनारीश्वर रूप में प्रदर्शित किया गया है। इस रूप में शिव के आधे बाएं शरीर में पार्वती का अंकन होता है। इस प्रकार शरीर का दायां भाग पुरुष का और बायां भाग स्त्री का होता है। उनके दाएं हाथों में अक्षमाला तथा त्रिशूल और बाएं में नीलकमल तथा दर्पण रहता है। उनका आधा मुख शिव की भांति जटा, चंद्रकला तथा कुंडल आदि से तथा शेष स्त्रियोचित मुद्रा तथा अलंकारों से सज्जित रहता है। खजुराहो संग्रहालय में अर्धनारीश्वर की एक प्रतिमा ललितासन मुद्रा में है। उनके शरीर का दायां भाग जटाजूट, अर्धचंद्र, कुंडल, त्रिशूल, यज्ञोपवीत आदि से तथा बायां भाग सुंदर केशविन्यास से मृदुतापूर्ण आकृति में अलंकरणों से सुशोभित है।

हरिहर : शिव का यह रूप वैष्णव और शैव धर्मों के समन्वय का प्रतीक है। वैष्णव पुराणों में स्थान स्थान पर विष्णु तथा शिव की एकता पर बल दिया गया है। विष्णुधर्मोत्तरपुराण[24] में कहा गया है कि हरिहर प्रतिमाओं के दाएं भाग में सदाशिव तथा बाएं भाग में हरि का अंकन होना चाहिए। शिव के हाथों में त्रिशूल और डमरू तथा हरि के हाथों में चक्र और कमल प्रदर्शित करना चाहिए। प्रतिमा की बाईं ओर शिव का वाहन वृषभ और दाईं ओर हरि का वाहन गरुड़ अंकित हो। खजुराहो संग्रहालय (क्र० 558) की हरिहर प्रतिमा में देवता खड़े हैं। उनकी चार में से दो भुजाएं खंडित हैं तथा दो में त्रिशूल और चक्र हैं। शरीर का दायां भाग जटाजूट, कुंडल, कंकण तथा सर्पाभूषण से और बायां भाग किरीट मुकुट, कुंडल, पीतांबर आदि से सज्जित है। हरिहर के दोनों ओर अनेक देव तथा देवियों का अंकन है।

नृत्य मूर्ति : शास्त्रों में शिव नृत्य कला के प्रथम आचार्य कहे गए हैं। भरतनाट्य-शास्त्र में एक सौ आठ प्रकार के नृत्य वर्णित हैं। दक्षिण भारत के चिदंबरम स्थित नटराज मंदिर के गोपुरम में सभी एक सौ आठ प्रकार के नृत्यों का एक साथ अंकन किया गया है। खजुराहो में शिव की चार, आठ और बारहभुजी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

नटराज प्रतिमाएं मिली हैं। नटराज की चतुर्भुजी प्रतिमा के तीन हाथों में क्रमशः त्रिशूल, डमरू और खप्पर (कपाल) है। उनका चौथा हाथ खंडित है। उनकी एक अन्य प्रतिमा में पहला हाथ खंडित है और चौथा कटि पर अवलंबित है। शेष हाथों में आयुध है। उनकी मूंछें बड़ी हैं तथा वे खप्पर की ओर देख रहे हैं।

खजुराहो संग्रहालय में नटराज की दो प्रतिमाएं हैं। इनमें से एक को वरदमुद्रा, त्रिशूल, खड्ग, डमरू, खेटक, खट्वांग तथा खप्पर युक्त प्रदर्शित किया गया है। मूर्ति का एक हाथ खंडित है। बारहभुजी नटराज की एकमात्र प्रतिमा दूलादेव मंदिर की दाईं बहिर्भित्ति पर प्रदर्शित है। मूर्ति के सभी हाथ खंडित हैं। देवता का बायां पैर नृत्यमुद्रा में ऊपर उठकर दाईं ओर मुड़ा है। उनका वाहन नंदी देव की ओर देख रहा है।

सदाशिव : शिव की सौम्य प्रतिमाओं में सदाशिव रूप भी सम्मिलित है। इस प्रकार की एक प्रतिमा खजुराहो संग्रहालय (क्र० 1098) में प्रदर्शित है। देव चार पैर तथा छः सिर वाले हैं। उनके सिर के ऊपर शिवलिंग अंकित है। उनके दो पैरों के नीचे ब्रह्मा आसीन हैं। यह शिव प्रतिमा मूर्तिविज्ञान की एक विशिष्ट देन है।

उग्र प्रतिमाएं

खजुराहो में शिव को उग्र या घोर मुद्रा में राक्षसों का विनाश करते हुए विकराल रूप में प्रदर्शित किया गया है। इसमें उन्हें गोल नेत्र, लंबी व कड़ी मूंछें, बाहर निकले दांतों, विकराल मुख, विनाशक आयुध तथा मंडपमालायुक्त अंकित किया गया है।

गजासुरसंहार : कूर्मपुराण से ज्ञात होता है कि एक राक्षस ने गज का रूप धारण कर ब्राह्मणों को पीड़ा पहुंचाना प्रारंभ कर दिया। भक्तों का कष्ट दूर करने के लिए शिव ने गजासुर का वध किया। यही कथा वराहपुराण में भी मिलती है। खजुराहो में छः भुजी से लेकर षोडशभुजी गजासुरसंहार मूर्तियां प्राप्त होती हैं। दश और षोडशभुजी प्रतिमाओं[25] के अधिकांश हाथ खंडित हो गए हैं। इनमें से दो हाथ ही दृष्टव्य हैं, जिनसे देवता ने सिर के ऊपर गजचर्म पकड़ रखा है। खजुराहो-संग्रहायल में प्रदर्शित एक बारहभुजी प्रतिमा के छः हाथ सुरक्षित हैं। इसमें देवता त्रिशूल, वज्र, डमरू लिए हैं। दो हाथों से वे गजचर्म पकड़े हैं तथा शेष एक हाथ स्थित त्रिशूल से राक्षस के पेट में घातक प्रहार कर रहे हैं। उनका बड़ी बड़ी आंखों वाला विकराल मुख, बड़ी मूंछें और बाहर निकले दांत देवता का रौद्ररूप प्रदर्शित करते हैं।

भैरव : यह शिव का अत्यंत भयानक रूप है। इस रूप में वे भूत-प्रेतों के निवास-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

स्थान, श्मशान भूमि में निवास करते हैं। विक्षिप्तों की तरह उनके सिर के बाल बिखरे रहते हैं और वे नग्न घूमा करते हैं।[26] विष्णुधर्मोत्तरपुराण के अनुसार उनके शरीर का वर्ण मेघों के समान होता है। वे गजचर्म का उत्तरीय धारण करते हैं। सभी भुजाएं आयुधों तथा आभूषणों से सज्जित होती हैं। उनके नख तीक्ष्ण, लंबे और स्वच्छ होते हैं। उनका वाहन कुत्ता समीप ही स्थित रहता है। खजुराहो में भैरव को या तो उनके वाहन के साथ या फिर नग्न प्रदर्शित किया गया है। नग्न प्रतिमाओं में वे प्याला, डमरू, घंटी, नरमुंड अथवा तलवार, कमल, सर्प, खट्वांग और नरमुंड लिए हुए अंकित किए गए हैं। वाहन सहित चतुर्भुज भैरव के हाथ गदा, डमरू, घंटी तथा श्वान की रस्सी से युक्त हैं। वाहनरहित प्रतिमाओं में देवता के हाथों में खप्पर, कमल, सर्प और गदा आयुध रहते हैं।

चतुर्भुज भैरव को श्वान पर आरूढ़ भी प्रदर्शित किया गया है। इस आसन में वे अपने निचले दो हाथों से श्वान का मुख और पूंछ पकड़े हैं तथा ऊपरी दोनों हाथ सिहकर्ण-मुद्रा में हैं।

त्रिपुरांतक : महाभारत से ज्ञात होता है कि तारकासुर के तीन पुत्रों ने ब्रह्मा की भक्तिपूर्वक उग्र तपस्या की। ब्रह्मा ने प्रसन्न होकर उनसे वर मांगने को कहा। तब असुर पुत्रों ने उनसे तीन ऐसे अजेय पुर प्राप्त किए, जिनको नष्ट करनेवाला विश्व में एक ही बाण हो और दूसरी कोई शक्ति या आयुध उन पुरों का विनाश करने में समर्थ न हो सके। मय दानव ने इन असुर पुत्रों के लिए स्वर्ण, रजत और लौह के तीन दुर्गों का निर्माण किया। इन दुर्गों में रहते हुए असुरपुत्र अत्यंत बलवान होकर देवों को कष्ट देने लगे। जब देवों ने शिव से दुर्गों को नष्ट करने की प्रार्थना की तब उन्होंने देवों से अपनी अपनी आधी शक्ति देने को कहा। सभी देवताओं ने उनकी यह बात स्वीकार कर ली। भागवतपुराण से प्रकट होता है कि कृष्ण ने अपनी शक्तियों के द्वारा उनके लिए युद्धसामग्री तैयार कर दी। धर्म से रथ, ज्ञान से सारथी, वैराग्य से ध्वजा, ऐश्वर्य से अश्व, तपस्या से धनुष, विद्या से कवच, क्रिया से बाण आदि वस्तुएं तैयार हुईं। इस सामग्री से युक्त होने पर शंकर ने त्रिपुर को नष्ट कर दिया। खजुराहो के पार्श्वनाथ मंदिर की पिछली बहिर्भित्ति पर आलिंगन मुद्रा में त्रिपुरांतक की मूर्ति है। सामान्य खजुराहो आभूषणों से सज्जित देवता के हाथों में घट और तीन फलकों वाला बाण है जिसके अग्रभाग पर नर कपाल फंसा हुआ है। कपाल पर एक पक्षी बैठा है। तीसरे हाथ में धनुष है। चौथा हाथ देवी के स्तन का स्पर्श कर रहा है। देवी के हाथों में कमलनाल है।

अंधकासुरवध : अंधकासुर को नष्ट करने के कारण शिव प्रतिमा को यह नाम दिया गया। खजुराहो संग्रहालय (क्र० 522) में अंधकासुरवध की मूर्ति में शिव

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

को रौद्र रूप में प्रदर्शित किया गया है। वे त्रिशूल से प्रहार करते हुए अंकित हैं। त्रिशूल की नोंक में अंधकासुर का शरीर धंसा है।

देवी

आराध्य देवताओं की पूरक शक्ति के रूप में देवियों की पूजा गृह्यसूत्रकाल से प्रारंभ हो गई थी। यद्यपि इस समय किसी शक्ति संपन्न स्वतंत्र देवी के अस्तित्व का ज्ञान नहीं होता तथापि महाभारत में अर्जुन को दुर्गा की स्तुति करते हुए बताया गया है। निस्संदेह इस स्तुति रचना के पूर्व ही दुर्गा शक्तिसंपन्न देवी के रूप में प्रतिष्ठित हो चुकी थी और लोग अपनी इच्छाओं की पूर्ति के लिए कुमारी, काली, कपाली, महाकाली, चंडी, कात्यायनी, कराला, विजया, कौशिकी, उमा, कांतारवासिनी आदि नामों से उनकी आराधना करने लगे थे। महाभारत के विराटपर्व में युधिष्ठिर इस देवी की प्रार्थना करते हुए कहते हैं कि वे महिषासुर-मर्दिनी हैं तथा सुरा, मांस एवं पशुओं में अनुरक्त हैं। उन्होंने यशोदा के गर्भ से जन्म लिया था और जब कंस ने उन्हें पत्थर पर पटका तब वे स्वर्ग चली गई थीं। वे विंध्याचल पर स्थाई रूप से निवास करती हैं। यही आदि शक्ति समय के अंतराल से विभिन्न शांत और विकराल रूपों में पूजी जाने लगी। इनका वर्णन इस प्रकार है :

लक्ष्मी : लक्ष्मी जगज्जननी हैं। वे विष्णु की आत्मा और उनकी शक्ति हैं। दोनों परस्पर एक हैं। लक्ष्मी के बिना विष्णु निर्जीव हैं और विष्णु के बिना लक्ष्मी निष्प्राण हैं। वैष्णवधर्म के प्रसार के साथ ही लक्ष्मी की लोकप्रियता बढ़ती गई। खजुराहो में लक्ष्मी का अंकन विष्णु के समान शंख, चक्र, गदा और पद्म धारण किए हुए किया गया है। वामन मंदिर के गर्भगृह द्वार पर अंकित लक्ष्मी का पहला हाथ वरदमुद्रा में है। उनके शेष हाथों में कमल, चक्र और घट हैं। लक्ष्मण मंदिर की अंत:प्रदक्षिणा में दाईं ओर[27] यह देवी पद्मपीठ पर विराजमान है। उनके ऊपरी दोनों हाथों में एक एक कमल है। उनका निचला एक हाथ वरदमुद्रा में है तथा शेष एक हाथ में घट है। देवी के दोनों पार्श्वों में अंकित हाथी जल से उनका अभिषेक कर रहा है। इसी प्रकार की एक प्रतिमा खजुराहो संग्रहालय में भी है। उसमें भी देवी पद्म पर खड़ी अंकित की गई है।

विश्वनाथ मंदिर के बाईं ओर के एक खूंटरा मंदिर में एक सिंहवाहिनी गजलक्ष्मी की प्रतिमा है। देवी ललितासन में विराजमान है। उनका पहला हाथ अक्षमाला लिए हुए अभयमुद्रा में है तथा चौथे हाथ में अमृतघट है। शेष ऊपरी दोनों हाथों में कमल हैं। प्रतिमा के ऊपरी भाग पर दोनों ओर एक एक हाथी देवी का अभिषेक करते हुए अंकित हैं। पादपीठ पर उनका वाहन सिंह बैठा है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बी० सी० भट्टाचार्य का कथन है कि लक्ष्मी का वाहन सिंह भी हो सकता है, किंतु अभी तक उसकी एक भी प्रतिमा उपलब्ध नहीं हुई। खजुराहो से प्राप्त लक्ष्मी प्रतिमाओं के संबंध में भट्टाचार्य का कथन सत्य प्रतीत नहीं होता।

सरस्वती : विद्या और संगीत की अधिष्ठात्री देवी सरस्वती की गणना अद्यतन प्रमुख देवियों के अंतर्गत होती है। हिंदू, बौद्ध और जैनधर्म में समानरूप से इस देवी की आराधना की जाती है किंतु सरस्वती को जो विशिष्टता पौराणिक हिंदूधर्म में प्राप्त है, अन्य धर्मों में उसका अभाव है। सामान्यतः उन्हें वीणावादन करते हुए ललितासन मुद्रा में उत्कीर्ण किया गया है। देवी के विभिन्न हाथों में मुख्यतः वीणा, पुस्तक और कमल आदि होते हैं। देवी का वाहन हंस भी पैरों के समीप स्थित रहता है। कंदरिया महादेव मंदिर के अधिष्ठान पर सरस्वती की एक प्रतिमा उत्कीर्ण है, जिसके पहले और चौथे हाथ में वीणा और दूसरे तथा तीसरे हाथ में क्रमशः पुस्तक और कमल हैं।

दुर्गा : दुर्गा की उपासना अनेक रूपों में प्रचलित रही है। उन्हें संध्या, सरस्वती, चंडिका, गौरी, महालक्ष्मी, ललिता आदि अनेक नाम प्रदान किए गए हैं। दुर्गमन दैत्य का वध करने के कारण वे दुर्गा कहलाती हैं। खजुराहो के विश्वनाथ मंदिर की अंतःप्रदक्षिणा में दाईं ओर तथा लक्ष्मण मंदिर के बाएं खूंटरा मंदिर में उनकी एक एक प्रतिमा है। उनके वाहन के रूप में सिंह और मृग अंकित किए गए हैं। पहली मूर्ति के ऊपरी दोनों हाथों में पाश हैं तथा निचला पहला हाथ वरदमुद्रा में और चौथा खंडित है। दूसरी प्रतिमा के ऊपरी दोनों हाथ कमल से तथा निचला पहला हाथ वरदमुद्रा और चौथा घट से युक्त है। इन दोनों प्रतिमाओं का अभिज्ञान दुर्गा से किया गया है।[28]

लक्ष्मण मंदिर के दाएं खूंटरा मंदिर में सिंहवाहिनी देवी अंकित है जिसका पहला हाथ वरदमुद्रा में तथा शेष हाथ त्रिशूल, पुस्तक और घट युक्त हैं। इस देवी की पहचान भी दुर्गा से की गई है।

महिषासुरमर्दिनी : यह दुर्गा का ही रूप है जिसमें वे महिषासुर का वध करती हुई प्रदर्शित की जाती हैं। वे सिंह पर सवारी करती हैं तथा उनके अनेक हाथों में शूल, खड्ग, शंख, चक्र, वाण, शक्ति, वज्र, डमरू, नागपाश, खेटक, परशु, अंकुश, धनुष, घंटा, ध्वज, गदा, दर्पण तथा मुद्गर आदि रहते हैं। असुर का शरीर भूलुंठित तथा सद्यखंडित गर्दन से बहता हुआ रक्त प्रदर्शित किया जाता है। खजुराहो के लक्ष्मण मंदिर के उत्तर-पूर्व की भित्ति पर महिषमर्दिनी देवी की एक प्रतिमा है। देवी के समीप महिष कटा हुआ पड़ा है। देवी की मुखमुद्रा आक्रोशपूर्ण है। देवी के समीप उनका वाहन सिंह है, जिसकी पीठ पर देवी का एक चरण रखा हुआ है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पार्वती : जब विष्णु रौद्ररूप धारण करते हैं, तब लक्ष्मी गौरी एवं पार्वती बनकर शिव के साथ निवास करती हैं। विष्णुपुराण में लक्ष्मी को गौरी तथा विष्णु को शंकर भी माना गया है। खजुराहो के देवी जगदंबी मंदिर में पांच फुट ऊंची पार्वती की एक चतुर्भुज प्रतिमा है। मूर्ति अत्यंत सुंदर है। गांगुली[29] ने इस प्रतिमा को लक्ष्मी तथा अन्य विद्वानों[30] ने मकरवाहिनी गंगा बताया है। अन्य पार्वती प्रतिमाओं से इसकी तुलना करने पर यह भ्रम दूर हो जाता है और यह निर्विवाद रूप से पार्वती प्रतिमा ही प्रमाणित होती है। एक अन्य मनोरम प्रतिमा खजुराहो संग्रहालय (क्र० 984) में प्रदर्शित है। इसमें देवी अभंग खड़ी है। उनके पार्श्वों में चामरधारी, भक्त, भैरव तथा प्रतिहार खड़े हैं। प्रभावली में देवी के विविध स्वरूपों तथा देवियों सहित ब्रह्मा और विष्णु का अंकन है। पादपीठ पर देवी का वाहन गोधिका उत्कीर्ण है।

सप्तमातृकाएं

जिस समय भगवान शिव अंधकासुर से युद्ध कर रहे थे, उस समय अंधकासुर के शरीर से गिरने वाले प्रत्येक रक्तबिंदु से नवीन बीजराक्षस उत्पन्न हो जाता था। उस समय युद्धरत शिव की सहायता के लिए जब उनकी शक्ति माहेश्वरी युद्ध में अवतरित हुई तब ब्रह्मा, विष्णु, कुमार, वराह, इंद्र और यम ने भी अपनी शक्तियां युद्ध में उतारीं। ये सभी शक्तियां अपने देवों के नाम पर ब्राह्मी, वैष्णवी, माहेश्वरी, कौमारी, वराही, इंद्राणी और चामुंडा नाम से विख्यात हुईं। वे अपने अपने देवों के आयुध तथा वाहन के साथ उत्कीर्ण की जाती हैं। मातृदेवियों का प्राचीनतम उल्लेख विश्वकर्मा के गंगधार प्रस्तर अभिलेख में मिलता है। अभिलेख में कहा गया है कि विश्वकर्मा के अमात्य मयूराक्षक ने एक अति भयानक निवासगृह बनवाया जिसमें मातृदेवियों की प्रतिष्ठा कराई।[31] अभिलेख में मातृदेवियों की संख्या का उल्लेख नहीं है, किंतु प्रारंभिक चालुक्य शासकों के अभिलेखों में इनकी संख्या सात बताई गई है।[32] कलाकारों ने उनकी संयुक्त तथा एकल प्रतिमाओं का निर्माण किया है। संयुक्त प्रतिमाओं में सप्तमातृकाओं के दोनों पार्श्वों में क्रमशः वीरभद्र और गणेश की प्रतिमाओं का भी निर्माण किया है। इनका वर्णन इस प्रकार है :

ब्राह्मी : ब्राह्मी ब्रह्मा की शक्ति है अतः उसका रूप ब्रह्मा के समान है। विष्णु-धर्मोत्तरपुराण के अनुसार ये चतुर्मुख तथा छः भुजाओंवाली हैं। उनके दाएं हाथ स्रुवा, सूत्र तथा बाएं हाथ पुस्तक तथा कुंठीयुक्त होते हैं। शेष भुजाएं अभय मुद्रा में रहती हैं। सामान्य आभूषणों से युक्त वे मृग का उत्तरीय धारण करती हैं और हंस पर आरूढ़ होती हैं। खजुराहो में ब्राह्मी की कुछ प्रतिमाएं मिली हैं। इनमें से

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

एक मूर्ति देवी जगदंबी के गर्भगृह में है जिसमें देवी का पहला हाथ वरदमुद्रा में है तथा अन्य तीन हाथों में क्रमशः स्रुवा, पुस्तक और घट है। समीप ही उनका वाहन हंस अंकित है। कंदरिया महादेव मंदिर[33] तथा खजुराहो संग्रहालय में इस देवी की एक चतुर्मुखी प्रतिमा है। उसका पहला हाथ खंडित है तथा शेष हाथों में क्रमशः स्रुवा, कमल और पुस्तक है।

वैष्णवी : विष्णु की शक्ति वैष्णवी के नाम से विख्यात हुई। विष्णुधर्मोत्तरपुराण के अनुसार छः भुजी, श्यामवर्णा यह देवी गरुड़ पर आरूढ़ होती है। उसके दाएं हाथ में क्रमशः गदा, पद्म है और ये हाथ अभयमुद्रा में हैं तथा बाएं हाथ में क्रमशः शंख, चक्र है तथा ये हाथ वरदमुद्रा में हैं। देवीपुराण के अनुसार उनके दो हाथ अभय और वरदमुद्रा में रहते हैं तथा शेष चार हाथों में शंख, चक्र, गदा और पद्म होते हैं। आदिनाथ मंदिर की बाईं बहिर्भित्ति तथा देवी जगदंबी मंदिर की दाईं बहिर्भित्ति में इस देवी की गरुड़ासीन प्रतिमाएं अंकित हैं। उसका एक हाथ अभय या वरदमुद्रा में है तथा शेष में शंख, चक्र तथा गदा हैं।

माहेश्वरी : शिव की शक्ति का नाम माहेश्वरी है। विष्णुधर्मोत्तरपुराण[34] के अनुसार वे पांच मुख तथा नेत्रोंवाली हैं। उनका वाहन वृष है तथा वे जटाजूट धारण करती हैं। उनकी दाईं तीन भुजाओं में से दो में सूत्र तथा डमरू रहता है तथा तीसरा वरदमुद्रा में प्रदर्शित होता है। बाएं हाथ में शूल घंटा है और यह अभय-मुद्रा में रहता है। कंदरिया महादेव मंदिर की बाईं बहिर्भित्त में एक चतुर्भुज देवी उत्कीर्ण है। उसका पहला हाथ अभयमुद्रा में है, तीसरे हाथ में सर्प है तथा शेष हाथ खंडित हैं। समीप ही वृषभ अंकित है।

कौमारी : कार्तिकेय की शक्ति का नाम कौमारी है। उनके तीन नेत्र तथा चार भुजाएं हैं जिनमें से दो में शक्ति तथा कुक्कुट होते हैं तथा शेष दो वरद और अभय-मुद्रा में रहती हैं। उनका वाहन मयूर है। कंदरिया महादेव और देवी जगदंबी मंदिरों की बाईं बहिर्भित्तियों पर त्रिमुखी कौमारी का अंकन है। उसके तीन कमंडलु, शक्ति आर पाश हैं तथा चौथा खंडित है। समीप ही उनका वाहन अंकित है।

वराही : विष्णु के वराह अवतार की देवी को वराही कहा गया है। वे कृष्णवर्णा तथा विशाल उदरवाली हैं। उनका सिर वराह सदृश तथा शेष भाग स्त्री का होता है। उनके दो दाएं हाथ दंड और खड्गयुक्त तथा तीसरा वरदमुद्रा में रहता है। इसी प्रकार बाएं हाथों में खेट तथा पाश और शेष एक अभयमुद्रा में प्रदर्शित किया जाता है।[35] यहां के संग्रहालय में वराही की एक चतुर्भुज प्रतिमा है जिसके तीन हाथ खंडित हैं तथा शेष एक में पात्र है। पादपीठ पर उनका वाहन महिष आसीन है।

इंद्राणी : इंद्र की शक्ति का नाम इंद्राणी है। वह स्वर्ण के समान आभावाली

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

गजारूढ़ तथा हजार नेत्रोंवाली है। उसके दाएं हाथ में सूत्र और वज्र तथा बाएं हाथ में कलशपात्र रहता है। शेष हाथ अभय तथा वरदमुद्रा में रहते हैं।[36] पादपीठ पर उनका वाहन ऐरावत हाथी अंकित रहता है।

चामुंडा : यम की शक्ति का नाम चामुंडा है। यह रक्तवर्णा तथा भयानक मुख वाली है। गले में मुंडमाल तथा हाथों में कपाल, शूल और नरमुंड धारण करती है। उसका कृशकाय शरीर तथा संकुचित उदर उसकी कुरूपता में वृद्धि करता है। वह प्रेतासन पर आरूढ़ होती है। दूलादेव मंदिर के गर्भगृह द्वार पर एक छः भुजी चामुंडा उत्कीर्ण है। उसके हाथों में डमरू, त्रिशूल, अंकुश, खप्पर और नरमुंड हैं। छठा हाथ खंडित है। इस मूर्ति का अभिज्ञान चामुंडा के एक रूप कंकाली से किया जाता है। चामुंडा की तरह बारहभुजी रौद्ररूप प्रदर्शित करनेवाली प्रतिमा को सिद्ध योगेश्वरी कहा जाता है। उसके एक हाथ में मृत व्यक्ति का नग्न शरीर रहता है। इस प्रकार की एक प्रतिमा खजुराहो संग्रहालय में है।

सूर्य : हिंदुओं के पंच परमेश्वर—विष्णु, सूर्य, महेश, गणेश और देवी—में सूर्य भी एक परमेश्वर है जिसके संप्रदाय को सौर संप्रदाय कहा जाता है। सूर्य एक वैदिक देवता है। उपासना के क्षेत्र में विष्णु के बाद सूर्य का दूसरा स्थान है। वराहपुराण से ज्ञात होता है कि साम्ब को कृष्ण के शाप से हुआ कोढ़ सूर्योपासना से ठीक हो गया था। अतः साम्ब ने उदयगिरि, मथुरा तथा साम्बपुर में तीन मंदिरों की स्थापना कराई जिनमें स्थापित सूर्य प्रतिमाएं प्रातः, मध्याह्न तथा सायंकालीन सूर्य की हैं।[37] पुरातात्विक प्रमाणों से ज्ञात होता है कि मध्यप्रदेश में अनेक सूर्य मंदिर निर्मित हुए। कुमारगुप्त प्रथम और बंधुवर्मा के मंदसौर शिलालेख[38] में दशपुर (जि० मंदसौर, म० प्र०) में जुलाहों की एक श्रेणी द्वारा एक सूर्य मंदिर के निर्माण का उल्लेख है। पूर्व मध्ययुग में भी टीकमगढ़ के मढ़खेरा और उमरी में गुर्जर-प्रतिहारों ने तथा खजुराहो में चंदेलों ने सूर्य मंदिरों का निर्माण कराया।

खजुराहो में उपलब्ध विभिन्न प्रकार की सूर्य प्रतिमाएं प्रायः वक्ष में वर्म, पैरों में उपानह आदि धारण किए हैं। सामान्य प्रतिमाएं द्विभुजी हैं, जिनमें पूर्ण विकसित कमल हैं। धातृ सूर्य और सूर्य नारायण की प्रतिमाएं चतुर्भुजी तथा हरि-हर-हिरण्यगर्भ की अष्टभुजी हैं। इन सबकी ऊपरी दो भुजाओं में कमल रहते हैं। सूर्य प्रतिमाओं के परिकर में उनकी चार रानियों--राज्ञी, निक्षुभा, छाया और सुवर्चसा—में से दो—राज्ञी और निक्षुभा—का अंकन देवता के दोनों पार्श्वों में चामरधारिणी के रूप में किया गया है। इनके अतिरिक्त धनुर्धारिणी उषा-प्रत्युषा भी आलीढ़ या प्रत्यालीढ़ मुद्रा में उत्कीर्ण की गई हैं। प्रायः सभी सूर्य मूर्तियों के चरणों के सामने एक बैठी या खड़ी देवी की छोटी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रतिमा का अंकन मिलता है जिसका अभिज्ञान विद्वानों ने सूर्य की एक पत्नी भूदेवी महाश्वेता से किया है।[39]

खजुराहो की मूर्तियों में सूर्य के पूर्ण रथ के स्थान पर रथ के अश्व और अर्धकाय सारथी अरुण मात्र प्रदर्शित हैं। पंक्तिबद्ध ये सभी अश्व हवा में उड़ते प्रतीत होते हैं। केंद्रीय अश्व पर सारथी अरुण विराजमान रहता है। उसके बाएं हाथ में अश्वों की रश्मियां तथा कशायुक्त दायां हाथ अश्वों का संचालन करते दिखाया जाता है।

विशेष प्रतिमाएं

चित्रगुप्त मंदिर की प्रधान मूर्ति सूर्य की एक स्थानक प्रतिमा है। खजुराहो की यह विशालतम सूर्य प्रतिमा है जिसमें सूर्य समभंग खड़े हैं। पद्मयुक्त उनके हाथ खंडित हैं। उनके मस्तक के पीछे प्रभामंडल है और वे किरीट मुकुट, कुंडल, हार, ग्रैवेयक, यज्ञोपवीत, कौस्तुभमणि, वनमाला तथा मेखला धारण किए हैं। उनके वक्ष में कवच तथा पैरों मे उपानह हैं। दाएं और बाएं पार्श्व में उनके अनुचर दंड और पिंगल हैं तथा उनके पीछे एक अश्वमुख देवता अश्विन खड़े हैं। अश्विन के पीछे सूर्य की दो पत्नियां—निक्षुभा और राज्ञी—करंड मुकुट पहने खड़ी हैं। पिंगल के दाईं ओर अश्विन देवता के सामने एक लघु पुरुष प्रतिमा है। इसी प्रकार दूसरी प्रतिमा दंड के बाईं ओर है। इनके अतिरिक्त रानी निक्षुभा और राज्ञी के नीचे भी एक एक लघु प्रतिमा है। संभवतः ये सूर्यपुत्र यम, रेवंत और दो मनु हैं। पादपीठ के नीचे सूर्य रथ के सप्त अश्व पंक्तिबद्ध उत्कीर्ण हैं। बीच के अश्व पर आरूढ़ अर्धकाय सारथी अरुण दाएं हाथ में अश्वों की रश्मियां धारण किए हैं तथा बाएं हाथ से उनका संचालन करते अंकित हैं। अरुण और सूर्य के बीच, सूर्य के चरणों के निकट खड़ी भूदेवी महाश्वेता उत्कीर्ण हैं। प्रभामंडल के ऊपर बीच में जटामुकुटधारी शिव योग मुद्रा में आसीन हैं तथा दोनों ओर आठ आठ नारियां आलीढ़ और प्रत्यालीढ़ मुद्राओं में अंकित हैं। इनमें उषा और प्रत्युषा भी हो सकती हैं।

सूर्य की दूसरे प्रकार की मूर्तियों में पार्श्वचरों की संख्या अत्यंत सीमित है। इस प्रकार की एक प्रतिमा लक्ष्मण मंदिर के दक्षिणी-पश्चिमी खूंटरा मंदिर की जंघा की रथिका में उपलब्ध है। यहां सूर्य समभंग खड़े हैं। उनके दोनों हाथों में कमल है। वे उपानह और कवच के अतिरिक्त किरीट मुकुट, हार, ग्रैवेयक, कुंडल, अंगद, वनमाला, यज्ञोपवीत और मेखला धारण किए हैं। उनके चरणों के सामने भूदेवी महाश्वेता पद्मासन लगाए हुए विराजमान दिखाई गई है। उपरिवर्णित प्रतिमा के विपरीत यहां पर उनके अनुचर दंड दाएं पार्श्व में और

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पिंगल बाएं पार्श्व में अंकित किए गए हैं।

सूर्य की आसन प्रतिमाओं में सर्वाधिक उल्लेखनीय प्रतिमा चतुर्भुज मंदिर की पूर्वी भद्र रथिका में पद्मासन में विराजमान है। उनका मस्तक तथा भुजाएं खंडित हैं। वे केयूर, यज्ञोपवीत एवं कटिसूत्र पहने हैं। पादपीठ के नीचे सप्त अश्व अंकित हैं। सूर्य के बाईं और दाईं ओर एक एक अश्वमुख अश्विन खड़े हैं। उनके पीछे दंड और पिंगल क्रमशः त्रिभंग और द्विभंग खड़े हैं। ऊपर प्रभावली के एक कोने पर पद्मासन सूर्य की एक छोटी आकृति है। संभव है दूसरे कोने पर भी इसी प्रकार की एक मूर्ति रही हो जो अब खंडित हो गई है। सूर्य के शेष परिकर का अभाव है।

धातृ सूर्य : धातृ एक आदित्य है, किंतु धाता या विधाता ब्रह्मा का भी एक नाम है। अतः इस प्रकार की प्रतिमाओं में इन दोनों रूपों का समन्वय मिलता है। खजुराहो में धातृ सूर्य की चार प्रतिमाएं चित्रगुप्त मंदिर के गर्भद्वार उत्तरंग में अंकित हैं। इनमें से तीन मूर्तियां समरूप हैं और रथिकाओं में प्रदर्शित हैं। सूर्य प्रतिमाओं के विपरीत ये सभी मूर्तियां चतुर्भुजी हैं जो इनकी निजी विशेषता है। देवता किरीट मुकुट, वनमाला तथा अन्य सामान्य आभूषणों के अतिरिक्त वक्ष में कवच तथा पैरों में उपानह पहने हैं। उनके ऊपरी दोनों हाथों में सनाल कमल तथा नीचे का दायां हाथ वरदमुद्रा में तथा बायां हाथ कमंडलुधारी है। उनके पार्श्व में चामरधारिणी दो देवियां खड़ी हैं। भूदेवी का चित्रण परंपरागत है। शेष परिकर का अभाव है।

सूर्य नारायण : सूर्य विष्णु के एक स्वरूप भी माने गए हैं। इन दोनों देवताओं की समन्वित मूर्तियों को ही सूर्य नारायण का नाम दिया गया है। खजुराहो में इनकी स्थानक और आसन दोनों प्रकार की मूर्तियां मिलती हैं। स्थानक मूर्तियों[40] में चतुर्भुज देवता करंड मुकुट पहने त्रिभंग खड़े हैं। उनके ऊपरी दोनों हाथों में कमल हैं और शेष में क्रमशः चक्र और शंख हैं। आसन प्रतिमाओं[41] में चतुर्भुज सूर्य नारायण पद्मपीठ पर ध्यान-मुद्रा में विराजमान हैं। उनके ऊपरी दो हाथों में सनाल कमल हैं और निचले हाथ योग मुद्रा में प्रदर्शित हैं। वे किरीट मुकुट के अतिरिक्त सामान्य आभूषणों से अलंकृत हैं।

हरि-हर-हिरण्यगर्भ : सूर्य नारायण प्रतिमाओं के अतिरिक्त खजुराहो में ब्रह्मा, विष्णु और शिव की विशेषताओं से युक्त स्थानक और आसन प्रतिमाएं भी मिलती हैं। स्थानक मूर्तियों में से एक लक्ष्मण मंदिर के दक्षिण-पूर्वी खूंटरा मंदिर में एक पद्मपीठ पर समभंग खड़ी है। इस त्रिमुखी तथा अष्टभुजी प्रतिमा का मध्य का मस्तक किरीट मुकुट, कर्ण कुंडल पहने है। इनके अतिरिक्त यह प्रतिमा हार, ग्रैवेयक, कंकण, मेखला, वनमाला, यज्ञोपवीत और कौस्तुभमणि से अलंकृत

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

है। वह एक कटि वस्त्र, कवच और पैरों में उपानह धारण किए है। दो दाएं-बाएं हाथों में कमल है। शेष दाईं ओर का एक हाथ वरद मुद्रा में, दूसरा अक्ष-माला युक्त है तथा तीसरा खंडित है। बाईं ओर के शेष हाथों में सर्प, शंख और कमंडलु हैं। सूर्य के दाएं और बाएं पार्श्व में क्रमशः दंड और पिंगल अंकित हैं। सूर्य के चरणों के निकट देवी महाश्वेता विराजमान है। हरि-हर-हिरण्यगर्भ की एक अन्य प्रतिमा विश्वनाथ मंदिर के गर्भगृह शिखर की एक पश्चिमी रथिका में समभंग खड़ी है। इस प्रतिमा में बीच के मुख के अतिरिक्त शेष दो मुखों का आकार पर्याप्त बड़ा है। प्रतिमा की शेष विशेषताएं लगभग पहली प्रतिमा जैसी ही हैं। इनके अतिरिक्त जवारी और चित्रगुप्त मंदिरों की पश्चिमी भित्तियों की रथिकाओं की प्रतिमाएं भी उल्लेखनीय हैं।

हरि-हर-हिरण्यगर्भ की एक आसनस्थ त्रिमुखी तथा अष्टभुजी प्रतिमा प्रतापेश्वर की जगती में विद्यमान है। इसमें देवता पादपीठ पर विराजमान हैं। तीनों मस्तक मुकुट से अलंकृत हैं। वे स्थानक प्रतिमाओं के समान सामान्य आभूषणों से युक्त हैं। उनके ऊपरी दो हाथों के कमल अब नष्ट हो गए हैं। शेष दाईं ओर का एक हाथ अक्षमाला युक्त वरदमुद्रा में तथा दूसरे और तीसरे चक्र और त्रिशूलयुक्त हैं। बाएं हाथों में क्रमशः सर्प, शंख और कमंडलु है। उपानह और कवच का अभाव है। पद्मपीठ के नीचे सात अश्व उत्कीर्ण हैं। देवता की एक अन्य प्रतिमा दूनादेव मंदिर की पश्चिमी उर्ध्व रथिका में उत्कीर्ण है। इसमें देवता के वक्ष पर कवच और कटिवस्त्र प्रदर्शित है। पादपीठ पर केवल तीन अश्व हैं और देवता के चरणों के बीच देवी महाश्वेता आसीन हैं।

गणेश: गणेश की गणना हिंदू धर्म के पंचदेवों में होती है। उन्हें गणपति भी कहते हैं जिसका अर्थ है 'गणों का अधिपति'। गणपति शब्द का सर्वप्रथम उल्लेख ऋग्वेद[42] के एक मंत्र में हुआ है। वैदिक साहित्य में उल्लिखित गणपति शब्द गणेश का पर्यायवाची नहीं है। अतः वैदिक देवसूची में गणेश की गणना नहीं हुई। महाभारत में विनायक नामक श्रेणी में अनेक देवताओं की गिनती की गई है। ये विनायक शुभ कार्यों में विघ्न उत्पन्न करते थे। इन विघ्नकर्ताओं के विनाशक गणपति (विघ्नराज) के महत्व का वर्णन इस महाकाव्य में मिलता है। यही कारण है कि गणेश को गणपति-विनायक भी कहते हैं। शैव पुराणों में भी गणेश को विघ्नकर्ता कहा गया है। उनको संतुष्ट करने से विघ्न दूर होते हैं।

प्राक् गुप्तकालीन हिंदू देवपरिवार में गणेश का कोई स्थान न था। प्राक् गुप्तकालीन अभिलेखों में भी गणेश का उल्लेख नहीं मिलता। अतः पांचवी-छठी शती ई० से भारतीय समाज में गणपति का पूजन प्रारंभ हुआ। मथुरा कला में नृत्य करते हुए गणेश की एक गुप्तकालीन मूर्ति मिली है। संभवत सर्वप्रथम

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

भूमरा (जि० सतना, म० प्र०) में गणेश की एक मूर्ति मिली है जो ईसवी पांचवीं शती की है। आंध्रप्रदेश के अमरावती स्थान में भी गजानन यक्ष की एक उल्लेखनीय प्रतिमा मिली है। सातवीं शती ईसवी से गणेश की बहुसंख्यक मूर्तियां बनने लगी। कुछ प्रतिमाओं में उनकी शक्ति भी साथ में दिखाई गई है।

खजुराहो में गणेश की अनेक प्रतिमाएं उपलब्ध हैं। कनिंघम के अनुसार यहां एक गणेश मंदिर भी था जो अब पूर्णतया लुप्त हो गया है। यहां की गणेश मूर्तियों को चार भागों में विभक्त किया जा सकता है : (क) स्थानक मूर्तियां (ख) आसन मूर्तियां (ग) नृत्त गणेश (घ) शक्ति गणेश।

(क) स्थानक मूर्तियां : खजुराहो में गणेश की द्विभुजी और चतुर्भुजी स्थानक प्रतिमाएं उपलब्ध हैं। लक्ष्मण मंदिर के उत्तर-पूर्वी खूंटरा मंदिर का एक शिलाफलक दर्शनीय है। इसमें ब्रह्मा, गणेश, शिव, कार्तिकेय और विष्णु की मूर्तियां पृथक पृथक रथिकाओं में अंकित हैं। यहां द्विभुज गणेश त्रिभंग खड़े हैं। वे करंड मुकुट, सर्प, यज्ञोपवीत आदि से अलंकृत हैं। उनके मस्तक पर मौक्तिकमाल, जंघाओं पर सुशोभित कटिसूत्रबद्ध मुक्ताजाल दर्शनीय है। वे एकदंत तथा सूर्पकर्ण हैं। वे अपने दाएं हाथ में परशु और बाएं हाथ में मोदकों से भरा पात्र लिए हैं।

चतुर्भुज गणपति प्रतिमाओं में से एक खजुराहो संग्रहालय (क्र० 1120) में प्रदर्शित है। गणेश के पहले हाथ में पद्म, दूसरे में परशु और चौथे में इक्षु खंड (एक बड़ा मोदक या फल) है। तीसरा हाथ खंडित है। सूंड़ सीधी लटकी है। दाईं ओर का एक दांत अब टूट गया है।

(ख) आसन मूर्तियां : खजुराहो में गणेश की द्विभुजी, चतुर्भुजी और षड्भुजी प्रतिमाएं मिली हैं। द्विभुजी प्रतिमाएं आकार में छोटी हैं। एक मूर्ति (संग्रहालय क्र० 1120) में गणेश ललितासन में विराजमान हैं। उनका दायां हाथ अभयमुद्रा में और बायां मोदकपात्र युक्त है। शुंड सीधी लटकी है और अंत में उसमें एक मोड़ है। दाईं ओर का दांत अब कुछ खंडित हो गया है। अन्य द्विभुजी प्रतिमाएं प्रायः ऐसी ही हैं।

प्रायः सभी उपलब्ध चतुर्भुजी प्रतिमाओं में गणेश आसीन हैं। देवता की शुंड सामान्यतः मुड़कर बाएं हाथ के मोदक अथवा मोदक पात्र को स्पर्श करती अंकित की गई है। सभी मूर्तियों में गणेश एकदंत हैं। कुछ प्रतिमाओं में वे सर्प यज्ञोपवीत और कुछ में अजिनोपवीत धारण किए हैं। सभी प्रतिमाओं में वे लंबोदर हैं। उनके चारों हाथों में दंत, कमल, परशु, मोदक या मोदकपात्र रहते हैं। कभी कभी एक हाथ में अभयमुद्रा भी मिलता हैं।[43]

गणेश की एकमात्र उपलब्ध षड्भुजी मूर्ति (संग्रहालय क्र० 1135) में उनके

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सिर के मध्य एक छोटा सा मुकुट है। वे हार, कंकण, मेखला और पैंजनी से अलंकृत हैं। वे शूर्पकर्ण, एकदंत और लंबोदर हैं। शुंड सीधी लटक रही है। उनके पहले हाथ में पद्म (अथवा दंत), दूसरे में परशु, पांचवे में अंकुश और छठे में मोदक पात्र हैं। तीसरे और चौथे हाथों से उन्होंने सिर के ऊपर एक सर्प पकड़ रखा है।

(ग) नृत्त गणेश : नृत्त गणेश मूर्तियों का निर्माण प्राक् गुप्तकाल से प्रारंभ हुआ। गुप्तकाल में उनका प्रचलन बढ़ा और पूर्व मध्यकाल में वे अत्यंत लोकप्रिय हो गईं। यहां नृत्त गणेश की द्विभुजी, चतुर्भुजी, दशभुजी, द्वादशभुजी और षोड्शभुजी मूर्तियां प्राप्त होती हैं। इनमें से कुछ उल्लेखनीय मूर्तियों का वर्णन इस प्रकार है :

नृत्त गणेश की एक अष्टभुजी मूर्ति यहां के संग्रहालय (क्र० 1135) में प्रदर्शित है। गणेश मूर्तियों में यह विशालतम है। इसमें नृत्य मुद्रा में प्रदर्शित गणेश हार, कंकण, केयूर, कटिसूत्र, पैंजनी तथा कौस्तुभमणि से अलंकृत है। मस्तक पर इकहरी मौक्तिकमाल है तथा शरीर का मध्य भाग सर्प यज्ञोपवीत से सुशोभित है। वे शूर्पकर्ण और एकदंत हैं। उनके पहले हाथ की वस्तु अस्पष्ट है। दूसरे में परशु है और तीसरा गजहस्त अथवा दंडहस्त मुद्रा में प्रदर्शित है। चौथे और पांचवें हाथों से उन्होंने सिर के ऊपर एक नाग पकड़ रखा है। छठे हाथ में दंत, सातवें में मोदकपात्र है और आठवां कटि पर अवलंबित है। उनकी सूंड़ मोदकपात्र को स्पर्श करती प्रतीत होती है। मूर्ति के पैर खंडित हो गए हैं। पृथक रखे पादपीठ पर एक ओर एक पार्श्वचर दो मृदंगों को बजा रहा है और दूसरी ओर खड़ा एक अनुचर मृदंग बजाने में तल्लीन है। यहीं देवता का वाहन मूषक दो पैरों पर खड़ा है।

गणेश की एक अन्य अष्टभुजी नृत्तमूर्ति अत्यंत मनोरम है।[44] इसमें नृत्यरत गणेश अतिभंग मुद्रा में अंकित हैं। वे सिर पर छोटा सा जटामुकुट, गले में हार और ग्रैवेयक, हाथों में कंकण और अंगद, वक्ष में कौस्तुभमणि, पैरों में पैंजनी और कटि में मेखला धारण किए हैं। वे शूर्पकर्ण हैं और उनका दाईं ओर का प्रदर्शित दांत खंडित है। उनके आठों हाथ सुरक्षित हैं। पहले में कुठार, चौथे और पांचवें में नाग, छठे में दंत, सातवें में मोदकपात्र है तथा आठवें में वे नीचे लटकता एक वस्त्र धारण किए हैं। उनका दूसरा हाथ व्याख्यान मुद्रा में और तीसरा गजहस्त या दंडहस्त मुद्रा में प्रदर्शित है।

(घ) शक्ति गणेश : खजुराहो में उपलब्ध शक्ति गणेश की तीन मूर्तियों में से दो में गणेश अपनी शक्ति के साथ आलिंगन मुद्रा में आसीन हैं। इनमें से एक मूर्ति (संग्रहालय क्र० 1107) में शूर्पकर्ण और एकदंत गणेश एक पीठ पर ललितासन

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

में विराजमान हैं। उनकी बाईं गोद में देवी आसीन हैं। उनका बायां पैर खंडित है। गणेश हार, कंकण, कौस्तुभमणि, कटिसूत्र, पैंजनी तथा सर्प यज्ञोपवीत धारण किए हैं। मस्तक पर एक लड़ीवाला मौक्तिकमाल है। देवी भी सामान्य आभूषणों से सज्जित हैं। गणेश चतुर्भुज हैं। उनके पहले हाथ में मोदकपात्र और दूसरे में परशु है। तीसरा हाथ खंडित है। उनका चौथा हाथ देवी को आलिंगन पाश में भरता हुआ उनके स्तन का स्पर्श करता है। द्विभुजी देवी का बायां हाथ खंडित है और गणेश का आलिंगन करता हुआ उनके दाएं स्कंध के पीछे है। गणेश की सूंड़ मोदकपात्र के ऊपर है।

तीर्थंकर

जैनधर्म में अर्हंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और साधु इन पांच को पंच परमेष्ठी कहा जाता है। पूजा के अभिप्राय से मंदिर में मूर्ति की प्रतिष्ठा हेतु इन्हीं पंच परमेष्ठी में से प्रथम परमेष्ठी तीर्थंकर भगवान अर्हंत की ही प्रतिमाएं स्थापित करने की परंपरा है। सांसारिक व्यामोह, राग-द्वेष और सभी प्रकार के शारीरिक तथा मानसिक प्रपंचों से मुक्त हो जाने की अवस्था को अर्हंत अवस्था कहा गया है। यही वह परमपद है, जहां पहुंचकर आत्मा के अपरिमित ज्ञान, सुख, शक्ति आदि गुण पूर्ण विकसित होकर प्रकट हो जाते हैं।

अर्हंत अवस्था में जब सारे सांसारिक और मानसिक प्रपंच छूट जाते हैं तब साधक अवस्था से निर्वस्त्र और निष्परिग्रह रहने वाला वह व्यक्ति भोजन, पान, मल-मूत्र विसर्जन, शयन, क्लांति, जरा और रोग जैसी शारीरिक दुर्बलताओं से भी मुक्ति पा जाता है। निर्वाण होने तक अर्हंत का शेषकाल पद्मासन में बैठे हुए या योगमुद्रा में कायोत्सर्ग (खड्गासन) आसन में खड़े हुए ध्यान करते ही व्यतीत होता है। इसीलिए चौबीस तीर्थंकरों की प्रतिमाएं यथाजात, नग्न, दिगंबर रूप में पद्मासन या खड्गासन में बनाई जाती हैं। अनुश्रुति है कि सभी तीर्थंकरों को इन्हीं दो में से किसी एक आसन में निर्वाण प्राप्त होता है और उसी रूप में वे सिद्धस्थली में अवस्थि होते हैं। उनका शरीर चंचलता और दुर्बलता से रहित हो गया है, इसलिए उन्हें ध्यान की अचल मुद्रा में अंकित किया जाता है; वे आत्म-दर्शन में तल्लीन माने गए हैं, इसलिए उनकी दृष्टि अंतर्मुखी दिखाई जाती है, उन्होंने अक्षय और असीम सुख प्राप्त कर लिया है, इसलिए उनके मुखमंडल पर सौम्यता के साथ एक सूक्ष्म और निर्दोष मुस्कान अंकित की जाती है। सभी तीर्थंकर प्रतिमाओं में ये सारी विशेषताएं समान रूप से एक जैसी पाई जाती हैं। इन समान विशेषताओं के कारण उन्हें अलग अलग पहचानना संभव नहीं होता। इसीलिए आराधकों ने अपनी सुविधा के लिए ही सभी चौबीस तीर्थंकरों के पृथक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पृथक चिह्न या लांछन निर्धारित किए। ये चिह्न तीर्थंकर प्रतिमाओं की पीठिका या सिंहासन पर अंकित किए गए। क्योंकि सभी तीर्थंकरों का उद्भव राजकुलों में हुआ था अतः इन चिह्नों का संबंध उनकी ध्वजा चिह्नों से भी जोड़ा जाता है ये चिह्न इस प्रकार हैं :

तीर्थंकर	चिह्न
1. ऋषभनाथ	वृषभ
2. अजितनाथ	गज
3. संभवनाथ	अश्व
4. अभिनंदननाथ	कपि
5. सुमितनाथ	चक्र या क्रौंच
6. पद्मनाथ	रक्तकमल
7. सुपार्श्वनाथ	स्वस्तिक
8. चंद्रप्रभु	चंद्र
9. पुष्पदंत	मकर
10. शीतलनाथ	श्रीवृक्ष
11. श्रेयांसनाथ	मृग या गरुड़
12. वासुपूज्यनाथ	महिष
13. विमलनाथ	वराह
14. अनंतनाथ	रीछ
15. धर्मनाथ	वज्र या दंड
16. शांतिनाथ	मृग
17. कुंथुनाथ	अज
18. अरहनाथ	मीन
19. मल्लिनाथ	पूर्णघट
20. मुनिसुव्रनाथ	कच्छप
21. नमिनाथ	नीलकमल
22. नेमिनाथ	शंख
23. पार्श्वनाथ	सर्प
24. महावीर	सिंह

उपर्युक्त चिह्नों के अतिरिक्त ऋषभनाथ और पार्श्वनाथ की प्रतिमाओं में कभी कभी कुछ विशेष प्रतीक अंकित होते हैं जिनसे उनके अभिज्ञान में सहायता मिलती है। आदिनाथ ने लगातार छः मास तक एक आसन से घोर तपस्या की थी। उस अवधि में उनका सिर दीर्घ जटाओं से वेष्टित हो गया था। महापुराण

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

के रचयिता जिनसेन[45] ने उमड़ते हुए मेघों अथवा धूमसमूह से उन जटाओं की तुलना की है। इस स्मृति में ऋषभनाथ की प्रतिमा पर कई प्रकार के जटाजूट, केश-गुच्छक या कुंतलराशि बनाने की परंपरा रही है। इसी प्रकार तेइसवें तीर्थंकर पार्श्वनाथ के जीवन की एक विशेष घटना का अंकन उनकी प्रतिमाओं में किया जाता है। पार्श्वनाथ के पूर्वजन्म का शत्रु इस पर्याय में कमठ नाम का असुर था। अर्हंत होने के पूर्व जब पार्श्वनाथ योग धारण कर साधना में लीन थे, तब इस असुर ने उनके ऊपर अत्यंत प्रचंड जलवर्षण करना प्रारंभ कर दिया। धरणी का स्वामी धरणेंद्र पार्श्वनाथ का सेवक यक्ष माना गया है। असुर के इस उपद्रव को शांत करने के लिए उसने अपना विशाल सप्तमुखी अहिफण भगवान के ऊपर छत्र की तरह फैला दिया। इस प्रकार कमठ द्वारा किया गया उपद्रव भगवान को पीड़ा पहुंचाने में असफल रहा। इस दैवी घटना के स्मरण के लिए तीर्थंकर पार्श्वनाथ की प्रतिमाओं के ऊपर फैला हुआ सप्तमुखी नागफण प्रतीक रूप में अंकित किया जाता है।

तीर्थंकर प्रतिमाओं का निर्माण ईसा से कुछ पूर्व प्रारंभ हो गया था। पटना के समीप लोहानीपुर, मथुरा, कौशांबी आदि की प्राचीन तीर्थंकर प्रतिमाएं उल्लेखनीय हैं। मथुरा से प्राप्त अनेक आयागपट्टों के मध्य में पद्मासन पर आसीन तीर्थंकर प्रतिमाएं मिली हैं। अछिच्छत्र, राजगृह, विदिशा आदि स्थानों में गुप्त-काल में अत्यंत सुंदर तीर्थंकर प्रतिमाओं का निर्माण हुआ। पूर्व मध्यकाल में प्रचलित परंपरा के अनुसार खजुराहो में वेदी के अतिरिक्त देवकुलिकाओं, ललाटबिंबों और वाह्यभित्तियों पर तीर्थंकर मूर्तियां प्राप्त हुई हैं।

आदिनाथ : तीर्थंकर आदिनाथ खजुराहो के सर्वाधिक मान्य आराध्यदेवता रहे हैं। संग्रहालय और मंदिरों में उनकी अनेक उल्लेखनीय प्रतिमाएं उपलब्ध हैं। ये सभी मूर्तियां प्राय: पद्मासन पर विराजमान हैं। उनमें आकार में सबसे बड़ी मूर्ति खजुराहो संग्रहालय (क्र० 1667) में प्रदर्शित है। यह प्रतिमा घंटई मंदिर से उठाकर लाई गई थी। सुंदर और ऊंचे सिंहासन पर बीचोंबीच धर्मचक्र और दोनों सिंहों के पार्श्व में गोमुख यक्ष और चक्रेश्वरी अंकित हैं। पीठिका पर सूर्य से प्रारंभ करके नवग्रह की रचना की गई है। ग्रहों के मध्य भगवान का लांछन वृषभ बड़ी मनोहरता के साथ बैठा हुआ अंकित किया गया है। पीठिका का यह संयोजन बहुत आकर्षक बन पड़ा है। ऊपर भगवान पद्मासन में विराजमान हैं। दोनों ओर चामरधारी इंद्र तथा अभिषेक करते हुए हाथियों के साथ व्याल, मकर आदि यथास्थान दिखाए गए हैं। भगवान की केशराशि बड़ी सुंदरतापूर्वक गूंथी गई है तथा उनकी जटाएं कांधे तक लहराती दिखाई गई हैं। शीर्ष के पीछे कमल के आकार का प्रभामंडल इस मूर्ति के सौंदर्य को बढ़ा देता है। छत्र और उसके

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ऊपर की रचना साधारण है। यद्यपि यह मूर्ति आकार में विशालतम है तथापि थोड़ी बहुत खंडित हो जाने से इसकी भव्यता में कमी प्रतीत होती है। ऐसी ही विशाल एक और प्रतिमा मंदिर क्रमांक 28 की वेदी पर विराजमान है। प्रतिमा की सारी संयोजना उपर्युक्त प्रकार की ही है परंतु नवग्रह और जटाजूट का इस प्रतिमा में अभाव है। सौम्यता और सुंदरता के लिए इस प्रतिमा को खजुराहो की उल्लेखनीय तीर्थंकर प्रतिमाओं में गिन सकते हैं।

आदिनाथ की सबसे मनोहर मूर्ति मंदिर क्रमांक 27 की वेदी पर विराजमान है। संवारकर गूंथी गई केशराशि, कंधों पर झूलती हुई जटाएं, पीठिका में नवग्रह और सिंहासन में शासनदेवता इस मूर्ति की सौंदर्यसज्जा में अभिवृद्धि करती हैं। इन सबके अतिरिक्त एक ऐसी सहजता और शरीर का ऐसा अनुपात इस प्रतिमा में देखने को मिलता है जो अपनी विशिष्ट छाप छोड़ता है। सिंहासन के नीचे एक ओर मूर्ति निर्माता और दूसरी ओर वृषभ का अंकन है। पीठिका के प्रारंभ में करबद्ध मुद्रा में एक युगल बैठा है और तब सूर्य से प्रारंभ करके केतु तक नवग्रहों का मनोरम तथा सजीव अंकन है। अंत में पुन: एक व्यक्ति दास भाव से बैठा है। भगवान की पद्मासन पीठिका अपने सौष्ठव और शरीर की मृदुता के कारण अत्यंत आकर्षक बन पड़ी है। गुंफित जटाजूट और कंधों तक लहराती जटाएं तथा मुखमंडल की सौम्यता बरबस ही अपनी ओर दृष्टि आकर्षित कर लेती है। दोनों ओर चामरधारी इंद्र और एक एक तीर्थंकर खड़े हैं। सुंदर प्रभामंडल हाथियों से युक्त है और दंड पर आधारित तीन छत्र हैं, जिनकी परिसमाप्ति सूचिका और कलश में हुई है। दोनों ओर मालाधारी विद्याधर गगन विहार करते हुए अंकित हैं। ऐसे ही परिकर से युक्त एक ओर प्रतिमा मंदिर क्रमांक 17 में सुरक्षित है। यद्यपि प्रभावली के साथ की सारी सज्जा इस प्रतिमा से टूटकर विलग हो गई है तथापि प्रतिमा अखंडित है। जटाओं की सुघड़ता और शरीर की सुंदरता के लिए इस प्रतिमा का उल्लेख अपरिहार्य कहा जा सकता है। नवग्रह से युक्त एक और आदिनाथ की प्रतिमा शांतिनाथ मंदिर के गर्भगृह में बाईं ओर दीवार पर जड़ी हुई मिलती है। यहां भी आदिनाथ अनुष्ठान विग्रह प्रतिमाओं के सारे लक्षण और उपादान इस छोटी सी प्रतिमा में विद्यमान हैं।

मंदिरों की उपर्युक्त प्रतिमाओं के अतिरिक्त खजुराहो के जैन संग्रहालय में संग्रहीत आदिनाथ प्रतिमाओं में अनेक कलागत विशेषताएं परिलक्षित होती हैं। जैन संग्रहालय की मूर्ति क्र० 103 ऐसी ही एक प्रतिमा है। पद्मासन आदिनाथ के सिंहासन के पार्श्व में गोमुख और चक्रेश्वरी अंकित है। देवी नर-गरुड़ पर ललितासन में विराजमान हैं। उनके नीचे का हाथ वरद मुद्रा में और शंखयुक्त तथा ऊपर के हाथों में गदा और शंख हैं। पीठिका पर ककुभ वृषभ आसीन है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उसके दोनों ओर प्रतिष्ठापक युगल अंकित हैं। इंद्रों की त्रिभंग मुद्रा और सुंदर मुखाकृति दर्शनीय हैं। उनके हाथों में चमर के स्थान पर कमल पुष्प दिखाए गए हैं। संभवत: चमर उनके ऊपरी हाथों में रहे होंगे किंतु वे दोनों ही खंडित हैं। प्रभामंडल के पार्श्व में दौड़ते हुए हाथी आर उन पर कलश तथा माला लिए हुए इंद्र और इंद्राणी अंकित हैं। उनसे भी ऊपर मालाधारी गंधर्व दो दो देवांगनाओं के साथ बड़ी कुशलता से अंकित किए गए हैं। छत्र के ऊपर सूची, आमलक और कलश का संयोजन है और उद्घोषकों में दोनों ओर वीणाधारिणी गंधर्व कन्याएं दिखाई गई हैं।

जैन संग्रहालय की (मूर्ति क्र० 8 और 27) तथा खजुराहो संग्रहालय की (मूर्ति क्र० 1612, 1642 और 1712) आदिनाथ की प्रतिमाएं उल्लेखनीय हैं। मूर्ति क्रमांक 1830 में सिंहासन कोलकर बनाया गया है। कीर्तिमुख से लटकती झालर में अश्वारोही अंकित है। पीठिका पर वृषभ है और भगवान की जटाएं लंबी बनाई गई हैं। श्रीवत्स का अंकन झूलते हुए सूत्र के रूप में किया गया है। छत्रों के तीन पृथक पटल बनाए गए हैं। छत्र के नीचे पद्म उत्कीर्ण है। विद्याधर युगलों के पीछे घुमड़ते हुए बादलों की रचना की गई है तथा प्रभावली सप्तवलय है। नीचे सिंहासन के पार्श्व में गोमुख बैठा है तथा चक्रेश्वरी नर-गरुड़ पर आरूढ़ है।

शांतिनाथ : जैन मंदिर समूह में स्थानीय प्राचीन सामग्री से भगवान शांतिनाथ के एक नए मंदिर[46] का निर्माण कुछ समय पूर्व किया गया था। इस अर्वाचीन मंदिर के गर्भगृह में कायोत्सर्ग मुद्रा में खड़ी 14 फीट ऊंची तीर्थंकर शांतिनाथ की एक विशाल प्रतिमा प्रतिष्ठित है। संभवत: खजुराहो की यह सबसे ऊंची मूर्ति है। प्रतिमा अत्यंत भव्य एवं विशाल है। चमकदार पालिश से युक्त होने के कारण उसका आकर्षण और अधिक बढ़ गया है। सिंहासन के बीच में धर्मचक्र और तीर्थंकर का लांछन हिरण तथा दोनों ओर यक्ष तथा यक्षी अंकित हैं। चरणों के समीप प्रतिष्ठापक पति-पत्नी दोनों ओर आसीन हैं। चामरधारी इंद्र इस युगल के पास ही खड़े हैं। मूर्ति के दोनों ओर फणावलीयुक्त पार्श्वनाथ की कायोत्सर्ग आसन प्रतिमाएं बनाकर उनके ऊपर छोटी छोटी रथिकाओं में पांच पांच तीर्थंकर मूर्तियां बनाई गई हैं। यह क्रम मूर्ति की पूरी ऊंचाई तक चला गया है। मूर्ति पर अंकित लेख से उसका निर्माणकाल वि० सं० 1085 (1028 ई०) ज्ञात होता है। खजुराहो के संग्रहालयों में शांतिनाथ की अनेक प्रतिमाएं हैं किंतु उनमें कोई उल्लेखनीय विशेषता दिखाई नहीं देती।

पार्श्वनाथ : तेइसवें तीर्थंकर पार्श्वनाथ की सबसे सुंदर प्रतिमा शांतिनाथ मंदिर के गर्भगृह में दाईं ओर है। सिंहासन के ऊपर पीठिका के रूप में नाग की दस

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कुंडलीयुक्त आसन पर भगवान पद्मासन में विराजमान हैं। नाग की यह कुंडली भगवान की पीठ पीछे सहारा बनाती हुई ऊपर फणावली में परिणत हो जाती है। नाग के सातों फण बड़ी सुंदरता के साथ भगवान के मस्तक पर छाया कर रहे हैं। आसन के दाईं ओर फणावली से युक्त उनकी शासनसेविका पद्मावती खड़ी है और बाईं ओर हाथ में छत्र का दंड संभाले धरणेंद्र अंकित हैं। दोनों ओर चार चार खड्गासन तीर्थंकर दो पटलों में अंकित हैं। फणावली के पीछे एक मनोरम आसनपट्टिका बाएं से दाएं दिखाई गई है, जिस पर एक ओर बाहुबली खडे हैं। उनका शरीर लताओं से वेष्टित है और उस पर सांप तथा बिच्छू रेंगते हुए दृष्टिगत होते हैं। बाईं ओर इसी सिंहासन पर कायोत्सर्ग मुद्रा में चक्रवर्ती सम्राट भरत का अंकन है। नवनिधि और चौदह रत्नों वाली उनकी संपदा का प्रतीक रूप में अंकन इस मूर्ति में हुआ है। कमलपुष्प से निर्मित भगवान का छत्र धरणेंद्र के साथ उनका तादात्म्य स्थापित करता है।

पार्श्वनाथ की एक और सुंदर प्रतिमा 1966-67 ई० में श्री नीरज जैन को खजुराहो के घंटई मंदिर के समीप एक खेत से प्राप्त हुई थी जो अब जैन संग्रहालय में (मूर्ति क्र० 100) प्रदर्शित है। मूर्ति की ऊंचाई डेढ़ मीटर के लगभग है। सिंहासन में झूलती झालर के ऊपर नाग की पूंछ लटकती दिखाई गई है। यहां एक ही सादी कुंडली से नाग ने भगवान का आसन प्रस्तुत कर दिया है और पीछे कुंडली का आधार बनाता हुआ उसका फण वितान की तरह शीर्ष पर छा गया है। आसन के पार्श्व में धरणेंद्र और पद्मासन में विराजमान हैं। दोनों के सिर पर फणावली अंकित है। आसन के दोनों ओर इंद्रों के एक हाथ में कमल तथा दूसरे में चमर है। शिलाफलक में दोनों ओर वाह्य पट्टिकाओं में सेवक यक्ष और उनके ऊपर गज, व्याल, मकर आदि अंकित हैं। फणावली के दोनों ओर गजयुगल तथा छत्र के पार्श्व में गगनबिहारी देव और विद्याधर, वादित्र तथा मालाओं के साथ प्रदर्शित हैं। मूर्ति का शारीरिक गठन निर्दोष तथा मनमोहक है और उनकी केश संयोजना उष्णीष प्रकार की है। पार्श्वनाथ की एक अन्य उल्लेखनीय प्रतिमा (क्र० 1654) खजुराहो संग्रहालय में प्रदर्शित है। यहां फणावली से युक्त तीर्थंकर को कायोत्सर्ग मुद्रा में खड़े हुए अंकित किया गया है। शासनदेवताओं का अंकन यथानुरूप किया गया है। प्रतिमा की प्रमुख विशेषता उसकी निचली पट्टी पर नवग्रहों का प्रदर्शन है। पूजा अनुष्ठान में पार्श्वनाथ का विशेष संबंध सूर्य के साथ जोड़ा जाता है। सूर्यग्रह की उपशांति के लिए रविवार को पार्श्वनाथ के पूजन का विशेष महत्व बताया गया है। अतः यह अनुमान किया जा सकता है कि सूर्य और तदनुगामी शेष ग्रहों से संबंधित किसी अनुष्ठान को दृष्टि में रखकर इस मूर्ति का निर्माण किया गया हो।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

महावीर : यहां पर महावीर की प्रतिमाओं की संख्या अत्यंत विरल है। अनुमान होता है कि यह संख्या बीस से ऊपर न होगी। ये प्रतिमाएं भी सामान्य परिकर और सज्जा से युक्त हैं। खजुराहो संग्रहालय की (मूर्ति क्र० 457, 1637, 1689, 1731) तथा जैन संग्रहालय की (मूर्ति क्र० 17) भगवान महावीर की दर्शनीय प्रतिमाएं हैं। अनुश्रुति है कि लांछन विहीन प्रतिमा महावीर की ही होती है। अगर इस तथ्य को स्वीकार किया जाए तब निश्चय ही महावीर की प्रतिमाओं की संख्या यहां सैकड़ों तक पहुंच जाएगी।

आदिनाथ, शांतिनाथ, पार्श्वनाथ और महावीर के अतिरिक्त शेष बीस तीर्थंकरों की प्रतिमाओं का निर्माण खजुराहो में अनेक स्थानों पर यथाक्रम और आवश्यकतानुसार हुआ है, किंतु उनके परिकर और आकार-प्रकार एक जैसे ही हैं।

बाहुबली : जैनधर्म में तीर्थंकरों को छोड़कर अन्य अर्हतों की प्रतिमा निर्माण की परंपरा नहीं रही। तो भी, आराधकों ने इस परंपरा का उल्लंघन कर बाहुबली की मूर्तियों का निर्माण कराया है। भरत और बाहुबली दोनों आदि तीर्थंकर ऋषभनाथ के पुत्र थे जिनमें से भरत चक्रवर्ती सम्राट हुए और बाहुबली साधारण राजा। किसी बात पर दोनों भाइयों में इतना गंभीर विवाद हो गया कि स्थिति द्वंद्व तक पहुंच गई। बाहुबली अवस्था में छोटे होते हुए भी भरत से कद में ऊंचे और शरीर में बलिष्ठ थे। अतः उन्होंने भरत को पराजित तो कर दिया किंतु विजयी होते ही उनके मन में संसार तथा शरीर से वैराग्य हो गया। दीक्षा लेकर उन्होंने एक वर्ष का अचल कायोत्सर्ग योग धारण किया। इस अवधि में उनके चरणों के समीप सांप-बिच्छू आदि अनेक जंतुओं ने अपने निवास बनाकर निधड़क उनके शरीर पर रेंगना प्रारंभ कर दिया। आसपास की लता-बेलें उनके शरीर से लिपटकर ऊपर चढ़ने लगीं। लेकिन बाहुबली की समाधि तभी टूटी जब वे अर्हत हो गए। इस युग में सर्वप्रथम निर्वाण प्राप्त करने के कारण तीर्थंकरों के समान उनकी प्रतिमाएं बनने लगीं तथा मंदिरों में प्रतिष्ठित की जाने लगीं। उनकी मूर्ति लांछन विहीन होती है किंतु वह ध्यानस्थ खड्गासन ही मिलती है। उनके दुर्धर तपश्चरण की स्मृति स्वरूप उनके शरीर पर रेंगते हुए सांप-बिच्छू और लिपटी हुई लता-बेलें अंकित की जाती हैं। खजुराहो में बाहुबली की एक सुंदर प्रतिमा पार्श्वनाथ मंदिर की प्रदक्षिणा में स्थापित है। यहीं खजुराहो संग्रहालय में एक द्वार तोरण पर बैठे हुए ऋषभदेव के पार्श्व में खड्गासन बाहुबली और भरत अंकित किए गए हैं।

उपर्युक्त प्रतिमाओं के अतिरिक्त कहीं कहीं तीन चक्रवर्ती तीर्थंकर-शांतिनाथ, कुंथुनाथ, अरहनाथ—और कहीं कहीं पांच बालयति (बाल ब्रह्मचारी)

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तीर्थंकर—वासुपूज्य, मल्लिनाथ, नेमिनाथ, पार्श्वनाथ और महावीर—अथवा कहीं कहीं प्रथम और अंतिम तीर्थंकरों की प्रतिमाएं एक साथ बनाए जाने की परंपरा रही है। एक ही शिलाफलक पर चौबीस तीर्थंकर मूर्तियां बनाकर चौबीसी के नाम से स्थापित करने की भी परंपरा पाई जाती है। ये सभी प्रतिमाएं सुविधानुसार पद्मासन या कायोत्सर्ग आसन में बनाई जाती हैं।

पार्श्वदेवता

शासनदेवता

तीर्थंकर प्रतिमाओं के परिकर में शासनदेवता या यक्ष-यक्षियों का अंकन एक दीर्घकालीन क्रमिक विकास द्वारा हुआ। इन यक्ष-यक्षियों का मुख्य कार्य तीर्थंकर के शासन की सेवा और व्यवस्था करना है। इसीलिए इन्हें शासनदेवता या शासन-सेवक कहा गया है। इनकी संख्या चौबीस है जो इस प्रकार है :

तीर्थंकर	शासनयक्ष	शासनयक्षी
1. आदिनाथ	गोमुख या गोवदन	चक्रेवरी
2. अजितनाथ	महायक्ष	रोहिणी
3. संभवनाथ	त्रिमुख	प्रज्ञप्ति
4. अभिनंदननाथ	यक्षेश्वर	वज्रश्रृंखला
5. सुमतिनाथ	तुंवरू	पुरुषदत्ता
6. पद्मनाथ	कुसुम	मनोवेगा
7. सुपार्श्वनाथ	वरनंदी	काली
8. चंद्रप्रभु	श्याम या विजय	ज्वालामालिनी
9. पुष्पदंत	अजित	महाकाली
10. शीतलनाथ	ब्रह्मा	मानवी
11. श्रेयांसनाथ	ईश्वर	गौरी
12. वासुपूज्यनाथ	कुमार	गांधारी
13. विमलनाथ	षड्मुख या कार्तिकेय	वैरोटिका
14. अनंतनाथ	पाताल	अनंतमती
15. धर्मनाथ	किन्नर	मानसी
16. शांतिनाथ	किंपुरुष	महामानसी
17. कुंथुनाथ	जया	गंधर्व
18. अरहनाथ	यक्षेंद्र	तारावती
19. मल्लिनाथ	कुबेर	अपराजिता

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

20. मुनि सुव्रतनाथ	वरुण	बहुरूपिणी
21. नमिनाथ	भृकुटि	चामुंडिका
22. नेमिनाथ	गोमेध	अंबिका
23. पार्श्वनाथ	धरणेंद्र	पद्मावती
24. महावीर	मातंग	सिद्धायनी

शासनयक्ष और यक्षियों के लांछन इस प्रकार हैं :

यक्ष	लांछन	यक्षी	लांछन
1. गोमुख	वृषभ	चक्रेश्वरी	गरुड़
2. महायज्ञ	गज	रोहिणी	आसन
3. त्रिमुख	मयूर	प्रज्ञप्ति	हंस या बतख
4. वक्षेश्वर	गज	वज्रश्रृंखला	हंस
5. तुंबरू	गरुड़	पुरुषदत्ता	हाथी
6. कुसुम	वृषभ	मनोवेगा	अश्व
7. वरनंदी	सिंह	काली	वृषभ
8. श्याम या विजय	हंस	ज्वालामालिनी	वृषभ
9. अजित	कूर्म	महाकाली या अजिता	×
10. ब्रह्मा	कमलासन	मानवी	×
11. ईश्वर	वृषभ	गौरी	नंदी (वृषभ)
12. कुमार	मयूर	गांधारी	सर्प
13. षड्मुख या कार्तिकेय	कुक्कुट	वैरोटी या वैरोट्या	नाग
14. पाताल	मकर	अनंतमति	हंस
15. किन्नर	मीन	मानसी	सिंह
16. किंपुरुष	वृषभ	महामानसी	मयूर
17. गंधर्व	मृग	विजया या जया	मयूर
18. यक्षेंद्र	मयूर	अजिता	हंस
19. कुबेर	गज	अपराजिता	हंस
20. वरुण	×	बहुरूपिणी	नाग
21. भृकुटि	वृषभ	चामुंडी	मकर
22. सरवाहन	×	कूष्मांडिनी	सिंह
23. धरणेंद्र	कूर्म	पद्मावती	हंस
24. मातंग	गज	सिद्धायनी (सिद्धायिका)	हंस

उपर्युक्त तालिका में पाठभेद से चक्रेश्वरी को प्रज्ञप्ति या प्रजापति, पवि-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

श्रृंखला को वज्रश्रृंखला, वैरोटिका को वैरोट्या, तारावती को अजिता तथा अंबिका को आम्रा, धर्मदेवी या कुष्मांडिनी नाम से भी अभिहित किया जाता है। यद्यपि इन शासनदेव और देवियों का अंकन तीर्थंकर प्रतिमाओं के निम्न भाग में सिंहपीठ के दाएं-बाएं ही प्राय: पाया जाता है तथापि मंदिरों की परिक्रमा, वाह्य-भित्ति अथवा ललाटबिंब पर भी उन्हें प्रतिष्ठित किया गया है।

शासनदेवियों की स्वतंत्र मूर्तियों में से अधिकांश के शीर्षभाग पर किरीट-मुकुट पर या उनके पीछे वृक्षादिक में उनके अधिष्ठाता तीर्थंकर का अंकन अनिवार्य रूप से किया जाता है।

प्राय: सभी देवी-देवता सिर पर करंड-मुकट धारण किए हुए अपने वाहनों पर ललितासन में विराजमान हैं। प्राय: सभी के शरीर पर एक अधोवस्त्र और नाना प्रकार के आभूषण अंकित होते हैं। ऋषभनाथ के यक्ष गोमुख का मुंह बैल के मुख जैसा होता है किंतु शेष सभी यक्ष मानवाकृति ही बनाए जाते हैं। इसी प्रकार अंतिम तीर्थंकर महावीर की यक्षी सिद्धायिका के दो हाथ अंकित किए जाते हैं, जबकि शेष सभी शासनदेवियों के चार से लेकर सोलह हाथ तक निर्मित किए गए हैं। इनके हाथों को अभयमुद्रा, वरदमुद्रा, चक्र, कमल, कटक, त्रिशूल, खंग, परशु, पाश, वज्र, धनुष, बाण, नाग, दंड, अंकुश, घंटिका, शंख और फल आदि अनेक प्रकार के आयुध अंकित किए जाते हैं। खजुराहो में चक्रेश्वरी अंबिका, पद्मावती आदि देवियों तथा गोमुख, धरणेंद्र आदि यक्षों की सुंदर मूर्तियां पर्याप्त संख्या में निर्मित की गई हैं। उनका वर्णन इस प्रकार है :

चक्रेश्वरी : खजुराहो में आदि तीर्थंकर ऋषभनाथ की शासनयक्षी चक्रेश्वरी की प्रतिमाएं अत्यंत विरल हैं और उनकी स्वतंत्र मूर्तियों का सर्वथा अभाव है। यहां उनकी उपस्थिति आदिनाथ के सिंहासन या कहीं कहीं द्वार तोरणों पर दृष्टि-गोचर होती है। जैन संग्रहालय के एक सिंहासन की पीठिका में चक्रेश्वरी का मनोरम अंकन है।[47] यहां उड़ते हुए नर गरुड़ पर बारहभुजी देवी चक्रेश्वरी ललितासन में विराजमान है जिनके सभी हाथ और पैर खंडित हैं। उनके शीर्ष-भाग के समकक्ष गरजते सिंहों से युक्त तीर्थंकर का आसन है। प्रतिमा के दोनों ओर एक एक खड्गासन तीर्थंकर अंकित हैं। प्रतिमा के सबसे नीचे वृषभ का चिह्न है।

आदिनाथ की प्राय: सभी प्रतिमाओं में सिंहासन के दोनों ओर गोमुख और चक्रेश्वरी का अंकन मिलता है। परंतु इस प्रकार की मूर्तियां छोटे आकार की हैं।[48] चक्रेश्वरी की एक विशाल प्रतिमा शासकीय संग्रहालय में सुरक्षित है। देवी ललितासन में विराजमान है। मूर्तिफलक में देवी के ऊपर लघुकाय तीर्थंकर प्रतिमाएं उत्कीर्ण की गई हैं तथा पीठिका में नवग्रह की संयोजना की गई है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अंबिका : शासनदेवियों में बाइसवें तीर्थंकर नेमिनाथ की शासनयक्षी अंबिका सभी देवियों से अधिक मान्य रही है जिसकी पुष्टि खजुराहो में उपलब्ध उनकी मूर्तियों से होती है। यहां के शासकीय संग्रहालय में लाल बलुवे पत्थर से निर्मित और आम्रवृक्ष के नीचे खड़ी चतुर्भुजी अंबिका की एक अत्यंत सुंदर प्रतिमा[49] प्रदर्शित है। वृक्ष के शीर्ष पर तीर्थंकर नेमिनाथ विराजमान हैं। देवी का एक बायां हाथ शेष है जिसकी अंगुली पकड़े हुए उनका पुत्र शुभंकर खड़ा है। देवी का दूसरा पुत्र प्रियंकर और उनका वाहन सिंह दाईं ओर अंकित है। देवी का शरीर अत्यंत सौष्ठवपूर्ण और मनोहर है। अंबिका की एक अन्य सुंदर मूर्ति जैन मंदिर समूह की वापिका में दीवार पर लगी है। यहां वृक्ष के नीचे त्रिभंगमुद्रा में खड्गासन देवी के चारों हाथ खंडित हैं। उनके शीर्ष के पीछे अंडाकार प्रभावली तथा सिर पर सुंदर मुकुट है। देवी अनेक प्रकार के आभूषण धारण किए है। उनका एक पुत्र और वाहन सिंह बाईं ओर उपस्थित है। सिंहासन के दोनों ओर गृहस्थ दंपत्ति विद्यमान है। प्रतिमा की पीठिका का लेख स्पष्ट रूप से नहीं पढ़ा जा सका। अंबिका की एक अन्य खड्गासन प्रतिमा जैन संग्रहालय में प्रदर्शित है।[50] आम्रवृक्ष के नीचे चतुर्भुजी देवी त्रिभंग मुद्रा में खड़ी हैं। उनके पहले दाएं हाथ में आम्रलुंब है तथा दूसरा दायां हाथ खंडित है। पहले बाएं हाथ में कमल तथा दूसरे हाथ में पुत्र शुभंकर है। देवी का दूसरा पुत्र प्रियंकर हाथ में फल लिए समीप ही खड़ा है। खजुराहो संग्रहालय[51] में जैन मंदिर के एक ललाटबिंब के तोरण पर अंबिका का मनोरम अंकन मिलता है। चतुर्भुज देवी ललितासन विराजमान है। उनके दाएं हाथ में आम्रलुंब है और बाएं हाथ का सहारा लेकर उनका छोटा पुत्र शुभंकर गोद में बैठा हुआ माता का स्तनपान करने का प्रयत्न कर रहा है। देवी के अन्य हाथों में पाश और पुष्प हैं। सबसे ऊपर फलों से लदा आम्रवृक्ष है, जिसपर तीर्थंकर नेमिनाथ विराजमान हैं। सिंहासन के एक ओर प्रियंकर और दूसरी ओर देवी का वाहन सिंह विद्यमान है।

पद्मावती (धरणेंद्र) : शासनदेवताओं में अंबिका के बाद सर्वाधिक मान्यता धरणेंद्र-पद्मावती की है। यह देवी प्रायः युगलरूप में वृक्ष के नीचे ललितासन में बैठी प्रदर्शित की जाती है। खजुराहो में पद्मावती सहित धरणेंद्र की अनेक प्रतिमाएं हैं जिनमें शांतिनाथ मंदिर के प्रांगण में पश्चिमी कोने की दीवार में लगी हुई प्रतिमा अत्यंत कलात्मक है। इसमें पद्मावती और धरणेंद्र अलग अलग मणिखचित आसनों पर ललितासन विराजमान हैं। दोनों का बायां पैर मुड़ा है और दायां पैर कमर पर अवलंबित है। धरणेंद्र की धोती घुटनों के ऊपर तक लिपटी हुई है तथा उत्तरीय कंधों से होता हुआ पैरों तक लटक रहा है। उनके दाएं हाथ में श्रीफल और बाएं हाथ में कमल है। धरणेंद्र के समान ही देवी का आसन है। उनकी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

साड़ी एड़ियों तक पहुंचती है और उत्तरीय कंधों से होता हुआ पैरों तक झूल रहा है। देवी के शरीर पर विभिन्न प्रकार के आभूषण हैं उनके दाएं हाथ में श्रीफल है और बायां हाथ गोद में खड़े बालक को अवलंब दे रहा है। यक्ष दंपती के शीर्षो पर अलग अलग सुंदर प्रभावली है। मूर्तिफलक के सबसे ऊपरी भाग पर वृक्ष के ऊपर तीर्थंकर सुशोभित है, जहां चामरधारी इंद्र उनकी वंदना करते हुए दिखाए गए हैं। वृक्ष के दोनों कोनों पर मालाधारी, गगनबिहारी विद्याधर और उनके सेवक अंकित किए गए हैं। नीचे सिंहासन के दोनों ओर चामरधारिणी दो देवियां यक्षदंपती की सेवा में तत्पर बताई गई हैं। यक्ष दंपती के चरणों के नीचे दोनों ओर संभवतः मूर्ति के प्रतिष्ठापक दो दो पुरुष आसीन हैं तथा बीच में एक देवता और उनके दो करबद्ध सेवक विराजमान हैं।[52]

अष्टदिक्पाल

भारतीय देवशास्त्र के अनुसार विश्व की आठ दिशाएं हैं, जिनके स्वामी अष्ट-दिक्पाल कहलाते हैं। इन देवताओं और उनके द्वारा शासित दिशाओं के नाम इस प्रकार हैं :

1. इंद्र	पूर्व
2. अग्नि	दक्षिण-पूर्व
3. यम	दक्षिण
4. निऋति	दक्षिण-पश्चिम
5. वरुण	पश्चिम
6. वायु	उत्तर-पश्चिम
7. कुबेर	उत्तर, तथा
8. ईशान	उत्तर-पूर्व

उपर्युक्त पौराणिक दिक्पालों की सूचियों से मिलती-जुलती इन देवों की सूची दिगंबर जैन साहित्य में भी उपलब्ध है।[53] खजुराहो के मंदिरों में अष्ट-दिक्पालों का चित्रण मंदिर की जंघा या सांधार प्रासाद में गर्भगृह की निचली मूर्ति पंक्ति में निर्दिष्ट दिशाओं की ओर युगल रूप में अंकित हैं। लक्ष्मण एवं विश्वनाथ के खूंटरा मंदिरों, पार्श्वनाथ, आदिनाथ, जवारी और चतुर्भुज मंदिरों की जंघा के कोनों में एक बार तथा देवी जगदंबी, चित्रगुप्त, कंदरिया महादेव, वामन एवं दूलादेव की जंघा पर उनका अंकन एकाधिक बार हुआ है। लक्ष्मण, पार्श्वनाथ एवं कंदरिया महादेव के गर्भगृह में भी उनका चित्रण मिलता है। उनका वर्णन इस प्रकार है :

इंद्र : इंद्र पूर्वीय दिक्प्रदेश के दिक्पाल हैं। खजुराहो में इंद्र पूर्व की ओर मंदिरों

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

के दक्षिण-पूर्वी कोनों में अग्नि के साथ युगल रूप में प्रायः त्रिभंग और यदा-कदा आभंग खड़े उत्कीर्ण किए गए हैं। वे सामान्यतः करंड मुकुट तथा यदा-कदा किरीट और जटामुकुटों के साथ हार, ग्रैवेयक, कुंडल, केयूर, कंकण, मेखला, यज्ञोपवीत, वनमाला तथा कौस्तुभमणि धारण किए हैं। उनके साथ उनका वाहन ऐरावत भी अंकित है। प्रतिमाओं में प्रायः पार्श्वचरों को उत्कीर्ण नहीं किया गया। तो भी, कुछ प्रतिमाओं में पादपीठ पर अंजलिमुद्रा में एक एक भक्त उत्कीर्ण किया गया है।

इंद्र और शची की कुछ आलिंगन मूर्तियां भी यहां उपलब्ध हैं। शीर्षविहीन इंद्र की एक मूर्ति[54] हार, यज्ञोपवीत, केयूर, कंकण, मेखला तथा वनमाला से अलंकृत है। इंद्र के पार्श्व में केशबंध, हार, कटिसूत्र तथा केयूरों से सुशोभित शची खड़ी हैं। इंद्र के तीन हाथ या तो खंडित हैं या स्पष्ट नहीं हैं। उनका चौथा हाथ शची का आलिंगन करता हुआ उनके बाएं स्तन पर स्थित है। शची का बायां हाथ खंडित है तथा दायां हाथ इंद्र के दाएं कंधे पर अवलंबित है। पादपीठ पर देव-देवी के अगल-बगल क्रमशः चामरधारी और चामरधारिणी खड़ी हैं। यहीं देवता का वाहन ऐरावत और अंजलिमुद्रा में एक भक्त अंकित है। ऊपर प्रभामंडल में एक कोने पर ब्रह्मा तथा दूसरे कोने में शिव आसीन हैं।

अग्नि : इंद्र के बाद वैदिक देवताओं में अग्नि का स्थान है। वे देवों के दूत भी कहे गए हैं। खजुराहो में उसका अंकन मंदिरों के दक्षिणी-पूर्वी कोनों में इंद्र के साथ युगलरूप में प्रायः द्विभंग या त्रिभंग खड़े और यदा-कदा ललितासन मुद्रा में बैठे किया गया है। सामान्यतया वे जटामुकुटयुक्त हैं। वे डाढ़ी-मूंछ से युक्त तथा ग्रैवेयक, हार, कुंडल, केयूर, कंकण, मेखला, यज्ञोपवीत, वनमाला तथा कौस्तुभ से अलंकृत हैं। देवता का वाहन प्रायः मेष ही है। लक्ष्मण मंदिर की बहिर्जंघा[55] में अग्नि की एक प्रतिमा उल्लेखनीय है। इसमें जटामुकुट, यज्ञोपवीत, कौपीन तथा पादुकाएं धारण किए चतुर्भुज अग्नि समभंग मुद्रा में खड़े हैं। उनकी पहली भुजा अक्षमाला युक्त वरदमुद्रा में अंकित है तथा शेष भुजाओं में क्रमशः यज्ञपात्र, पुस्तक और कमंडलु हैं। उनके दाएं पार्श्व में स्थित एक अनुचर के हाथों में दंड और कमंडलु हैं। बाएं पार्श्व में भी एक अनुचर है जिसका बायां हाथ कमर पर तथा दायां अस्पष्ट है। मूर्ति के चारों कोनों पर एक एक कंकालमात्र संन्यासी खड़े दिखाए गए हैं। वे जटाजूट तथा लंबकूर्च युक्त हैं। उनके दाएं हाथ में अक्षमाला और बाएं में दंड है। लक्ष्मण मंदिर की उत्तरी जंघा पर ही अग्नि की एक द्विभुजी प्रतिमा है जिसमें अग्नि के मस्तक के दोनों ओर धार्मिक वार्ता में व्यस्त एक एक संन्यासी के अतिरिक्त अंकन के साथ अंजलिमुद्रा में आसीन भक्तों का एक युगल प्रदर्शित है।

वामन मंदिर के शिखर की दक्षिणी रथिका में अग्नि और स्वाहा की एक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

दर्शनीय आलिंगन मूर्ति भी है, जिसमें जटामुकुट तथा अन्य आभूषणों से युक्त लंब-कूर्च अग्नि ललितासन में विराजमान हैं और सामान्य आभूषणों से अलंकृत उनकी पत्नी स्वाहा उनकी बाईं गोद में आसीन है। चतुर्भुज देवता के तीन हाथों में क्रमशः कमंडलु, स्रुक तथा पुस्तक हैं और चौथा हाथ देवी का आलिंगन करता है। पादपीठ पर देवता का वाहन प्रदर्शित है। प्रभामंडल के ऊपरी एक कोने में विष्णु तथा दूसरे में शिव अंकित हैं।

यम : वेदों में यम महत्वपूर्ण देवता स्वीकार किए गए हैं। वे दक्षिण दिशा के लोक-पाल हैं और उक्त दिशा की संपूर्ण व्यवस्था करना उन्हीं का कार्य है। खजुराहो में वे दक्षिण की ओर मुख किए मंदिरों के दक्षिण-पश्चिमी कोनों में निऋति के साथ युगल रूप में द्विभंग या त्रिभंग खड़े अंकित किए गए हैं।[56] उनके सिर पर प्रायः उर्ध्वकेश और यदा-कदा छोटे छोटे ऐंठे जूड़ों की पंख के आकार की बनी एक पंक्ति अंक्ति है। वे जटाजूट, जटामुकुट तथा करंड मुकुटयुक्त भी निर्मित किए गए हैं। प्रायः सभी मूर्तियां प्रज्ज्वलित अग्नि के समान विकराल नेत्रों, विकराल बाहर निकली डाढ़ों तथा श्मश्रु युक्त हैं। उनका वाहन महिष पाद-पीठ पर अंकित है। अनुचर रूप में, कहीं कहीं धूमोर्णा और चित्रगुप्त का चित्रण भी मिलता है।

निऋति : निऋति भी वैदिक देवता हैं। वे दक्षिण-पश्चिम दिशा के स्वामी माने जाते हैं। खजुराहो में वे मंदिरों के दक्षिण-पूर्वी कोनों में यम के साथ नग्न, द्विभंग या त्रिभंग खड़े हैं। वे प्रायः सौम्यमुख किंतु यदा-कदा विकराल मुख भी अंकित किए गए हैं। उनके सिर पर जटामुकुट या करंडमुकुट है। कुछ प्रतिमाओं के केश उर्ध्वोन्मुखी हैं। कभी कभी इन केशों को सर्प से आच्छादित अंकित किया गया है। वे सामान्यतः कुंडल, सर्पहार, सर्पकेयूर, सर्पकंकण, सर्पयज्ञोपवीत तथा वन-माला धारण किए हैं। लक्ष्मण मंदिर के उत्तर-पूर्वी खूंटरा मंदिर में देवता के पैरों के पीछे अपने पैर फैलाए तथा एक हाथ से अपना सिर उठाए पादपीठ पर उनका वाहन मानव अर्धशायी मुद्रा में अंकित है। एक अन्य मूर्ति[57] में वह देवता का बायां चरण पकड़े बैठा भी उत्कीर्ण किया गया है। खजुराहो के पार्श्वनाथ मंदिर में उपलब्ध निऋति प्रतिमाएं नरवाहन के स्थान पर श्वानवाहन युक्त हैं। कंदरियां महादेव की वाह्य जंघा में देवता के दोनों वाहन—नर और श्वान, अंकित किए गए हैं। कुछ प्रतिमाओं[58] में देवता के बाएं पार्श्व में पादपीठ पर दाएं हाथ में खांड़ा लिए तथा बाएं हाथ से एक कपाल अपने मुख में लगाए एक अनुचर अंकित है।

वरुण : वैदिककाल में वरुण की गणना देवत्रयी (इंद्र, वरुण, अग्नि) में की जाती थी। वे पश्चिम दिशा के दिक्पाल कहे गए हैं। खजुराहो में वे सामान्यतः मंदिरों के उत्तरी-पश्चिमी कोनों में वायु के साथ आभंग अथवा त्रिभंग खड़े हैं। वे करंड-मुकुट या किरीटमुकुट या जटामुकुट के साथ हार, ग्रैवेयक, कुंडल, अंगद, कंकण,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मेखला, यज्ञोपवीत तथा कौस्तुभमणि धारण किए हैं। वे प्रायः चतुर्भुजी हैं। उनका पहला हाथ वरद मुद्रा में, दूसरा और तीसरा क्रमशः पाश और कमलयुक्त तथा चौथा कमंडलुयुक्त है। उनका वाहन मकर भी उत्कीर्ण किया गया है। कुछ प्रतिमाओं में शंख पुरुष या पूजक मुनि का अंकन मिलता है।

वायु : यह भी एक वैदिक देवता है। वे उत्तर-पश्चिम दिशा के दिक्पाल हैं। खजुराहो के मंदिर के उत्तर-पश्चिमी कोनों पर वे वरुण के साथ द्विभंग या त्रिभंग खड़े हैं। उनके मस्तक पर प्रायः करंडमुकुट, किरीटमुकुट या जटामुकुट में से किसी एक से तथा सामान्य आभूषणों से सज्जित हैं। खजुराहो संग्रहालय में उनकी दो चतुर्भुजी प्रतिमाएं हैं।[59] चारों भुजाओं में से तीन भुजाओं में क्रमशः ध्वज, कमल और पुस्तक है तथा चौथी वरद मुद्रा में है। दूसरी प्रतिमा में भी एक भुजा वरद-मुद्रा है और शेष तीन में ध्वज, पताका तथा कमंडलु है। उसका वाहन मृग पादपीठ पर अंकित है।[60] कहीं कहीं एक चामरधारिणी तथा एक करबद्ध भक्त का अंकन भी मिलता है।

कुबेर : कुबेर को यक्षपति तथा धनपति भी कहा जाता है। वे उत्तर दिशा के दिक्पाल हैं। खजुराहो के मंदिरों के उत्तर-पूर्वी कोनों पर वे ईशान के साथ द्विभंग या त्रिभंग खड़े हैं। उनकी कुछ प्रतिमाएं अर्धपर्यंकासीन मुद्रा में भी मिलती हैं। वे प्रायः करंड मुकुट से सुशोभित हैं, किंतु कभी कभी ऊर्ध्वकेशी भी अंकित किए गए हैं। उनकी सभी प्रतिमाएं सामान्य आभूषणों से सुशोभित हैं। कुछ प्रतिमाओं की पादपीठ पर शंख और पद्म निधियों के द्योतक दो घट अंकित किए गए हैं। यदा-कदा उनका वाहन मेष भी अंकित किया गया है। अनुचरों और भक्तों का चित्रण अत्यंत बिरल है।

खजुराहो में कुबेर की एक आलिंगन मूर्ति[61] भी है, जिसमें चतुर्भुजी कुबेर एक पादपीठ पर ललितासन में विराजमान है। उनके पहले तीन हाथों में क्रमशः चषक, कमलनाल और नकुलक है तथा चौथा हाथ वामोत्संग बैठी पत्नी ऋद्धिदेवी का आलिंगन करता हुआ उनके स्तन पर स्थित है। करंडमुकुट और सामान्य आभूषणों से अलंकृत देवी का दायां हाथ देवता के दाएं कंधे पर रखा हुआ है। देवी के समीप एक अनुचर है। पादपीठ पर शंख तथा पद्म निधियों के प्रतीक दो घट अंकित हैं।

ईशान : ईशान शिव के ही एक विशिष्ट रूप हैं। वे उत्तर-पूर्व दिशा के दिक्पाल कहे गए हैं। खजुराहो के मंदिरों के उत्तर-पूर्वी कोनों पर वे कुबेर के साथ युगलरूप में आभंग या त्रिभंग खड़े हैं। उनकी तीन प्रतिमाएं द्विभुजी तथा शेष चतुर्भुजी हैं। द्विभुजी प्रतिमाओं में उनका दायां हाथ अभय मुद्रा में है या फिर कट्यवलंबित है आर बायां हाथ त्रिशूलधारी या कमंडलुयुक्त है। चतुर्भुजी प्रतिमाओं का पहला हाथ वरद या अभय मुद्रा में, दूसरा त्रिशूलधारी, तीसरा सर्पयुक्त और चौथा कमंडलु-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

युक्त कट्यवलंबित है। करंडमुकुटयुक्त एक प्रतिमा[62] के अतिरिक्त शेष सभी प्रतिमाएं जटामुकुटयुक्त हैं और सामान्य अलंकारों से अलंकृत हैं। प्रतिमाओं के पादपीठ पर प्राय: देवता का वाहन वृषभ अंकित है। कहीं कहीं चामरधारिणी तथा एक एक भक्त का अंकन भी किया गया है।

नवग्रह

भारतीय ज्योतिषशास्त्र में सूर्य, चंद्र, मंगल, बुध, वृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु और केतु ये नौ प्रमुख ग्रह माने गए हैं। ऐसी परंपरा है कि ये ग्रह अपनी स्थिति के अनुसार मानव जीवन को प्रभावित करते हैं। इसीलिए समृद्धि, शांति, वृष्टि, दीर्घायु और शत्रु विनाश की कामना से उनका पूजन सनातन काल से चला आ रहा है। खजुराहो में इन ग्रहों का अंकन दो प्रकार से किया गया है। पहले प्रकार के अनुसार वे सामूहिक रूप से शिलापट्टों में पंक्तिबद्ध उत्कीर्ण हैं। ये शिलापट्ट प्राय: मंदिरों में गर्भगृह द्वार के उत्तरंग में लगाए गए हैं। लक्ष्मण और विश्वनाथ मंदिरों के गौण मंदिरों तथा प्रधान लक्ष्मण, पार्श्वनाथ, जवारी, चतुर्भुज तथा दूलादेव मंदिरों में वे इसी प्रकार दृष्टिगोचर होते हैं। नवग्रहों के अंकन की दूसरी पद्धति के अनुसार उन्हें आदिनाथ प्रतिमाओं की पीठिका पर दर्शाया गया है।

पहली पद्धति के अनुसार खजुराहो में नवग्रह सामूहिक रूप से शिलापट्टों में पंक्तिबद्ध उत्कीर्ण हैं। इनका निर्माण नियमित पूजा के लिए नहीं अपितु वास्तु में प्रयोग के लिए हुआ है। नवग्रह प्रतिमाएं प्राय: खड़ी मिलती हैं,[63] किंतु खजुराहो में पंक्तिबद्ध आसनस्थ प्रतिमाओं का निर्माण भी बड़ी संख्या में हुआ। पहले प्रकार के पट्टों में सूर्य समभंग और राहु-केतु को छोड़कर अन्य ग्रह द्विभंग या त्रिभंग खड़े अंकित हैं। दूसरे प्रकार के पट्टों[64] में सूर्य उत्कुटकासन (पद्मासन भी) और राहु-केतु को छोड़कर शेष सब ग्रह ललितासन में विराजमान हैं। दोनों प्रकार में राहु के शरीर का ऊपरी भाग तथा सर्पपुच्छ युक्त केतु का आवक्ष अंकन किया गया है। राहु की प्रतिमाएं प्राय: विस्फारित नेत्र, ऊर्ध्वकेश तथा विकराल मुखवाली हैं, किंतु कहीं कहीं वे सौम्य मुखाकृति पाए जाते हैं।

प्राय: सभी ग्रह प्रतिमाएं द्विभुजी हैं। सूर्य के दोनों हाथों में कमल हैं। शेष अन्य ग्रहों (राहु-केतु के अतिरिक्त) का दायां हाथ अभयमुद्रा में है और बाएं हाथ में कमंडलु है। राहु के हाथ तर्पण मुद्रा में तथा केतु के अंजलि मुद्रा में अंकित हैं। लक्ष्मण मंदिर के गर्भगृह के उत्तरंग में मंगल, गुरु, शनि और केतु को चतुर्भुज अंकित किया गया है। इसी प्रकार एक अन्य पट्ट (खजुराहो संग्रहालय क्र० 436) में नवग्रहों के आदि, मध्य और अंत में एक एक रथिका प्रदर्शित की गई है। सूर्य और गुरु को पद्मासन मुद्रा में, राहु अर्धकाय, केतु सर्पपुच्छयुक्त तथा अन्य

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

ग्रहों को त्रिभंग मुद्रा में उत्कीर्ण किया गया है।

सूर्य किरीटमुकुट, राहु-केतु को छोड़कर अन्य ग्रह प्राय: जटामुकुट या करंड मुकुट के साथ सामान्य खजुराहो अलंकारों से युक्त हैं। राहु ऊर्ध्वकेशी और केतु के शीर्ष पर तीन, पांच या सात फणों का घटाटोप प्रदर्शित है। राहु-केतु ग्रहों के अतिरिक्त या केवल केतु के अतिरिक्त प्राय: सभी ग्रह पृथक पृथक प्रभामंडलयुक्त अंकित हैं।

नवग्रहों के अंकन की दूसरी पद्धति के अनुसार खजुराहो में आदिनाथ की प्रतिमाओं की पीठिका पर उन्हें प्रदर्शित किया गया है। शांतिनाथ मंदिर शांतिनाथ प्रतिमा की बाईं ओर आदिनाथ का एक छोटा सा पद्मासन बिंब है जिसमें नवग्रह की यह स्थिति देखी जा सकती है। मंदिर क्रमांक 27 के मूलनायक आदिनाथ की पीठिका में तो नवग्रह बड़े मनोरम प्रकार से ललितासन में विराजमान है। उपानह धारण किए हुए सूर्य के दोनों हाथों में कमल हैं। राहु और केतु अर्धकाय हैं। इस समूह की बाईं ओर दो पुरुष और दो स्त्रियां अंकित की गईं हैं। संभवत: ये प्रतिमाएं प्रतिष्ठापक दंपत्तियों की हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि जैन धर्म में इस प्रकार के अनुष्ठान विग्रह बनाने की परंपरा व्यापक रूप से प्रचलित थी। कभी कभी ग्रहों की अर्चना के लिए पृथक से अनुष्ठान मंडप या अनुष्ठान चैत्यालय बनाने की भी परंपरा प्रचलित रही है। इस संदर्भ में खजुराहो के शांतिनाथ मंदिर के प्रांगण में बाईं ओर के मंदिर के मंडप का उल्लेख महत्वपूर्ण है। यहां नवग्रह के साथ सत्ताइस नक्षत्रों का भी अंकन मिलता है। चतुर्भुज मंदिर की विलक्षण विष्णु प्रतिमा के सिर के पीछे प्रभावली के स्थान पर एक अत्यंत अलंकृत मकरतोरण है जिसके आधे भाग में नवग्रहों का पंक्तिबद्ध अंकन उपलब्ध है।

सोलह स्वप्न

जैन कथा साहित्य में स्वप्नों का बड़ा महत्व है। इनके द्वारा आगामी महत्वपूर्ण घटनाओं का संकेत मिलता है। सम्राट चंद्रगुप्त मौर्य को स्वप्नों के द्वारा ही देश-काल की भावी दुर्गति का पूर्वाभास हुआ था। जैन पुराणों के अनुसार तीर्थंकर के जन्म के पूर्व उनकी जननी को सोलह स्वप्न दिखाई दिए थे जिनके आधार पर यह निश्चय हुआ था कि उन्हें त्रैलोकेश्वर तीर्थंकर की माता बनने का सौभाग्य प्राप्त होगा। शास्त्रों में इन्हें एक क्रम से इस प्रकार गिनाया गया है :

सुरकुंजरसम कुंजर, धवल धुरंधरो।
केहरि-केशर-शोभित नख शिख सुंदरो।
कमला-कलस-न्हवन, दुई दाम सुहावनी।
रवि-ससि-मंडल, मधुर मीन-जुग पावनी॥

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पावनि कनक-घट-जुगम पूरन, कमलकलित सरोवरो।
कल्लोलमालाकुलित सागर, सिंहपीठ मनोहरो ॥
रमणीक अमर विमान, फणपति भुवन, रवि-छवि छाजई।
रुचि रतन-रासि दिपंत, दहन सु तेजपुंज विराजई ॥'65

खजुराहो में दस-बारह जैन द्वारतोरणों पर सोलह स्वप्नों का मनोरम और चित्ताकर्षक अंकन मिलता है। यह अंकन द्वार की सबसे ऊपरी तोरण शिला पर, मंडप के ठीक नीचे अत्यंत सुरुचिपूर्ण ढंग से किया गया है। सर्वप्रथम तीर्थंकर की माता को शयन करते हुए दिखाया है। वे इन स्वप्नों में लीन हैं और चार देवियां उनकी सेवा-सुश्रूषा करती दिखाई गई हैं। इसके समीप अगले कोष्ठक में राजा और रानी आमने-सामने बैठे हैं, जहां रानी स्वप्नों का अर्थ पूछ रही हैं और राजा उनका प्रतीकार्थ समझा रहे हैं। राजा के पीछे एक सेवक खड़ा है। इसके बाद स्वप्नों की श्रृंखला अंकित की गई है। पहले स्वप्न में गजराज, दूसरे में ककुभ सहित वृषभ, तीसरे में सिंह, चौथे में लक्ष्मी, पांचवें में दो मालाएं, छठे और सातवें स्वप्न में सूर्य तथा चंद्र, आठवें में मीन युग्म, नवें में स्वर्ण कलश, दसवें में कमलों से भरा हुआ सरोवर और ग्यारहवें स्वप्न में उत्ताल तरंगों से युक्त समुद्र अंकित किया गया है। बारहवें स्वप्न में सिंहासन, तेरहवें में स्वर्ग का विमान, चौदहवें में धरणेंद्र का भवन और पंद्रहवें स्वप्न में रत्नों की राशि प्रदर्शित है। अंतिम सोलहवें स्वप्न में निर्धूम अग्निशिखा का अंकन है।

विद्यमान आदिनाथ मंदिर के सामने प्राचीन शिल्पावशेष से निर्मित अर्वाचीन मंदिर के मंडप में सोलह स्वप्नों का एक अत्यंत सुंदर शिलाफलक लगा हुआ है। पार्श्वनाथ मंदिर में मंडपवितान के नीचे स्वप्नश्रृंखला का अंकन है। इसी प्रकार के अनेक फलक यहां के अर्वाचीन मंदिरों में लगे दिखाई देते हैं। घंटई मंदिर के मंडप में भी यह स्वप्नावलि इसी क्रम से उत्तीर्ण की गई है।

विद्यादेवियां

जन मूर्तिकला में विद्यादेवियों का स्थान महत्वपूर्ण है। उनकी संख्या सोलह बताई गई है। किसी भी अन्य भारतीय धर्म में उनकी संख्या इतनी विस्तृत नहीं है। इन सोलह देवियों के अतिरिक्त एक और प्रधान देवी है जिसे श्रुतदेवी या सरस्वती कहते हैं। इस देवी की कल्पना प्रायः वैसी ही है, जैसी हिंदू धर्म में। उनके नाम 'श्रुतदेवी' से ही प्रकट होता है कि वे वेदों की अधिष्ठात्री देवी ब्रह्मा की पत्नी ब्रह्माणी हैं। श्रुतदेवी या सरस्वती के अतिरिक्त सोलह विद्यादेवियां चौबीस शासनदेवियों में सम्मिलित मानी जाती हैं। उनके नाम तथा लक्षण एक-दूसरे से अभिन्न बताए गए हैं। उनके नाम इस प्रकार हैं :

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

1. रोहिणी
2. प्रज्ञप्ति
3. वज्रश्रृंखला
4. वज्रांकुशा
5. अप्रतिचक्रा
6. पुरुषदत्ता
7. काली
8. महाकाली
9. गौरी
10. गांधारी
11. महाज्वालिनी
12. मानवी
13. बैरोटिका
14. अछुप्ता
15. मानसी
16. महामानसी

खजुराहो के आदिनाथ मंदिर की वाह्यभित्तियों पर निर्मित सोलह देवकुलिकाओं में ये देवियां अपने विविध लांछनों सहित विद्यमान हैं। इनमें से कुछ देवकुलिकाओं की प्रतिमाएं कालदोष से नष्ट हो गई प्रतीत होती हैं। शेष विद्यमान विद्यादेवियों का अद्यावधि समुचित अभिज्ञान नहीं हो सका।

अलंकरण प्रतिमाएं

मंदिरों में देवी-देवताओं के साथ अलंकरण तथा सज्जा के लिए विविध मूर्ति अभिप्रायों तथा प्रतीकों को अंकित किया जाता है। खजुराहो में इस प्रकार के अलंकरण की कमी नहीं है। अलंकरण की इन प्रतिमाओं को तीन भागों में बांटा जा सकता है: पहले वर्ग में सुरसुंदरियों, किन्नरबालाओं तथा नृत्यमग्ना अप्सराओं की विख्यात प्रतिमाएं हैं जिनकी रूपराशि समूचे खजुराहो के अस्तित्व पर छाई प्रतीत होती है। दूसरे वर्ग में गंधर्व तथा विद्याधर हैं जो देवप्रासादों की वाह्यभित्तियों पर सबसे ऊपरी पंक्ति पर दृष्टिगोचर होते हैं। तीसरे वर्ग में व्याल प्रतिमाएं आती हैं। इसी वर्ग में जगती तथा जंघा की वे प्रतिमाएं भी रखी जा सकती हैं जिनमें कलाकार ने मानव जीवन के श्वेत और श्याम पक्षों का अंकन किया है :

सुरसुंदरी प्रतिमाएं : इन्हें अप्सराएं भी कहते हैं। इनकी संख्या विपुल है। ये मंदिरों की जंघाओं और स्तंभों पर, वितान के आलंबनबाहुओं में तथा मंडप-महामंडप के अर्धस्तंभों के बीच अंतराल में निर्मित की गई हैं। उनको सर्वांग-सुंदर और पूर्णयौवना अप्सराओं के रूप में अनेक चित्ताकर्षक भाव-भंगिमाओं में चित्रित किया गया है। देवताओं की अनुचरियों के रूप में उन्हें अंजलि मुद्रा में या कमल पुष्प, दर्पण, जलकुंभ, वस्त्रालंकार आदि भेंट लिए हुए प्रदर्शित किया गया है। अधिकांश अप्सराएं सामान्य मानवीय संवेगों तथा क्रियाकलापों को व्यक्त करती हुई अंकित हैं। इन प्रतिमाओं में उन अनेक नायिकाओं के मूर्तरूप दृष्टव्य हैं जिनका वर्णन भारतीय साहित्य में उपलब्ध है। इन अप्सराओं में स्वयं

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

को विवस्त्र करती विवृतजघना, भीगी वेणियों से जल निचोड़ती कर्पूरमंजरी, शिशु को दुलारती जननी, दर्पण में मुख देखती दर्पणा, नेत्रों में काजल या सुरमा लगाती सुनयना, अंगड़ाई लेती हुई अलसितवदना, पत्र पढ़ने या लिखने में निमग्न प्रोषितपतिका, ललाट पर कुंकुम और पैरों में महावर रचाती श्रृंगारिका, पैरों से कांटा निकलवाती विपथगा, पैरों में नूपुर बांधती हुई नृत्योद्यता आदि के अंकन अत्यंत स्वाभाविक, मर्मस्पर्शी और अविस्मरणीय हैं।

नृत्यमग्ना सुंदरी की एक कलापूर्ण प्रतिमा का अंकन आदिनाथ मंदिर की वाह्यभित्ति पर मिलता है। नर्तकी की सन्नद्धता और गति जीवंत प्रतीत होती है। पार्श्वनाथ मंदिर के मंडप में सद्यस्नाता सुरवाला की केशराशि से टपकते हुए जलबिंदुओं को मुक्ताकण समझकर उस पर झपटते हुए हंस का अंकन अत्यंत मनोरम है। इसी मंदिर की अंत:परिक्रमा की पिछली भित्ति पर एक सुंदरी पैर में कांटा लग जाने से तिलमिलाकर साथ चलने वाली सहेलियों को रुकने का संकेत कर रही है। दूसरे फलक में नाई द्वारा कांटा निकालने का अंकन है जिसमें सुंदरी की भग्न मुद्रा, नाई का सेवा तत्पर भाव तथा उसकी पेटिका प्रदर्शित है।

पांवों में घुंघरू बांधती हुई नृत्योद्यता अप्सरा का अंकन पार्श्वनाथ मंदिर की उत्तरी जंघा पर बड़े प्रभावकारी ढंग से हुआ है। इस मूर्ति में अप्सरा की छरहरी सुकुमार देहयष्टि इस प्रतिमा पंक्ति की समस्त प्रतिमाओं में अनोखी ही दिखाई देती है। ऐसा प्रतीत होता है जैसे किसी विदेशी नर्तकी से प्रेरणा पाकर कलाकार ने इस प्रतिमा का सृजन किया हो। खड़ी हुई नर्तकी अपना एक पैर घुटने से मोड़कर उसमें नूपुर बांध रही है। पास ही उसका सेवक दूसरा नूपुर हाथ में लिए खड़ा दिखाया गया है। नर्तकी के अधोभाग पर साड़ी और वक्ष पर कंचुकी तथा सिर पर छोटा सा मुकुट है।

इसी मंदिर की दक्षिणी भित्ति पर पैर में आलता लगाती हुई, आंखों में काजल आंजती हुई दो बहुत प्रसिद्ध अप्सरा मूर्तियां अंकित हैं। इन सभी मूर्तियों के ये क्रियाकलाप नृत्य की विभिन्न मुद्राओं के प्रतीक हैं।

वितान की आलंबन वाहुओं पर जितनी भी अप्सरा प्रतिमाओं का अंकन खजुराहो में मिला है प्राय: सभी नृत्य भंगिमाओं के विविध प्रकारों का प्रदर्शन करता है। इनमें भी हाथ से गेंद फेंकती हुई कंदुक क्रीड़ा भंगिमा और शालभंजिका प्रतिमाएं प्रमुख हैं। पार्श्वनाथ मंदिर की पश्चिमी जंघा पर एक अप्सरा द्वार पर मंगल आलेखन करती हुई दिखाई गई है। उसके एक हाथ में रंग पात्र है और वह दूसरे हाथ से अपने घर के द्वार पर चित्रांकन कर रही है। ऐसा चित्रांकन किसी पर्व पर या किसी पारिवारिक हर्ष के समय किया जाता रहा है। हर्ष और प्रमोद की अद्‌भुत आभा यहां अप्सरा के मुख पर कलाकार ने अंकित की है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कंदरिया महादेव मंदिर की उत्तर पूर्वी भित्ति पर वेणु बजाती हुई एक सुर-सुंदरी अंकित है। नर्तकी का मुख दीवार की ओर है और दर्शक को उसका केवल पृष्ठभाग ही दिखाई देता है। इस मूर्ति में केश सज्जा, अलंकरण, शरीर का सौष्ठव तथा लोच इस कुशलता के साथ अंकित हुए हैं कि मुख छवि पर दृष्टि पहुंचे बिना ही नर्तकी का रूप और उसकी जीवंत मुद्रा दर्शक भो प्रभावित कर जाती है।
विद्याधर और गंधर्व : जंघा पर प्रतिमाओं की ऊपरी तीसरी पंक्ति में प्राय: गगन-विहारी विद्याधरों, किन्नरों और गंधर्वों का अंकन खजुराहो मंदिरों में हुआ है। लक्ष्मण और पार्श्वनाथ मंदिरों में इनकी पंक्तिबद्ध उपस्थिति हमें मिलती है। इन पंक्तियों में विद्याधर युगल अपने पैर घुटनों में मोड़े उड़ते हुए प्रदर्शित किए गए हैं उनकी सहचरियां भी कई स्थानों पर उनके साथ अंकित की गई हैं। विद्याधरों के हाथों में प्राय: पुष्पगुच्छक, पुष्पहार और द्रुमलताएं अंकित की गई हैं, किंतु कहीं कहीं हाथों में आयुध लिए हुए इन्हें क्रीड़ारत भी दिखाया गया है। किन्नर और गंधर्व प्रतिमाएं भी एकल और युगल दोनों प्रकार से उत्कीर्ण की गई हैं। इनके हाथों में भिन्न भिन्न प्रकार के वाद्य दिखाए गए हैं या फिर इन्हें नृत्य-मुद्रा में अंकित किया गया है।

व्याल प्रतिमाएं

इस वर्ग में पशु-पक्षियों के प्रतीकवाली प्रतिमाएं हैं। पशुओं में सबसे अधिक शार्दूल या व्याल की मूर्तियां मिलती हैं जिन्हें प्राय: सींगों वाले शेर के रूप में चित्रित किया गया है। कला में प्रदर्शित यह एक कल्पित पशु है जिसकी पीठ पर एक मानव सवार है जो पशु पर प्रहार करके उसे वश में करता हुआ दिखाया गया है। पशु ने अपने पैरों के नीचे एक मानव आकृति को दबा रखा है। कहीं कहीं इस विचित्र पशु को मानवाकृति के स्थान पर अश्व, ऊंट आदि को भी दबोचे हुए प्रदर्शित किया गया है। नीचे दबी आकृति किसी न किसी अस्त्र द्वारा आक्रमण का प्रतिकार करती दिखाई जाती है। व्यालों को सामान्यत: मंदिरों की जंघा के भीतर धंसे मार्गों में, शुकनासिका में और मंदिरों के अंत:भागों में बड़ी संख्या में उत्कीर्ण किया गया है। सुरसुंदरियों की तरह, खजुराहो मूर्तिकला का यह सर्वाधिक विशिष्ट एवं लोकप्रिय अभिप्राय है जो अपने में एक गूढ़ रहस्य छिपाए है।

खजुराहो कला में इस शार्दूल या व्याल के अनेक रूप मानव (नरव्याल), शुक (शुकव्याल), वराह (शूकरव्याल), गज (गजव्याल), सिंह (सिंहव्याल), अश्व (अश्वव्याल), मेढ़ा (मेढ़ाव्याल), हिरण (मृगव्याल), वृषभ (वृषभव्याल), भालू (ऋक्षव्याल) आदि मस्तकों से युक्त अंकित किए गए हैं। इन व्याल बिंबों के गूढ़ रहस्य को उजागर करने के अनेक प्रयत्न किए गए हैं। कोई इसे पौराणिक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पशु मानते हैं और कोई इसके नाना रूपों में असुरों की कल्पना कर देवप्रासादों में असुरों की उपस्थिति का भान कराते हैं। अन्य इसे पौरुष और शक्ति का प्रतीक मानकर कहते हैं कि शार्दूल अपनी कठोरता के द्वारा सुरसुंदरियों के अंगों की मृदुता को अपनी भयंकरता के द्वारा उनकी मनोहरता को प्रदर्शित करने में विपरीत परिप्रेक्ष्य प्रस्तुत करते हैं।

व्याल प्रतिमाएं मानव की अमानुषिक भावनाओं का प्रतिनिधित्व करती हैं, जिनकी पाशविक वृत्तियों से मानवता दबी हुई तो प्रतीत होती है, किंतु पराजित नहीं। वह अपने अस्तित्व के लिए सतत संघर्षशील है। उसका संयम और विवेक इस पाशविक उत्पात पर नियंत्रण करता है। इस विवेक का प्रतीक वह छोटी सी मानव आकृति है जो पशु की पीठ पर सवार है। पशु की विभिन्न मुखाकृतियों के संदर्भ में नीरज जैन[66] की यह व्याख्या सत्य के निकट प्रतीत होती है कि जब हम क्रोध में चूर होते हैं तब सिंह या व्याघ्र की आकृति हमारी विकारी मनोवृत्ति की परिचायक है। शक्ति के मद में मतवाले व्यक्ति की भावना हाथी की आकृति से उजागर हो जाती है। काम वासना को व्यक्त करने के लिए अज या मेंढ़ा का रूप पर्याप्त है और मन की चपलता तथा वेग अश्व के द्वारा समझा जा सकता है। मायाचारी के मधुर वार्तालाप में लुभाकर जब अपनी स्वार्थ साधना की जाती है, तब तोते की आकृति उसका अच्छा प्रतीक कही जा सकती है। जहां अपनी वासनापूर्ति के लिए साधु का ही वेश धारण कर लिया जाए, वहां मानव मुखाकृति पशु का अंकन उसका छद्म रूप प्रकट करता है। इस प्रकार व्यालों की विभिन्न मुखाकृतियों का रहस्य सहज ही उजागर हो जाता है।

मिथुन मूर्तियां

मिथुन मूर्तियों का उल्लेख किए बिना खजुराहो का वर्णन पूरा नहीं कहा जा सकता। सच तो यह है कि एक साधारण दर्शक के कानों में खजुराहो का नाम आने के साथ ही उसकी कल्पना में मिथुन मूर्तियां साकार होने लगती हैं। खजुराहो के जैनेतर मंदिरों में प्रायः चतुर्दिक एकाधिक स्थानों पर अनेक सीधी और अटपटी मुद्राओं में संभोग से समाधि की ओर जाती हुई मिथुन मूर्तियों का अंकन है। इस श्रृंखला की प्रत्येक कड़ी, प्रत्येक आकृति आकर्षक है जिसे देखने की लालसा कभी तृप्त नहीं होती। वे दृष्टि को बांध लेती हैं और उन्हें टकटकी लगाकर देखते हुए मानव आत्मविभोर हो जाता है।

खजुराहो का प्रत्येक मिथुन एक उत्कृष्ट कृति है जिसमें मानवीय प्रेम के मांसल पक्ष को मूर्तरूप दिया गया है और युगल अपने तरंगित अंगविक्षेप और शरीर के उन्मादक प्रदर्शन के बावजूद एक तात्विक पूर्णता में घुल जाते हैं। इन कामोद्दीपक

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मूर्तियों को देखकर दर्शक उनकी वाह्य परिधि में खो जाता है, किंतु विरले ही दर्शक उनके निहित अभिप्राय तक पहुंच पाते हैं। प्रो० ए० एल० बाशम[67] का कथन है कि हमारे विचार में भारतीय कला की सामान्य प्रेरणा परमात्मा की खोज में उतनी नहीं है जितनी कलाकार द्वारा प्राप्त संसार के आनंद में। कला मुख्य रूप से उन संवेदनशील कलाकारों के हाथ से निसृत हुई जिन्होंने वास्तुकारों के मूर्ति निर्माण संबंधी सभी शास्त्रीय निर्देशों का पालन किया। वे उस संसार को पूरी तीव्रता से जानते थे, जिसमें उन्होंने आत्माभिव्यक्ति की। कामुकता का नग्न नृत्य करने वाली इन हृदयग्राही प्रतिमाओं के निर्माण का क्या अभिप्राय है ? अब हम इस पर विचार करेंगे।

खजुराहो की मूर्तिकला में मिथुन मूर्तियों का अध्ययन करने से पूर्व यह प्रासंगिक होगा कि उनके प्रकारों पर विचार कर लिया जाए। डा० विद्याप्रकाश[68] ने खजुराहो की मिथुन मूर्तियों को छः वर्गों में रखा है :

1. नग्नता प्रदर्शित और कामुक संकेत करती हुई अप्सराएं।
2. दंपति या युगल।
3. कामोत्तेजक चुंबन और आलिंगन करते हुए युगल।
4. मैथुनरत युगल।
5. विलक्षण मुद्राओं में मैथुनरत स्त्री-पुरुष।
6. पशु-मैथुन।

प्रथम वर्ग में सुंदर अप्सराएं अंकित हैं। लक्ष्मण और विश्वनाथ मंदिरों में अनेक ऐसी मूर्तियां हैं जो अपने शरीर को निरावरण रूप में प्रदर्शित करती हैं। दूसरे वर्ग में दंपति हैं जो एक दूसरे का प्रगाढ़ आलिंगन करते हुए उत्कीर्ण किए गए हैं। इस वर्ग में अधिकतर आसनस्थ देवी-देवताओं का अंकन हुआ है। तृतीय वर्ग में स्त्री और पुरुष का आलेखन कामोत्तेजक चुंबन, आलिंगन करते और एक दूसरे को दुलारते हुए हुआ है। चौथे वर्ग में विविध मुद्राओं में मैथुनरत युगल अंकित हैं। ऐसे अंकन सामान्यतः खजुराहो मंदिरों की वाह्य परिक्रमा की भित्ति पर, जगती की शोभा पट्टिकाओं पर, अधिष्ठान और अंतःप्रदक्षिणापथ में मिलते हैं। पांचवे वर्ग में विलक्षण मुद्राओं में मैथुनरत स्त्री-पुरुष है। इन मुद्राओं में विपरीत रति के भी अनेक अंकन हैं। कई स्थानों पर एक पुरुष दो या तीन स्त्रियों के साथ क्रीडारत दिखाए गए हैं और कई जगह एक स्त्री के लिए दो पुरुषों की आतुरता प्रदर्शित की गई है। मैथुन के ये चित्र कंदरिया महादेव और विश्वनाथ मंदिरों में बहुलता से अंकित किए गए हैं। अंतिम वर्ग में पुरुष या स्त्री पशुओं के साथ मैथुनरत दर्शाए गए हैं। पशुओं में रीछ, गधा, घोड़ी, कुत्ता, हिरणी आदि उल्लेखनीय हैं। इस प्रकार का अंकन लक्ष्मण, कंदरिया महादेव और विश्वनाथ मंदिरों

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

की प्रदक्षिणाओं में तथा लक्ष्मण मंदिर की जगती पर शोभापट्टिकाओं में विशेषरूप से दिखाए गए हैं।

उपर्युक्त अंकन अत्यंत रोचक, किंतु विवादास्पद हैं। विद्वानों ने इस ओर पर्याप्त ध्यान दिया है और अनेक व्याख्याएं प्रस्तुत की हैं। डा० तारापद भट्टाचार्य ने भारतीय मंदिरों में मिथुन मूर्तियों के अंकन पर मनोरंजक प्रकाश डाला है। उनका कथन है कि वास्तुकारों ने उनके निर्माण में पूर्णतया शास्त्रीय नियमों का पालन किया है। वास्तुशास्त्रों में मिथुन मूर्तियों को शुभ माना गया है। लेकिन इसका कारण क्या है? ब्राह्मण साहित्य इस संदर्भ में रोचक प्रकाश डालता है। समस्त उपासना का ध्येय आद्यपूर्णता की पुनः स्थापना है, जिसका महान प्रतिरूप और प्रतीक भारत में मिथुन है। बृहदारण्यक उपनिषद में कितनी ही शदियों पूर्व कहा गया था: 'प्रियतमा के आलिंगन में बद्ध मनुष्य को भीतर या बाहर की कुछ सुध नहीं रहती।' यहां मिथुन आत्मा और ब्रह्म के तादात्म्य का प्रतीक है।

भारतीय संस्कृति धर्मप्रधान है जिसमें किसी समय यज्ञों की प्रधानता थी। इन यज्ञों का प्रमुख उद्देश्य उत्पन्न करना तथा संपन्न बनाना था। लेकिन उत्पत्ति अकेले संभव नहीं है, उसके लिए युगल की आवश्यकता है। इसीलिए शतपथ ब्राह्मण में बताया गया है कि यजमान का यज्ञ बिना उसकी पत्नी के पूर्ण नहीं हो सकता।

शाक्तदर्शन पूर्णतया पुरुष और स्त्री मिलन के सिद्धांत पर आधारित है। शाक्तों के अनुसार उमा माता है और उमा-महेश सृष्टि के सर्जक हैं। शाक्त मतानुयायी मुख्यरूप से दो वर्गों—दक्षिणमार्गी और वाममार्गी—में विभक्त हैं। वाममार्गी अपनी पंचमकार पर आधारित साधना को 'गुह्य साधना' नाम देते हैं। प्रो० ए० एल० बाशम ने तांत्रिक विद्याओं का इस प्रकार संक्षिप्तीकरण किया है: 'तांत्रिक संस्कारों में हिंदूधर्म की समस्त सर्वज्ञात निषेधाज्ञाओं का उल्लंघन सम्मिलित था। दीक्षितजनों के छोटे छोटे समूह रात्रि को बहुधा किसी मंदिर अथवा मिनीगृह में, परंतु अधिकतर किसी श्मशान भूमि में, मृतक की अस्थियों के मध्य समवेत हुआ करते थे। पृथ्वी पर अंकित की हुई एक वृत्ताकार रेखा (यंत्रमंडल) के भीतर आसीन होकर यह समूह एक मंडलाकृति का रूप धारण कर लेता था। समूह का सदस्य बनने के लिए वर्ग का कोई भेद न था। नियमित सांध्योपासना, देवसंतुष्टि एवं अन्य क्रियाओं के उपरांत समूह के लोग पंच मकारों में लीन होते थे। ये पंच मकार थे: मद्य, मांस, मत्स्य, मुद्रा तथा मैथुन। पांच तत्वों की पूजा के साथ इन पंच मकारों की रहस्यात्मक संगति थी। इसी पूजा के साथ समापन उत्सव हुआ करता था। कुछ तंत्रवादियों में अंतिम मकार के अंतर्गत मिश्रित इंद्रिय भोग सम्मिलित था, जबकि कुछ लोग अपनी पत्नियों तक ही उसे सीमित रखते थे।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उपर्युक्त साधना पद्धति में पंचमकारों की प्रधानता है। इसके अनुयायी आनंदोपभोग को अपनी साधना का एक अंग मानते हैं जिससे इंद्रिय तृप्ति द्वारा परमानंद की अनुभूति होती है। पूर्व कौल 'श्री चक्र' के भीतर स्थित योनि की पूजा करते हैं, परंतु उत्तर कौल कामिनी की प्रत्यक्ष योनि के पूजक हैं तथा पंच-मकारों का प्रत्यक्ष प्रयोग करते हैं।

मद्यं मांसं च मीनं च मुद्रा मैथुनमेव च।
मकारपंचकं प्राहुर्योगिना मुक्तिदायकम् ॥

ये पंच मकार निम्नलिखित है :

मद्य : ब्रह्मरध्र में स्थित सहस्रदल से क्षरित सुधा को मद्य कहते हैं। उसे पीने वाला मद्यप कहलाता है।

मांस : जो मनुष्य पुण्य और पापरूपी पशुओं को ज्ञानरूपी खड्ग से मारकर अपने मन को ब्रह्म में लीन करता है, वही मांसाहारी है।

मत्स्य : शरीरस्थ इड़ा तथा पिंगला नाड़ियों का नाम गंगा-यमुना है। इनमें प्रवा-हित होने वाले श्वास-प्रश्वास मत्स्य हैं।

मुद्रा : असत संग के त्याग का नाम मुद्रा है। सत्संग के प्रभाव से मुक्ति मिलती है।

मैथुन : सहस्रार में स्थित शिव का कुंडलिनी या सुषुम्ना तथा प्राण से सम्मिलन कराना मैथुन है।

कालांतर में पंच मकारों का उपर्युक्त अर्थ लुप्त होकर उसका भोगपरक स्थूल अर्थ प्रचलित हुआ, जैसाकि राजशेखर की कर्पूरमंजरी से ज्ञात होता है :

मंताण तंताण ण किं पि जाणे
माणं च णो किं पि गरुप्पसाओ।
जज्जं पिआओं महिलारमामो
मोक्खं च जागो कुल मग्ग लग्गो ॥
रण्डा चण्डा दिक्खिआ धम्मदारा
मज्जं मंसं पिज्जए खज्जए अ,
भिक्खा भोजं चम्मखण्डं च सेज्जा
कोलोधम्मों कस्सणो माई रम्मा ॥

अर्थात 'हम मंत्र-तंत्रादि कुछ नहीं जानते, न गुरु कृपा से हमें कोई ज्ञान प्राप्त है। हम लोग मद्यपान करते हैं और स्त्रीगमन करते हैं तथा कुलमार्ग का पालन करते हुए मोक्ष को प्राप्त होते हैं। कुलटाओं को दीक्षित कर हम भोग्या बना लेते हैं। हम लोग मद्य पीते तथा मांस खाते हैं। भिक्षान्न ही हमारा भोजन और चर्मखंड ही शय्या है। ऐसा कौलधर्म किसे रमणीय प्रतीत नहीं होता।'

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इस प्रकार हम देखते हैं कि खजुराहो वास्तु में मिथुन मूर्तियों के समावेश के लिए बहुत कुछ तत्कालीन परिस्थितियां उत्तरदायी थीं। चंदेल शासकों के समृद्धि-काल में निर्मित इन देवप्रासादों को उनसे अछूता कैसे रखा जा सकता है? कीर्ति-वर्मा चंदेल के शासनकाल में लिखित और राजसभा में अभिनीत 'प्रबोधचंद्रोदय' नाटक से इस क्षेत्र में कौल-कापालिक मत प्रचलित होने की पुष्टि होती है। खजु-राहो से अनतिदूर स्थित जटकरा नामक स्थान है। संभवत: चंदेल युग में यही यतियों का एक विशाल केंद्र था और वही यतिकर शब्द बिगड़कर अब जटकरा बन गया है।

चंदेल साम्राज्य में देवदासी संस्था की विद्यमानता के स्पष्ट संकेत मिलते हैं। यह संस्था प्राचीनकाल से लेकर पूर्व मध्ययुग तक बराबर अस्तित्व में थी। देव-दासियों की नियुक्ति देवों को नृत्य से प्रसन्न करने के लिए होती थी। कालिंजर स्तंभलेख से ज्ञात होता है कि नीलकंठ मंदिर में महानाचनी पद्मावती नियुक्त थी। क्योंकि वह प्रधान नृत्यांगना थी अत: निश्चय ही उसकी अनेक सहायिकाएं रही होंगी। निस्संदेह खजुराहो मंदिरों में भी इसी प्रकार की अनेक नर्तकियां नियुक्त रही होंगी। टामस[69] का कथन है कि उनमें से अधिकांश साधारण नर्त-कियां थीं। उत्सवों के समय भारी संख्या में यहां आनेवाले तीर्थयात्री और दर्शक उनके साथ कालयापन करते थे। ऐसा प्रतीत होता है कि मध्यकाल में मंदिर केवल पूजा स्थान न होकर सामाजिक, सांस्कृतिक और कलात्मक जीवन की धुरी थे। इनके विशाल मंडपों का प्रयोग धार्मिक तथा दार्शनिक गोष्ठियों के साथ संगीत नृत्य, नाटक आदि क्रियाकलापों के लिए भी होता था। शिल्पियों ने अपने युग के मानव जीवन के सभी संदर्भ इन प्रस्तरों पर सजीव कर दिए। यह उनके युग की मांग थी; उनके समाज ने इनकी संस्तुति की थी और धर्म ने इसकी स्वीकृति दी थी। प्रसिद्ध फ्रांसीसी भारतविद प्रो० सिल्वां लेवी के शब्दों में 'संभोग की परावृत्ति में सर्वोपरि महानता अर्थात वृहद सुख की प्राप्ति होती है और अपनी पत्नी की ओर बिना किसी उग्र आसक्ति के देखता है।'

संदर्भ

1. डे० हि० आ०, पृ० 386-87.
2. वही, पृ० 287.
3. गीता, 18. 61.
4. नारायणीय पर्व.
5. बढ़े हुए बीस नाम इस प्रकार हैं: माधव, पुरुषोत्तम, अधोक्षज, गोविंद, विष्णु, मधुसूदन, अच्युत, उपेन्द्र, त्रिविक्रम, नृसिंह, जदार्दन, वामन, श्रीधर, हृषीकेश, पद्मनाभ, दामोदर,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

हरि और कृष्ण.

6. 4. 7-8.
7. डे० हि० आ०, पृ० 389.
8. मत्स्य: कूर्मो वराहश्च नरसिंहोऽथवामन.।
रामो रामश्च कृष्णश्च बुद्धः कल्किश्च ते दश ॥ अग्नि० 49.5-17.
दे० गरुड़, उत्तर भाग, 20. 31; वराह पु० 4. 2; मत्स्य पु० 46. 49-50.
9. मल्हार, पृ० 10.
10. खजुराहो संग्रहालय, क्र० 21; वही, क्र० 24; चतुर्भुज, उत्तरी बहिर्भित्ति; कंदरिया, गर्भ-गृह द्वार उत्तरंग आदि.
11. अवस्थी, खजुराहो की देव प्रतिमाएं, पृ० 89-90.
12. 8. 24.
13. 1.3.16; 2.7.13.
14. लक्ष्मण, अन्तःभाग, दक्षिणी दीवार; गर्भगृह द्वार.
15. 2.7.1.
16. 8.18.12, 23, 28-30.
17. चित्रगुप्त, दक्षिणी बहिर्भित्ति
18. ए० इं०, खंड 1, पृ० 124.
19. इसी प्रकार की एक अन्य प्रतिमा कंदरिया मंदिर के शिखर की एक पूर्वी रथिका में भी उपलब्ध है.
20. 2. 6. 1-5.
21. 11. 6-7.
22. चित्रगुप्त, गर्भगृह द्वार; खजुराहो संग्रहालय, क्र० 6 और 8; कंदरिया, दक्षिण-पूर्व जगती.
23. खजुराहो संग्रहालय, क्र० 2 और 3.
24. 108. 35.
25. कंदरिया मंडप; विश्वनाथ और कंदरिया, अंतःप्रदक्षिणा; दूलादेव बाईं बहिर्भिति.
26. 7. 10 54; 65-68.
27. कंदरिया, अंतःप्रदक्षिणा में बाईं ओर.
28. खजुराहो स्कल्पचर्स, पृ० 60.
29. द आर्ट आफ द चंदेलाज, पृ० 34.
30. जानस और एवाय, खजुराहो, पृ० 100.
31. गु० आ०, पृ० 95, पं० 35.
32. हारीती पुत्राणां सप्तमातृभिरभिवर्धितानाम्.
33. बाईं बहिर्भित्ति.
34. 119. 56-57.
35. वही, 122. 17.
36. 177. 59-72, पृ० 565.
37. गांगुली, उड़ीसा ऐंड हर रिमेंस, पृ० 439-41.
38. कार्पस, खंड 3, पृ० 80.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

39 डे० हि० आ०, पृ० 439.
40 वामन, उत्तर-पूर्वी जंघा की तीसरी पंक्ति; जगदंबी, दक्षिण-पूर्वी जंघा की निचली पंक्ति.
41. विश्वनाथ, दक्षिण-पश्चिमी खूंटरा मंदिर.
42. 2. 23. 1.
43 विश्वनाथ, दक्षिण-पश्चिमी खूंटरा मंदिर; वही, गर्भगृह द्वार, पार्वती मंदिर, जगती.
44 लक्ष्मण, दक्षिण-पश्चिमी खूंटरा मंदिर.
45. चिरं तपस्यतो यस्य जटा मूर्ध्नि बभुस्तराम् ।
ध्यानाग्नि दग्ध कर्मेन्ध निर्मद धूम शिखा इव ।। 1. 9.
46 खजुराहो के प्राय: सभी मंदिर पूर्वाभिमुख बनाए गए हैं. तो भी, शांतिनाथ का वर्तमान मंदिर और चतुर्भुज का प्राचीन मंदिर इसके अपवाद हैं.
47. क्र० 85.
48. क्र० 1601.
49. क्र० 1608.
50. क्र० 42.
51. क्र० 1467. अंबिका की अन्य प्रतिमाएं मंदिर क्र० 26 की दाईं वेदी पर, खजुराहो संग्रहालय, क्र० 820; 1608 पर, जैन संग्रहालय क्र० 96 पर और पार्श्वनाथ मंदिर की दक्षिणी बाह्य भित्ति पर उपलब्ध हैं.
52. इसके अतिरिक्त पार्श्वनाथ मंदिर के दाईं ओर तथा जैन संग्रहालय क्र० 32, 1609 की धरणेंद्र पद्मावती प्रतिमाएं चंदेलकला के उत्कृष्ट उदाहरण हैं.
53. श्वेतांबर जैन साहित्य और नाग नामक दो अतिरिक्त दिक्पालों के नाम मिलते हैं. दे० भट्टाचार्य, जैन आइकोनोग्राफी, पृ० 115-16.
54. कंदरिया, महामंडप, उत्तर-पूर्व की एक रथिका; विश्वनाथ, अंत:प्रदक्षिणा उत्तर-पश्चिमी दीवार.
55. दक्षिण की ओर.
56. जगदंबी तथा पार्श्वनाथ मंदिर.
57. लक्ष्मण, दक्षिणी-पूर्वी खूंटरा मंदिर, दक्षिणी जंघा.
58. वामन, दक्षिणी वाह्य जंघा.
59. क्र० 883, 928.
60. लक्ष्मण मंदिर, उत्तर-पश्चिमी खूंटरा मंदिर.
61. कंदरिया, गर्भगृह, दक्षिणी रथिका.
62. जगदंबी, उत्तरी वाह्य जंघा.
63. डे० हिम आ०, पृ० 144.
64. संग्रहालय क्र० 1467, 1492; घंटइ उत्तरंग, कंदरिया, विश्वनाथ आदि.
65. कविवर रूपचंद का पंचमंगल पाठ.
66. खजुराहो के जैन मंदिर, पृ० 27.
67. अद्भुत भारत, पृ० 350.
68. खजुराहो, पृ० 151.
69. कामकल्प, पृ० 140.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

7

अभिलेख

हर्ष का खजुराहो प्रस्तर अभिलेख

प्रस्तुत अभिलेख वामन मंदिर के समीप प्राप्त हुआ था जो अब छतरपुर के भूत-पूर्व महाराजा श्री प्रतापसिंह जू देव के मकबरे में रख दिया है। यह किसी बड़े अभिलेख का खंडित भाग है। इसमें तेरह अपूर्ण पंक्तियां हैं। लेख की कुल ऊंचाई 16 इंच हैं। अवशिष्ट लेख बहुत अच्छी अवस्था में है। अक्षरों का आकार 7/8" है। लिपि नागरी है और यशोवर्मा के 1011 के अभिलेख से मिलती-जुलती है। भाषा संस्कृत है। अभिलेख पद्य में है।

अभिलेख का प्रारंभ ब्रह्मांड की सृष्टि और चंदेल राजवंश के उत्कर्ष से हुआ होगा। छठी पंक्ति में इस वंश के जेज्जाक तथा विज्जाक शासकों का उल्लेख है। तत्पश्चात हर्ष के प्रताप का उसके शत्रुओं के पराभव का तथा गुर्जर-प्रतीहार शासक क्षितिपालदेव को पुनः कन्नौज का शासक बनाने का वर्णन है।

पाठ

1. [न्मज्ज्यार्ज्चि] षे नमः जगत्स [र्ग]
2. यं पात्रं किमस्मातपरं एवं यो व
3. न प्रमेयमखिल न [वा] कल्पादौ विश्व [म]
4. धा: प्रथित प्रभावान। चतुर्व्विधं भूतविकारजातं
5. [श] सकलभुवनख्यातकीर्त्तिप्रभाव: पृथ्वीना [थ]
6. [श्व] म् ॥ तस्माज्जेज्जाक विज्जाकावभूता कीर्त्तिभूहणौ। [मु]
7. [भु] जविजितानेकदृप्तारिवृंद:। तस्मात्श्रीहर्षदेव: सकल
8. कांतिसंवलितं। भीतेन्द्रनिहितधनुरिव शुशभे पादांवु (बु) जद्वित [य]
9. [प]र:। त्यत्त्वा स्थानमिवायत: पुनर्म्मथनशंकित: ॥ आस्तां किं व (ब) हु
10. : पुनर्येन श्रीक्षितिपालदेवनृपति: सिंहासने स्या
11. त्सादितारातिशक्ति कीर्तिविभूषण: ॥ प्रस
12. [दूर] स्थैरन्तिकस्थैश्च ॥ सातपत्र नृ [प]
13. [जत्व] ज ˘–˘– [द्वितं]

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अनुवाद

1. ˘—˘—˘ पूजनीय के लिए नमस्कार, संसार के निर्माता ˘—˘—˘
2. ˘—˘—˘ जो पात्र क्या हमसे अतिरिक्त एवं जो अथवा ˘—˘—˘
3. ˘—˘ न संपूर्ण प्रमेय अथवा कल्प के आदि में संसार
4. ˘—˘ प्रसिद्ध प्रतापवाला। चार प्रकार से प्राणी विकार से उत्पन्न हुआ
5. ˘—˘—˘ संपूर्ण भुवन में विख्यात कीर्ति प्रभाववाला पृथ्वीनाथ—˘—˘
6. उससे जेज्जाक विज्जाक कीर्ति भूषणवाले पुत्र उत्पन्न हुए। ˘—˘—˘
7. भुजाओं से विजित किया है अनेक मतवाले शत्रुओं के समूह को। उससे श्री हर्षदेव संपूर्ण
8. कांतियुक्त। भयभीत इंद्र ने रख दिया है धनुष को ऐसे सुशोभित हुए चरण-कमल दोनों
9. दूसरा (शत्रु)। त्यागकर आयत स्थान की तरह फिर से मथने की शंका से।। अधिक क्या बोलें ˘—˘—˘
10. ˘—˘ फिर से श्रीक्षितिपालदेव राजा को सिंहासन पर बैठाया ˘—˘—˘
11. ˘—˘—˘विनष्ट शत्रुओं की शक्ति के यश से विभूषित ˘—˘—˘
12. ˘—दूर एवं समीप स्थित।। सातपत्र राजा
13. ˘—˘—˘—˘

वर्ष 1011 का पार्श्वनाथ जैन मंदिर अभिलेख

प्रस्तुत अभिलेख जिननाथ (पार्श्वनाथ) मंदिर की बाईं द्वार शाखा पर उत्कीर्ण है। इसमें ग्यारह पंक्तियां हैं। पूरा लेख अच्छी अवस्था में है। अक्षरों का आकार ½" है। लिपि देवनागरी तथा भाषा संस्कृत है। अभिलेख अंशतः पद्य और अंशतः गद्य में है। श्लोक छंदों के प्रतिकूल हैं तथा लेख की भाषा व्याकरणसम्मत नहीं है। जहां तक वर्ण विन्यास का संबंध है, सर्वत्र तालव्य के स्थान पर दंत्य वर्णों का प्रयोग किया गया है तथा दसवीं पंक्ति में 'वैशाख' के स्थान पर 'वैसाख' लिखा गया है। शिल्पी ने तिथि वर्ष 1011 लिखते समय शून्य के स्थान पर पहले 1 का अंक बनाया है, तत्पश्चात उसे 0 में परिवर्तित कर दिया है।

अभिलेख का उद्देश्य पाहिल्ल द्वारा जिननाथ (पार्श्वनाथ) मंदिर के लिए भेंट की गई अनेक वाटिकाओं की घोषणा करना है। ये उपहार 1011 संवत के वैशाख सुदि 7 सोमवार को दिए गए थे। उपर्युक्त तिथि विक्रम संवत की है। ईसवी सन से उसका तादात्म्य करने पर यह तिथि 2 अप्रैल 955 निर्धारित होती है। यही तिथि यशोवर्मा के खजुराहो लक्ष्मण मंदिर अभिलेख की भी है। किंतु

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

दोनों अभिलेखों के अक्षर मिलान करने पर विवेच्य लेख की लिपि परवर्ती प्रतीत होती है। कीलहार्न[1] की भी धारणा है कि प्रस्तुत अभिलेख की लिपि 13वीं शती के आसपास की है। दोनों अभिलेखों में उल्लिखित धंगराज एक ही हैं, अतः प्रतीत होता है कि मूल अभिलेख क्षतिग्रस्त हो जाने पर धंग के वि० सं० 1059 के अभिलेख के समान यह पुनः अंकित कराया गया। इस प्रकार इसकी तिथि और संवत सही हैं।

पाठ

1. ओ [।।] संवत १०११ समये ।। निजकुलधवलोयं दि-
2. व्यमूर्त्ति स्वसी (शी) ल स (श) मदमगुणयुक्त सर्व्व-
3. सत्वानुकंपी [।] स्वजन जनिततोषो धांगराजेन
4. मान्य प्रणमति जिननाथोयं भव्यपाहिल
5. नामा। (।।) १ ।। पाहिलवाटिका १ चन्द्रवाटिका २
6. लघुचन्द्रवाटिका ३ सं(शं)करवाटिका ४ पंचाइ-
7. तलवाटिका ५ आम्रवाटिका ६ ध (धं ?) गवाडी ७ [।।]
8. पाहिलवंसे (शे) तु क्षये क्षीणे अपरवंसो (शो) यः कोपि
9. तिष्ठति [।] तस्य दासस्य दासोयं मम दतिस्तु पाल-
10. येत् ।। महाराजगुरुस्री (श्री) वासवचन्द्र [:।।] वैसा (शा) ष (ख)
11. सुदि ७ सोम दिने ।।

अनुवाद

1. ओं। संवत 1011 वर्ष में। अपने कुल का तिलक
2. दिव्य शरीर और अच्छे शीलवाला, शम, दम गुणयुक्त, सब
3. जीवों पर अनुकंपा करनेवाला, स्वजनों से संतोष तथा धंग राजा से
4. मान पाने वाला, भव्य पाहिल्ल नामवाला इन जिननाथ को प्रणाम करता है
5. 1. पाहिल्लवाटिका 2. चंद्रवाटिका
6. 3. लघु चंद्रवाटिका 4. शंकरवाटिका 5. पंचाइ-
7. तलवाटिका 6. आम्रवाटिका 7. धंगवाड़ी (ये मेरी भेंट हैं।)
8. पाहिल्लवंश के क्षय हो जाने पर, जो भी अन्य वंश
9. विद्यमान रहें मैं उनके दास का दास हूं, वे मेरे इस दान का पालन करें
10. महाराजगुरु श्रीवासवचंद्र ।। वैशाख
11. सुदि 7 सोम दिन।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

यशोवर्मा का खजुराहो लक्ष्मण मंदिर अभिलेख

प्रस्तुत अभिलेख 1843 ई० के लगभग लक्ष्मण मंदिर के अधिष्ठान के समीप पड़े मलबे के ढेर में मिला था। अब यह अभिलेख उक्त मंदिर के द्वार मंडप में लगा हुआ है। अभिलेख में अट्ठाइस पंक्तियां हैं। संपूर्ण लेख 5 फीट चौड़े 2′ 5″ इंच ऊंचे शिलाफलक पर उत्कीर्ण हैं। पंक्ति संख्या सोलह और बाइस से सत्ताइस को छोड़कर संपूर्ण प्रलेख अच्छी अवस्था में है। तो भी, पंक्ति सत्रह से इक्कीस तथा अट्ठाइस के अर्धभाग में, शिलाफलक की पपड़ी उधड़ जाने से, लगभग तीस अक्षर पूर्णतया नष्ट हो गए हैं। अक्षरों का आकार 3/4″ से 7/8″ तक है। अभिलेख की लिपि कुटिल प्रकार की है जो देवनागरी लिपि से मिलती-जुलती है। आठवीं पंक्ति के अंत में 'झात्कार' शब्द में 'झ' के लिए प्रयुक्त चिह्न विरलता से मिलता है। इसी प्रकार छठी पंक्ति के प्रारंभ में 'फल' शब्द में 'फ' और अभिलेख के अंतिम शब्द 'सवित्रे' में 'ए' पुराने प्रकार का ही बनाया गया।

अभिलेख संस्कृत भाषा में है जो प्रवाहमयी और व्याकरणसम्मत है। लेख में वर्तनी संबंधी कुछ अशुद्धियां हैं। 'ब' के स्थान पर सर्वत्र 'व' लिखा गया है। तेरहवीं पंक्ति में 'कस्मीर' में तालव्य के स्थान पर दंत्य, चौबीसवीं और सत्ताइसवीं पंक्तियों में क्रमश: 'कैलाशाद्' और 'शब्दानुशासन' में दंत्य के स्थान पर तालव्य का प्रयोग किया गया है। पांचवीं पंक्ति में 'वंश' और पंद्रहवीं पंक्ति में 'हन्सा:' में अनुस्वार के स्थान पर दंत्य अनुस्वार; पंक्ति एक में 'वन्चन' में 'ञ्च' के स्थान पर 'न्च', पंक्ति चौदह और छब्बीस में क्रमश: 'नम्व्री' और 'नम्व्र' में 'म्र' के बजाय 'म्व्र'; पंक्ति तीन, पांच और ग्यारह में उज्वल तथा पंक्ति सोलह में 'प्रोद्यज्वाला' में 'ज्ज्व' के स्थान पर 'ज्व' लिखा गया है। पंक्ति दो में वक्षस्थले, पंक्ति नौ में क्षिपिता स्तुवन्ति, पंक्ति उन्नीस में साधुभि स्तूयते, पंक्ति बीस में रवे स्पष्ट में विसर्ग का प्रयोग नहीं किया गया। पंक्ति चार में ईश: स्मित और पंक्ति छ: में प्राप्ति: क्षयाय में इसका प्रयोग त्रुटिपूर्ण है। पंक्ति एक में उग्रान = जगति में, पंक्ति दस में यम = विचिन्त्य और भूमिभृताम् = वरिष्ठ: तथा पंक्ति बारह में सवर्णाम् = विधिना में स्वर माधुर्य के नियमों का पालन नहीं हुआ। अंत में पंक्ति आठ में 'निषण्ण' के लिए 'निषन्न' तथा पंक्ति चौबीस में 'त्रिदिव' के लिए 'तृदेव' लिखा गया है।

प्रारंभिक स्वस्त्ययन तथा पंक्ति अट्ठाइस के उपसंहारात्मक अंश को छोड़कर संपूर्ण लेख पद्यमय है। अभिलेख की रचना शब्दानुशासन में निष्णात दद्द के पुत्र माधव कवि ने की थी (श्लो० 47)। अभिलेख का लेखक संस्कृत भाषा के विद्वान जयगण का पुत्र करणिक जद्द गौड़ था (श्लो० 48)। लेख को उत्कीर्ण

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

करने वाले का नाम पंक्ति अट्ठाईस में दिया गया था, किंतु वह अंश अब पठन-योग्य नहीं रहा।

पंक्ति अट्ठाईस में अभिलेख की तिथि 'वर्ष 1011' शब्दों तथा अंकों में अंकित है। वि० सं० से तादात्म्य करने पर यह तिथि 953-54 ब० निर्धारित होती है। अभिलेख का उद्देश्य यशोवर्मा चंदेल द्वारा वकुंठ नाम से भगवान विष्णु के एक मंदिर का निर्माण है। इस मंदिर को अब लक्ष्मण मंदिर कहते हैं।

पाठ

1. ओं नमो भगवते वासुदेवाय ।।
दधानानेका य: किरिपुरुर्षासं [हो भय] जुषं
त [दा] कारोच्छेद्यां तनुमसुरमुख्यानजवरात् ।
जघान त्रीनुग्रान्ज (न्ज) गति कपिलादीनवतु व:
स वैकुण्ठ: कण्ठध्वनिचकितनि:शेषभुवन: ।।१।।
पायासुर्व्व (र्ब्व) लिवन्च (न्च) नव्यतिकरे देवस्य विक्रान्तय:
सद्यो विस्मितदेवदानवनुतास्तिस्रस्त्रि (लो) कीं
2. हरे: ।
यासु व्र (ब्र) ह्मवितीर्ण्णमर्धसलिलं पादारविन्दच्युतं
धत्तेद्यापि जगत्र (त्त) यैकजनक: पुण्यं स मूद्‌र्न्ना हर: ।।२।।
देव: पातु स व: पय: कणभृति व्योम्नीव ताराचिते
दैत्याशिव्रणलाञ्छने दिविसद: संत्यग्य सर्व्वानपि ।
तस्मिन्तज्जनशैलभित्तिविपुले वक्ष (:) स्थले यस्य ता:
पेतुर्मन्दरसङ्गसंभ्रमवलल्लक्ष्मीकटाक्षच्छटा: ।।३।।
गंभीरो-
3. म्वु (म्बु) धय: शशांकरुचिमान्भास्व [त्प्र] तापोज्व (ज्जव) लो
धीरो धात्रि महान्महीधरवरा: कल्पद्रुमास्त्यागवान् ।
आकल्पादविकल्पनिर्म्मलगुणग्रामाभिराम: प्रभु:
सत्यं व्रु (ब्रू) त यदि क्वचित्पुनरभूत्तुल्यो यशोवर्म्मण: ।।४।।
प्रधानादव्यक्तादभवदविकारादिह
महानहंकारस्तस्मादजनि जनितोपग्रहगण: ।
ततस्तन्मात्राणि प्रसव-
4. मलभन्त क्र [म] वशा—
दथैतेभ्यो भूतान्यनु भुवनमेभ्य: प्रववृते ।।५।।
इहाद्यो विद्यानां कविरखिलकल्पव्युपरतौ
पर: साक्षी देवस्त्रिभुवनविनिर्माणनिपुण: ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

स विश्वेषामीश [:] स्मितकमलकिञ्जल्कवसति-
र्महिम्ना स्वेनैव प्रथममथ वेधाः प्रभुरभूत ।।६।।
तस्माद्विश्वसृजः पुराणपुरुषादाम्नायधाम्नः कवे
र्येभूवन्मु-
5. नयः पवित्रचरिताः पूर्व्वे मरीच्यादयः ।
तत्रात्रिः सुषुवे निरन्तरतपस्तीव्रप्रभावं सुतं
चंद्रात्रेयमकृत्रिमोज्व (ज्ज्व) लतरज्ञानप्रदीपं मुनिं ।।७।।
अस्ति स्वस्तिविधायिनः स जगतां निःशेषविद्याविद-
स्तस्यात्मोपनताखिल [श्रु] तिनिधेर्व्वंशः प्रशंसास्पदं ।
यत्राभून्न पराक्रमेण लघुता नो चाटुकारोद्धति-
र्नाल्पप्यंतरसा-
6. रता न च फलप्राप्ति [:] क्षयायात्मनः ।।८।।
त्रस्तत्राणप्रगुणमनसां सर्वसंपत्पदाना-
मुद्युक्तानां कृतकृतयुगाचारपुण्यस्थितीनां ।
तत्रत्यानाममलयशसां भूभुजां का प्रशंसा
येषां शक्तिः सकलधरणीध्वंसने पालने वा ।।९।।
तत्र क्षत्रसुवर्णसारनिकषग्रावा यशश्चन्दन-
क्रीडालंकृतदिक्पु-
7. रन्ध्रिवदनः श्रीनन्नुकोभून्नृपः ।
यस्यापूर्व्वपराक्रमनमन्निःशेषविद्वेषिणः
संभ्रान्ताः शिरसावहन्नृपतयः शेषामिवाज्ञां भयात् ।।१०।।
यस्यानंदितवंदिवृंदरचितस्तोत्रक्रियाप्रक्रमा—
त्संक्रान्तम्व (म्ब) हुवैरिवर्गजयिनः कंदर्पकल्पाकृतेः ।
नाम क्षामतनूभृतां मृगदृशां सद्यो विधत्ते पदं
स्वान्तेषु
8. द्विषतां च राशिषु व (ब) लाद्वैक्लव्यामव्यामतं ।।११।।
तस्मादभूदाजिपराजितारेः श्रीवाक्पतिर्वाक्पतितुल्यवाचः ।
यस्यामला भ्राम्यति भानुभाभिः सहैव लोकत्रितयेपि कीर्त्तिः ।।१२।।
यस्यामलोत्प्रलनिषन्न (ण्ण) किरातयोषि—
दुद्गततद्गुणकलध्वनिरम्यसानुः ।
क्रीडागिरिः शिखरनिर्झरवारिपातझात्का—
9. रताण्डवितकेकिगणः सविन्ध्यः ।।१३।।
तस्माद्विस्मयधाम्नः क्षीराब्धेश्चन्द्रकौस्तुभौ यद्वत् ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

द्वावात्मजावभूतां जयशक्तिविजयशक्तिश्च ॥१४॥
तयोर्द्वयोरप्यमितप्रतापदावाग्निदग्धाहितकाननानि ।
कर्माणि रोमांचजुषः समेताः समूर्द्धकम्पं क्षितिपा [:] स्तुवन्ति ॥१५॥
तत्रानुजन्मा तनयं राहिलाख्यमजीजनत् ।
निद्राद-
10. रिद्रतां यान्ति यम्विचिन्त्य निशिद्विषः ॥१६॥
भीमभ्राम्यदसि (स्रु) चि स्रवदसृक्संपादिताज्यक्रिये
ज्यानिर्ग्घोषवषट् पदे क्रमचरत्संख्य (ध्य) [यो] धित्र्विजि ।
अश्रान्तः समराध्वरे प्रतिहतक्रोधानिलोद्दीपि [ते]
[वै] रोदर्च्चिषि यः पशूनिव कृति मन्त्रैर्जुहाव द्विषः ॥१७॥
श्रीहर्षभूपमथ भूमिभृताम्वरिष्ठः
सोसूत कल्पतरुकल्पमन-
11. ल्पसत्व (त्त्व): ।
अद्यापि यस्य सुविकासियशः प्रसून-
गन्धाधिवाससुरभीणि दिगन्तराणि ॥१८॥
यत्र श्रीश्च सरस्वती च सहिते नीतिक्रमो विक्रम-
स्तेजः सत्व (त्त्व) गुणोज्व (ज्ज्व) लं परिणता क्षान्तिश्च नैर्सर्गिकी ।
सन्तोषो विजिगीषुता च विनयो मानश्च पुण्यात्मन-
स्तस्यानन्तगुणस्य विस्मयनिधेः किन्नाम वस्तु स्तुमः ॥१९॥
भीरुर्द्धर्मापराधे मधुरिपु-
12. चरणाराधने यः सतृष्णः
पापालापेऽनभिज्ञो निजगुणगणनाप्रक्रमेष्वप्रगल्भः
शून्यः पे (पै) शून्यवादेनृतवचनसमुच्चारणे जातिमूकः
सर्व्वत्रैवं स्वभाव प्रथितजुणतया नाम [कःस्तू] यते सौ ॥२०॥
सोनुरूपां सुरुपाङ्गः कच्छुकाख्यामकुण्ठधीः ।
सवर्णाम्विधिनोवाह चाहमानकुलोद्भवी ॥२१॥
यस्यः पतिव्रततुलामभिरोढुमी
13. शा
नारुन्धती गुरुतरामभिमानिनीति ।
पत्युः सभीहितविधानपरापि साध्वी
कार्श्यन्तथा परमगादतिलज्जितेव ॥२२॥
गौडक्रीडालतासिस्तुलितखसव (ब) ल कोशलः कोशलानां
नश्यत्कस्मी (श्मी) रवीरः शिथिलितमिथिलः कालवन्मालवानां ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सीद [त्सा] वद्यचेदिः कुरुतरुषु मरुत्संज्वरो गूर्जराणां
तस्मात्तस्यां स जज्ञे नृपकुल
14. तिलकः श्रीयशोवर्मराजः ।।२३।।
स दाता राधेयः स च शुचिवचाः पांडुतनयः
स शूरः पार्थोपि प्रथितमहिमानः किमपि ते ।
व्यतीताः किं व्र् (व्रू) मो यदि पुन [रि] ह स्युः स्वचरिते
[ह्रि] या नम्री (म्री) कुर्युर्वदनमवलो [क्यै] नमधुना ।।२४।।
त्रस्तत्रातरि तत्र भूभृति नृणां क्लेशाय शस्त्रग्रहः
कामं दातरि सिद्धकेलिसुमनस्तल्पाय कल्पद्रुमाः ।
वित्तेशः पर
15. म (मा) र्थवृद्धिविधुरस्वान्तो विलासी स चे-
दास्ये तस्य सतीन्दुरुत्पलवनप्रीत्यै दृशामुत्सवे ।।२५।।
यस्योद्योगे व (ब) लानां प्र [स] रति रजसि व्याप्त [भे] दो [न्तराले]
स्वः सिन्धुर्व्व (र्ब्ब) द्धरोधाः पिहितरुचिरभूद्भानुरादर्शरम्यः ।
स [म्य] ग्देवेन्द्रदन्ती मुदमथित वियत्साभ्रमालोच्य हन्साः
सोत्कण्ठास्तस्थुरासीन्नयनदशशती कूणितावृत्तशत्रोः ।।२६।।
अन्योन्याव (ब) -
16. द्धकोपद्विपकलहमिलद्दन्तदण्डाभिघात-
प्रोद्यज्वजा (ज्ज्वा) लाकलापप्रसृतहुतभुजि ज्याद्यनध्वानभीमे ।
पीतासृक्षी (क्ष्मी) वरक्षः प्रमदक [लकल] ह्यादरौ [द्र प्रहासे]
धीरं भी [तेव लक्ष्मीः समरशि] रसि यं सं [भ्रमा] दालि [लिङ्ग] ।।२७।।
उत्तुङ्गाञ्जनशैलसन्निभचलन्मत्तद्विपेन्द्रस्थित-
क्रुध्यद्दुर्द्धरधन्विमार्गणगणप्रारब्ध (ब्ध) रक्षाक्रियं ।
विख्यातक्षितिपालमौ-
17. लिरचनाविन्यस्तपादाम्वु (म्बु) जं
संख्येसंख्यव (ब) लं व्यजेष्ट गतभीर्यश्चेदिराजं हठात् ।।२८।।
लक्ष्मच्छायाकलुषवपुषः कान्तिमद्द्रू [र] भि [न्दो]-
र [न्या] यत्त [स्फुरि] तविधुरा [त्सु] न्दरं चारवि [न्दात्] ।
य [स्या] ˘–˘–˘–˘–[चार्हवृत्तेः]
संभ्रान्ताभि कथमपि मुखं वीक्ष्य वैरिप्रियाभिः ।।२९।।
गङ्गानिर्झरघर्घरध्वनिभयभ्राम्यत्तुरङ्गव्रजाः
• सद्यः सुप्तविवु (बु) द्धकेस
18. रिरवत्रस्यत्करीन्द्राकुला ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

यत्सैन्यैः प्रतिकल्पपादपमुमालूनप्रसूनोच्चयाः
प्रालेयाचलमेखलाः कथमपि (क्रा) न्ताः श (नैर्दिग्जये) ।।३०।।
उच्च (प्रा) कारभि (त्तिस्थि) त [स] मद (शिखिक्रूर)···[निना] द
···[श्य] ˘˘˘˘ श्लथ [रथ] तुरगप्राप्तवेगान्तरायः।
यस्मिन्मध्यन्दिने स्यात्तरणिरनुदिनं नीलकण्ठाधिवासं
जग्राह क्रीडया यस्तिलकमिव भुवः
किञ्च कालंजराद्रिं ।।३१।।
19.
आशस्त्रग्रहणादखण्डित महावीरव्रतप्रक्रियै-
रा वा (बा) ल्यादविलुप्तसत्य (समयै) रा पा (णि) पीडाविधेः।
अशान्तार्थिवि [तीर्ण्ण] पूर्णविभवैस्त [थेप्सिता] कांक्षि [भि]-
[र्दूरोत्कर्षकथाक्तोच्च] पुलकैर्य साधुभि [:] स्तूयते: ।।३२।।
[नि] न्दामुपै [मि] पुरुषान्तरसङ्गमेन
[शान्ति] न्न जातु सततभ्रमणक्रमेण।
यस्यातिपौरुषनिरस्तमनुष्यभावे
लोके स [मु]-
20. (द्रगत) कीर्तिरनिन्दितैव ।।३३।।
एकै वोवाह लोकेस्मिन्पुत्रजन्मोन्नतं शिरः।
कच्छुका येन धीरेण देवकीव मधुद्विषा ।।३४।।
शौ [र्यौ] दार्यनयादिनिर्म्म [लगु] णग्रामाभिरा [मं यशो]
[यस्य] शेष [विशुद्ध] ना [थति] लक [ङ्गा] य [न्तिसि] द्ध [स्त्रि] यः।
[तस्य स्तोत्रम] भित्रमर्द्दन [र] वे [:] स्पष्टप्रकाशीकृत-
त्रैलोक्यस्य सहस्रसंख्यमहसो दीपप्रदानोपमं ।।३५।।
क्रोधोद्वृत्तान्तकभ्रूकुटिल-
21. पटरल (ण) च्चण्डकोदण्डयष्टि-
ज्याघातस्फारघोरध्वनिचकितमनः संभ्रमभ्रान्तदृक्षु।
स्पष्टं नष्टेषु दूरं क्वचिदपि रिपुषु क्षत्रते [जो] (म्बु) राशे-
र्य [स्यौज] न व्य [रंसीद्भुवन] [वि] जयि [नश्चण्डदो] र्द्दण्डक
[ण्डू]: ।।३६।।

यो लक्षव (र्म) नृप [ते]: शरदिन्दुकान्त-
मारव्यातुमिच्छति यशः प्रस [रं] वचोभिः।
दीपप्रभापरिचयेन विमुग्धबु [बु] द्धि-
र्मध्यन्दिने दिवसनाथमुदीक्षतेसौ ।।३७।।
22. यन्नाक्रामदवक्रमानसव (ब) लिव्याजप्रयोगापत-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तपृथ्वीलंघनलव्ध (ब्ध) लाघवकचच्छेदी पदं वामनः ।
लोकालोकशिरःशतप्रतिहतज्योतिर्विवस्वान्न य-
त्तस्य क्रामति तन्निशाकर [महा] श्रीस्प [द्धि शुभ्र] यशः ।।३८।।
[धी] रो दिग्विजयेषु केलिसरसी [न्ती] व्रप्रता [पं द] ध-
न्निश्शेषद्विषदव्यथोभयतटीविन्यस्तसेनाभरः ।
मज्जन्मत्तकरीन्द्रपंकिलजलां श्रीलक्षवर्मा-
भिद्यः
23.
श्चक्रे शक्रसमः कलिन्दतनयां जह्नोः सुतां च क्रमात् ।।३९।।
आस्थानेषु महीभुजां मुनिजनस्थाने सतां सङ्गमे
ग्रामे पामरमण्डलीषु वणिजां वीथीपथे चत्वरे ।
[अ] ध्वन्यध्व [गसं] कथासु [निलये] र [रायौ] कसां विस्मया-
न्नित्यं [तद्गु] णकीर्त्तनैकमुखराः सर्व्वत्र सर्वे जनाः ।।४०।।
यस्यान [ने] शरदखण्डशशि प्रसन्ने
कोपं व्यनक्ति हृदयस्थमरिप्रिया-
24. णां ।
सिंदूरभूषणविवर्जितमास्यपद्म-
मुत्सृष्टहारवलयं कुचमण्डलं च ।।४१।।
तेनैतच्चारु चामीकरकलसलसद्व्योम धाम व्यधायि
भ्राजिष्णु पांशुवंशध्वजपट [पटलां] दोलितां [भोज] वृन्दं ।
दैत्यारातेस्तुषारक्षितिधरशिखरस्पर्द्धि वर्द्धिष्णु रागा-
दृष्टे यात्रासु यत्र तृ (त्रि) दिववसतयो विस्मयन्ते समेताः ।।४२।।
कैलाशा (सा) द्भोटनाथः सुहृदिति च ततः की-
25. -रराजः प्रपेदे
साहिस्तस्मादवाप द्विपतुरगव (ब) लेनानु हेरम्व (म्ब) पालः ।
तत्सूनोर्देवपालात्तमथ हयप [ते]: प्राप्य निन्ये प्रतिष्ठां
वैकुण्ठं कुण्ठितारिः क्षिति [धरति] लकः श्रीयशोवर्मराजः ।।४३।।
श्रीधङ्गः स्वभुजप्रसाधितमहीनिर्व्याजराज्यस्थिति-
स्तस्मादास महोदधेरिव विधुः सूनुर्जनानन्दकृत् ।
युद्धे नश्यदरातिवर्गसुभटप्रस्तूयमानस्तुतिर्नि-
26. त्यं नम्र (म्र) महीपमौलिगलितस्रक्पूजितांध्रिद्वयः ।।४४।।
आकालञ्जरमा च मालवनदीतीरस्थिते भास्वतः
कालिन्दीसरितस्तटादित इतोप्याचेदिदेशाव [धेः।]
[आ तस्मादपि] विस्मयैकनिल [या] द्गोपाभिधानाद्गिरे-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

र्यः शास्ति क्षि [ति] मायतोर्जितभुजव्यापारलीलार्जि [तां] ॥४५॥
यस्त्यागविक्रमविवेककलाविलास-
प्रज्ञाप्रतापविभवप्रभवश्चरित्रात् ।
चक्रे कृती
27. सुमनसां मनसामकस्मा-
दस्मादकालकलिकालविरामशंकां ॥४६॥
शव्दा (व्दा) नुशाश (स) नविदा पितृमान्व्यधत्त
द्वेहेन माधवकविः स इमां प्रशस्तिं ।
यस्यामलं [कवि] यशः कृतिनः कथासु
रोमान्चकञ्जुकचुषः परिकीर्त्तयन्ति ॥४७॥
संस्कृतभाषाविदुषा जय [गु] ण [पुत्रे] ण कौतुका [ल्लिखि] ता ।
रुचिराक्षरा प्रशस्ति करणिकजद्धेन गौडेन ॥४८॥
पाताद्भू-
28. मिपति पृथ्वीं व्रतीधर्म्म [:] प्रवर्द्धतां ।
नन्दन्तु गोद्विजन्मान [:] प्रजा प्राप्नोतु निर्वृतिम् ॥४९॥
सम्वत्सरदशशतेषु एकादशाधिकेषु सम्वत् ११०१ उत्कीर्णाचेयं रू
[पका] र—˘—˘—˘—˘— । श्रीरि [वनायक]-
पालदेवे पालयति [वसु] धां वसुधानर्ि [ध] ग [ता]
निर्द्दग्ध [वै] रिर्ि [भः ।] नमो भगवते वासुदेवाय ॥
नमः सवित्रे ।

अनुवाद

जिस परत्मातमा ने संसार को सुखी बनाने के लिए समय समय पर अनेक रूप धारण किए; ब्रह्मा के वर से दर्पित राक्षस समूहों के विनाश के लिए तदनुरूप कभी वराह तो कभी नृसिंह आदि रूप धारण कर तीन उग्र राक्षसों, कपिलादि का वध किया, जिसने अपनी कंठध्वनि से समस्त विश्व को चकित कर दिया, वे वैकुंठ आप सबकी रक्षा करें ।।१।।

बलि के छलने में जिन भगवान वामन के तीन पगों ने देव-दानवों को तत्काल आश्चर्यचकित कर दिया था; जिनकी सभी ने स्तुति की, ब्रह्मा के अर्घ प्रदान करने से प्रभु के पादारविंद से निर्गत पवित्र जलसमूह को त्रैलोक्य के पिता भगवान शंकर सिर से धारण करते हैं, वे तीन पग आप सबकी रक्षा करें ।।२।।

उसकी (हिरण्यकशिपु की अथवा) दैत्यों की तलवारों के घाव से चिह्नित, जलकणों को धारण करने से, तारागणों से युक्त आकाश की तरह सुशोभित, नील-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

गिरि पर्वत की भित्ति की तरह विशाल वक्षस्थल पर मंदराचल पर्वत के साथ से जिस पर संभ्रमपूर्वक चंचल लक्ष्मी के कटाक्षपातों की शोभा पड़ी, वह देव आप लोगों की रक्षा करे ।।३।।

यदि कल्प से लेकर अब तक यशोवर्मा के समान गंभीर समुद्र, चंद्रमा के समान कांतिमान, सूर्य के समान प्रतापी, बड़े बड़े श्रेष्ठ पर्वतों एवं कल्पवृक्षों को धारण करने में पृथ्वी के समान धीर, अकेला निर्मल गुणों के समूह से युक्त सुंदर प्रभु कहीं पुनः हुआ हो तो सत्य ही बताओ ।।४।।

इस अव्यक्त और निर्विकार प्रधान (प्रकृति) से महान (बुद्धि) उत्पन्न हुई। उस महान (बुद्धि) से अहंकार उत्पन्न हुआ। उस अहंकार से (षोडश संख्या परिमित) तन्मात्राओं सहित उपग्रहगण उत्पन्न हुआ (यथा शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध, पंच तन्मात्रा और एकादश इंद्रियां)। अनंतर क्रमवश सोलह को व्याप्त करके स्थित पंचतन्मात्राओं से (पंच) भूत-आकाश, वायु, जल, अनिल और पृथ्वी उत्पन्न हुई, इन (पंचभूतों से) सारा संसार उत्पन्न हुआ ।।५।।

अनंतर यहां आदि विद्याओं के कवि, समस्त कल्पों के नाश होने पर पूर्ण साक्षी, तीनों लोकों के विशेषरूप से निर्माण में निपुण, समस्त विश्वों के स्वामी, स्मित कमलपत्रों में निवास करनेवाले देवता, वे प्रभु ब्रह्मा पहले अपनी ही महिमा से युक्त उत्पन्न हुए ।।६।।

उस विश्वनिर्माता पुराण पुरुष, वेद के प्रकाशक कवि से, जो मरीचि आदि पवित्र चरित्रवाले मुनि पहले हुए, वहां अनवरत तपस्या से तीव्र प्रभाव वाले मुनि अत्रि के प्रकृति से उज्ज्वलतर, ज्ञान के प्रदीप मुनि चंद्रात्रेय नामक पुत्र हुए ।।७।।

उस संसार का मंगल करने वाले, समस्त विद्याओं को जानने वाले, आत्मा से उपनत (प्राप्त) समस्त वेदों के निधि से तो वह प्रशंसा को प्राप्त करनेवाले पुत्र हैं, जिनमें पराक्रम के कारण लघुता नहीं आई, चाटुकारिता से औद्धत्य नहीं हुआ, वेग से थोड़ी भी रति नहीं हुई (परस्त्रीगमिता नहीं हुई) तथा आत्मा का नाश करने वाले किसी भी फल की प्राप्ति नहीं की गई ।।८।।

डरे हुए जीवों की रक्षारूप श्रेष्ठ गुण युक्त चित्तवाले, समस्त संपत्तियों से युक्त, कृत युग के आचार की पुण्य प्रदान करनेवाली स्थितियों के प्रवर्तक, निर्मल कीर्तिवाले इस वंश में उत्पन्न राजाओं की, जिनमें समस्त पृथ्वी का पालन तथा विनाश करने की शक्ति है, किस प्रकार प्रशंसा की जाए ।।९।।

उसमें क्षत्रियरूपी स्वर्ण के सार की कसौटी के समान, यशरूपी चंदन से खेल खेल में ही दिशारूपी ललना के मुख को अलंकृत करनेवाले श्रीतन्नुक नाम के राजा हुए, जिसके अपूर्व बल के क्रम से झुकते हुए विद्वेषी राजा निःशेष हो गए और शेष

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

राजा विनय सहित मस्तक झुकाकर भयपूर्वक जिसकी आज्ञाओं का पालन करते थे ।।१०।।

जिसके आनंदित वंदिवृंद द्वारा रचित स्तोत्र क्रिया के प्रकृष्ट क्रम से संक्रमित होनेवाले, बहुत से वैरिवर्ग को जीतने वाले, कामदेव के समान (सुंदर) आकृति वाले (राजा का) नाम दुर्बल शरीर को धारण करने वाली, मृग के समान नेत्रवाली रमणियों के अंत:करण में शीघ्र ही स्थान बना लेता है तथा शत्रुओं के समूह में बलपूर्वक न दूर होने वाली व्याकुलता प्रदान कर देता है ।।११।।

जिसकी अमल कीर्ति सूर्य रश्मियों के साथ ही तीनों लोकों में भी भ्रमण करती है, उस संग्राम भूमि में शत्रुओं को पराजित करने वाले (महाराज से) वृहस्पति के समान वाणीवाला श्रीवाक्पति नाम का पुत्र उत्पन्न हुआ ।।१२।।

जिसके अमल उत्पलों में बैठकर किरात ललनाओं द्वारा गाए जाने वाले उस (राजा) के गुणों के मधुर ध्वनि से उसका क्रीडागिरि रमणीय चोटीवाला विंध्य-पर्वत, चोटियों से झरनों के जलपात से होने वाले 'झा झा' शब्द से नृत्य करने वाले मोरों के समूहों से युक्त हैं ।।१३।।

जिस प्रकार क्षीर समुद्र से चंद्रमा और कौस्तुभमणि उत्पन्न हुआ उसी प्रकार उस विस्मय के आगार राजा से जयशक्ति तथा विजयशक्ति नाम वाले दो पुत्र उत्पन्न हुए ।।१४।।

राजागण रोमांच को धारण करने वाली (स्त्रियों के सहित) उन्हीं दोनों (जयशक्ति तथा विजयशक्ति) के अपार प्रतापरूपी दावाग्नि से शत्रुरूपी जंगलों के जलाने जैसे कर्मों को सिर हिलाकर गाते हैं ।।१५।।

उन दोनों भाइयों में छोटे (विजयशक्ति) ने राहिल नामक पुत्र को जन्म दिया। रात्रि में जिसके विषय में चिंतित होते हुए शत्रुगण निद्रा की दरिद्रता को प्राप्त करते हैं (सोते नहीं हैं) ।।१६।।

जो श्रेष्ठ कर्म करनेवाला, भयंकर भ्रमण करनेवाली तलवाररूपी स्रुवा, रक्त से संपादित घृत की क्रियावाले, मौर्वी (धनुष की डोरी) के टंकाररूपी वेद घोष-वाले, क्रम से संचरित होनेवाले क्रोधयुक्त योद्धारूपी ऋत्विजों वाले, बिना विश्राम के चलने वाले संग्रामरूपी यज्ञ में, न रोके जाने योग्य क्रोधरूपी वायु से प्रज्वलित होनेवाले, वैररूपी अग्नि में, मंत्रों के द्वारा शत्रुरूपी पशुओं का हवन सा किया ।।१७।।

उस महान बलशाली राजाओं में श्रेष्ठ (राहिल ने) पृथ्वीतल पर उत्कृष्ट कल्पवृक्ष के समान उदार श्रीहर्षराज को उत्पन्न किया जिसकी विकसित यशरूपी पुष्प की सुगंध के अधिवास से दिशाएं आज भी सुगंधित हैं ।।१८।।

जहां लक्ष्मी सरस्वती के साथ है, पराक्रम नीति से युक्त है, शौर्य जहां सतो

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

गुणों से उज्ज्वल है और शांति जहां प्राकृतिक रूप से विराजमान है, संकल्प के साथ संतोष, स्वाभिमान के साथ विनय आदि अनंत गुणों का जिसमें विस्मयकारी समूह है, ऐसे उस राजा के किस गुण की प्रशंसा की जाय ।।१९।।

जो धर्म के विरुद्ध चलने में भीरु है, भगवान विष्णु की आराधना से जो कभी तृप्त नहीं है, पाप का नाम भी जो नहीं जानता, अपनी प्रशंसा का जिसे तनिक भी राग नहीं है, चुगलखोरी के लिए जिसके पास कोई प्रश्रय नहीं है, असत्य उच्चारण के लिए जो मूक के समान है। इस प्रकार प्रसिद्ध गुणों से यह किस नाम से स्तुति को प्राप्त करे ।।२०।।

उस सुंदर रूपवाले, अकुंठित बुद्धिवाले (राजा हर्ष ने) अपने ही समान रूप वाली और सुरुचिपूर्ण अंगोंवाली, समान वर्ण में चाहमान कुल में उत्पन्न कंचुका नामवाली (कन्या) से विधिपूर्वक विवाह किया ।।२१।।

जिस (महारानी कंचुका) के पतिव्रत की समानता करने में सतियों में श्रेष्ठ अरुंधती भी समर्थ नहीं थी, शुद्ध आचरण वाली (वह) पति के मनोवांछित क्रिया-कलापों में लज्जापूर्वक लगी रहती थी ।।२२।।

उस (श्री हर्ष राजा की कंचुका नामक रानी) से गौड़रूपी क्रीड़ालता के लिए तलवार के समान, खसों की सेनाओं की बराबरी करने वाला, कोशलों का कोश लूटनेवाला, कश्मीर के वीरों का नाश करनेवाला, मिथिला के राजा को शिथिल करनेवाला, मालवों के लिए कालवत, गर्हित चेदिराज को कंपानेवाला, कुरुरूपी वृक्ष के लिए आंधी के समान तथा गुर्जरों के लिए भयानक ज्वर के समान राजाओं का कुल तिलक श्री यशोवर्मा राजा उत्पन्न हुआ ।।२३।।

वह दान देने में राधा के पुत्र कर्ण के, सत्य बोलने में युधिष्ठिर के और शौर्य में अर्जुन के समान था। ये सभी प्रसिद्ध महिमावाले स्वर्ग चले गए, अतः क्या कहें ? यदि पुनः इस समय यहां हों तो इस राजा (यशोवर्मा) को देखकर सभी लज्जा से अपना मस्तक झुका लेंगे ।।२४।।

त्रस्त व्यक्तियों के रक्षक उस राजा के रहने पर शस्त्र ग्रहण लोगों को (ढोने का) क्लेश देनेवाले थे, उस दाता के रहने पर कल्पवृक्ष सिद्धों को क्रीडा की पुष्प-शय्या मात्र के लिए थे, उस विलासी राजा के रहने पर कुबेर केवल अत्यधिक धनवृद्धि से विधुर(हीन) अंतःकरण वाला था, नेत्रों के उत्सव के लिए उसके मुख के होने पर चंद्रमा कमलवन को प्रसन्न करनेवाला मात्र था, वास्तव में इनकी आवश्यकता नहीं थी ।।२५।।

उस यशोवर्मा राजा की सेना के चलने से समस्त आकाश धूलि से व्याप्त हो जाने के कारण, स्वर्ग गंगा का प्रवाह रुक सा गया, ढकी हुई कांतिवाला सूर्य दर्पण के समान रमणीक मालूम होने लगा, अच्छी तरह से इंद्र के हाथी ऐरावत के द्वारा

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

आनंद से मथे गए आकाश को मेघों से युक्त सोचकर हंस गण उत्कंठा से युक्त हो गए और इंद्र के सहस्र नेत्र कूणित (घूरने वाले) हो गए ।।२६।।

एक दूसरे के साथ बंधे हुए कुछ हाथियों के द्वारा किए गए युद्ध में, टकराने-वाले दांतों के दंडों की चोट से उत्पन्न ज्वालारूपी फैली हुई अग्नि से, तथा मौर्वी के घने शब्द से भयंकर, रक्तपान किए हुए मतवालों की तरह, राक्षसों के मदयुक्त कलकल आनंद से किए गए भयंकर हास्य से डरी हुई सी लक्ष्मी ने उस (यशो-वर्मा) वीर का युद्ध भूमि में संभ्रमपूर्वक आलिंगन किया ।।२७।।

जिसने निर्भीक युद्धभूमि में अंजनगिरि के समान, ऊंचे मतवाले गज समूह के बीच स्थित, क्रुद्ध दुर्धर धनुषधारियों के वाण समूहों से रक्षित तथा प्रसिद्ध राजाओं के मुकुटों की कांति से सुशोभित, कमलवत सुंदर चरणवाले, अपार सेना वाले, चेदिराज को हठपूर्वक जीत लिया ।।२८।।

कलंक की छाया से कलुषित चंद्रमा से अधिक कांतियुक्त, दूसरे के अधीन प्रमुदित होने वाले कमल से भी अधिक-सुंदर जिसके ˘—˘—˘ मुख को शत्रुओं की प्रियतमाओं ने संभ्रम के साथ देखा ।।२९।।

जिस राजा यशोवर्मा ने गंगा के भयंकर कलरव से आंतकित घोड़ों के समूह-वाली, तत्काल सावधान मृगराज की हुंकार से भयभीत गज समूहों से युक्त अपनी सेना के साथ, कल्पवृक्षों के अनुपम पुष्पों की मालाओं से खचित हिमालय की मेखला को दिग्विजय के अभियान में सुगमतापूर्वक पार किया ।।३०।।

ऊंचे परकोटे की दीवारों पर बैठे हुए मत्त मयूरों के शब्दों से युक्त……रथ के घोड़ों से प्राप्त गति के व्यवधान वाले, जिस (कालिंजर दुर्ग) में मध्याह्न का सूर्य प्रत्येक दिन नीलकंठ (शिव) के आवास को आलोकित करता है, उस पृथ्वी के तिलक के समान कालंजर पर्वत को जिसने खेल खेल में ही जीत लिया ।।३१।।

शस्त्र ग्रहण से लेकर महान वीरों की अविच्छिन्न परंपरा से युक्त, बाल्य-काल से सत्यानुरागी, हाथ फैलाए भिक्षुओं से लेकर दूर दिशाओं के छोर तक सभी आंकाक्षावान याचकों को यथेच्छ वैभव प्रदान करने वाले (उस राजा के) उत्कर्ष की कथा से पुलकित साधुजन भी उसकी सराहना करते हैं ।।३२।।

दूसरे पुरुष के पास जाने पर निंदा होगी, निरंतर भ्रमण करने पर अशांति ही मिलेगी, अतएव (ऐसा सोचकर) जिसका पौरुष लोकोत्तर हो गया है, ऐसे उस राजा की धवल कीर्ति समुद्र तक फैल गई ।।३३।।

जिस प्रकार मधु दैत्य का विनाश करने वाले श्रीकृष्ण जैसे पुत्र को जन्म देकर देवकी अपना सिर ऊंचा कर सकी, इसी प्रकार धीर पुत्र को जन्म देने से कंचुका का मस्तक ऊंचा हुआ ।।३४।।

सिद्धों की स्त्रियां जिस समस्त विशुद्ध राजाओं के तिलकभूत (राजा यशो-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वर्मा) के पराक्रम, उदारता, नीति आदि निर्मल गुणों के समूहों से सुंदर यश को गाती हैं उस यशोवर्मा का अंधकाररूपी शत्रु को नष्ट करने के लिए सूर्य के समान स्तोत्र तीनों लोकों को स्पष्ट रूप से प्रकाशित करनेवाले सहस्र संख्यक तेज के दीपक के समान है ।।३५।।

क्रोध से उद्वृत यमराज के समान टेढ़ी भौंहों से बड़े संग्राम में भयंकर धनुष की यष्टि में बंधी मौर्वी के आघात से स्फुरित होनेवाले घोर शब्द से चकित मन, संभ्रमपूर्वक आकुल नेत्रोंवाले, शत्रुओं के दूर दूर तक नष्ट हो जाने पर भी, समस्त भूमंडल की विजय के लिए उद्यत जिस राजा की भुजाओं की खुजलाहट नहीं शांत हो सकी ।।३६।।

जो कोई शरत्कालीन चंद्रमा की कांति के समान फैले हुए राजा लक्षवर्मा के यश का वचनों से बखान करना चाहता है, वह पागल दीपक के प्रकाश से मध्याह्न के सूर्य को प्रकाशित करना चाहता है ।।३७।।

पृथ्वी लंघन के कौशल में सर्वश्रेष्ठ, सरलमति, दानवराज बलि को छलने वाले भगवान वामन का चरण भी, जिस मानसोत्तर पर्वत का लंघन नहीं कर सका, सैकड़ों बार टकराकर भी सूर्य की किरणें जिस अचल को पार नहीं कर सकीं, चंद्र की महाज्योत्सना की शोभा से होड़ लगानेवाले राजा (यशोवर्मा) के उस शुभ्र यश ने उस लोकालोक को भी पार कर लिया अर्थात राजा का यश सर्वत्र व्याप्त हो गया ।।३८।।

धैर्यशाली, तीव्र प्रताप को धारण करनेवाले, इंद्र के समान समस्त शत्रु भय से रहित, दोनों तटों पर सैन्य समूह नियोजित करनेवाले श्री लक्षवर्मा नामक राजा ने अपने मत्त गजराजों द्वारा क्रम से यमुना तथा गंगा के जल को पंकिल कर दिया ।।३९।।

राजाओं की सभा में, मुनियों के स्थान में, सज्जनों के साथ, गांवों में, पामर मंडलियों में, व्यापारियों की छोटी छोटी गलियों में, चौराहों में, मार्ग में, मार्ग में चलनेवाले जनों की वार्ताओं में, घरों, धनियों के भवनों में समस्त स्थानों में सभी लोग निरंतर आश्चर्य से एकमात्र उस राजा (लक्षवर्मा) के गुणों के वर्णन में लगे हुए हैं ।।४०।।

शरत्कालीन पूर्ण चंद्र के समान प्रसन्न मुखमंडल वाले जिस राजा के हृदय स्थित कोप ने, शत्रुओं की प्रियतमाओं के मुखों को सिंदूर तथा वक्षस्थल को ग्रैवेयक और हार आदि आभूषणों से रहित कर दिया है ।।४१।।

उस राजा (लक्षवर्मा) ने आकाश में सुशोभित सुंदर स्वर्णकलशों से युक्त, सुंदर और देदीप्यमान बांस के दंडों पर, खिले हुए कमलों के समान मंद मंद दोलायमान पताकाओं से युक्त, ऊंचाई में हिमगिरि के शिखरों से स्पर्धा करनेवाले

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

शिखर से युक्त भगवान वैकुंठ का यह भव्य मंदिर बनवाया जिसके दर्शन के लिए एकत्रित भारी जनसमुदाय को देवगण आश्चर्य से देखते हैं ।।४२।।

जो कैलाश पर्वत से भोटनाथ और फिर उससे कीर के शाही राजा के पास मित्रता के उपहारस्वरूप पहुंची; पुनः उसे हेरंबपाल ने घोड़ों और हाथियों की एक टुकड़ी देकर प्राप्त किया; उस हेरंबपाल के पुत्र देवपाल से वैकुंठ की यह मूर्ति शत्रु के विनाशक क्षितिधर तिलक श्री यशोवर्मा ने प्राप्त की ।।४३।।

लोगों को आनंद देने में समुद्र से उद्भूत चंद्रमा की तरह, अपने भुजबल से पृथ्वी का प्रशासन करनेवाले तथा बिना किसी तृष्णा के राज्य की स्थिति सुदृढ़ करने वाले, युद्ध में शत्रु समूह के नष्ट होने पर स्तुति को प्राप्त, नित्य नम्रीभूत राजाओं के मुकुटों से गिरनेवाली मालाओं से पूजित चरणोंवाले, यशोवर्मा के श्रीधंग नामक पुत्र उत्पन्न हुए ।।४४।।

कालंजर (दुर्ग) तक, मालव नदी के तीर में स्थित भास्वत (विदिशा) तक, वहां से कालिंदी (यमुना) नदी के किनारे तक; वहां से चेदिदेश की सीमाओं तक तथा वहां से गोप (ग्वालियर) नामक पहाड़ तक, दीर्घ ओजस्वी भुजाओं के व्यापार से खेल खेल में अर्जित पृथ्वी पर, जो शासन करता है ।।४५।।

जो त्याग, पराक्रम, विवेक, कला-विलास, बुद्धि, प्रताप, ऐश्वर्य से उत्पन्न चरित्र के द्वारा सज्जनों के मन में अचानक समय के पूर्व ही कलिकाल की समाप्ति की शंका उत्पन्न करता है ।।४६।।

शब्दानुशासन में निष्णात, देद्द के पुत्र माधव कवि ने इस प्रशस्ति की रचना की। उसके निर्मल कवित्व की कीर्ति का विद्वान लोग कथाओं के रूप में रोमांचित होकर वर्णन करते हैं ।।४७।।

संस्कृत भाषा के विद्वान जयगुण के पुत्र करणिक जद्ध गौड़ के द्वारा कौतुक-पूर्वक यह प्रशस्ति लिखी गई ।।४८।।

राजागण पृथ्वी का पालन करें, वेदत्रयी धर्मवृद्धि को प्राप्त हो. गौ, ब्राह्मण आनंदित हो, प्रजा सुखी हो ।।४९।।

ग्यारह अधिक दश सौ, अर्थात संवत १०११ में यह उत्कीर्ण की गई। जितशत्रु राजा श्री विनायकपालदेव के द्वारा पृथ्वी का पालन करते समय······ यह प्रशस्ति उत्कीर्ण की गई। भगवान वासुदेव को नमस्कार; सूर्य को नमस्कार।

कोकल्ल का खजुराहो प्रस्तर अभिलेख

प्रस्तुत अभिलेख वैद्यनाथ मंदिर के खंडहरों में प्राप्त हुआ था। इस समय यह अभिलेख विश्वनाथ मंदिर के द्वारमंडप की पार्श्वभित्ति में लगा हुआ था। इसमें बाईस पंक्तियां है। लेख का शिलाफलक 3′ 8″ चौड़ा तथा 2′ 2″ इंच चौड़ा है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पंक्ति एक से चौदह तक लेख प्रायः पूर्णरूपेण सुरक्षित है, किंतु पंक्ति पंद्रह से इक्कीस तक शिलाफलक में दाईं ओर एक पपड़ी उधड़ जाने से लगभग अस्सी अक्षर पूर्णतया नष्ट हो गए हैं। इसी प्रकार पंक्तियों के भी कुछ अक्षर क्षतिग्रस्त हो गए हैं। अक्षरों का आकार 3/4″ से 7/8″ तक है।

अभिलेख की भाषा संस्कृत है। प्रारंभिक स्वस्त्ययन 'ओं नमः शिवाय', पंक्ति पाठ के 'किं बहुना' तथा अंत में तिथि को छोड़कर संपूर्ण लेख पद्य में है। जहां तक वर्तनी का संबंध है 'ब' के स्थान पर सर्वत्र 'व' लिखा गया है। पंक्ति एक में 'विकश' और 'भाश्वत', पंक्ति तीन में 'शंकल्प', पंक्ति सत्रह में 'अजस्र' में दंत्य सकार वर्ण के स्थान पर तालव्य और पंक्ति सत्रह में 'सय्या' पंक्ति इक्कीस में 'वहुस्रुतं' में तालव्य के स्थान पर दंत्य, पंक्ति आठ में 'जीर्न,' पंक्ति पंद्रह में 'इदृक्षेन', पंक्ति उन्नीस में 'कांचन' में तालव्य अनुनासिक के स्थान पर 'ज्व' का प्रयोग किया गया है। इनके अतिरिक्त पंक्ति एक और पंद्रह में 'प्रद्यत' पंक्ति सात और नौ में 'चित्र', पंक्ति सत्रह में 'विचित्र', पंक्ति सोलह में 'पात्त्रे' तथा पंक्ति इक्कीस में 'यात्त्रा' में 'य' अथवा 'र' के पूर्व व्यंजन की पुनरावृत्ति की गई है। सामान्यतः अभिलेख की भाषा और शैली यशोवर्मा तथा धंग के क्रमः 954 ई० तथा 1002 ई० के अभिलेखों से निम्न स्तर की है। कुछ श्लोकों की रचना त्रुटिपूर्ण हैं। अभिलेख में रचयिता, लेखक और उत्कीर्णकर्ता के नामों का उल्लेख नहीं है।

पंक्ति बाईस में संवत शब्दों और अंकों दोनों में (सोमवार, कार्त्तिक मास, वर्ष 1058) लिखा गया है। इसे विक्रम संवत स्वीकार करने पर इसकी तिथि 1000-1001 ई० निर्धारित होती है।

अभिलेख का उद्देश्य ग्रहपति वंश के कोकल्ल द्वारा भगवान वैद्यनाथ के मंदिर निर्माण करने तथा पुण्यात्मा ब्राह्मणों को भवन दान करने का उल्लेख करना है।

पाठ

1. ओं नमः शिवाय। स्फूर्य (र्ज) त्फा(त्स्फा) रफणाकलापविकश (स)द्भीमस्फटाभासुरं। भाश्व (स्व) त्तारतरात्ति (ति) रेकविलसच्चन्द्रार्द्धच्चि (चि)ह्नीकृतं। प्रोद्यल्लोल विलोचनानलमिलज्वा (ज्ज्वा) लावलीपिङ्गलं। वन्दे सुंद—
2. रवैधनाथविधृतं वन्द्य (न्द्यं) जटामण्डलं ।। यस्य प्रेतवनं निवासभवनं ।। भूतैः प्रभुत्त्वं भृशं भूतिर्भूषणमङ्गरागरचना प्रीतिर्युगान्त (न्तं) प्रति ।। (।) कण्ठे तिष्ठाति कालकूटमशिवोप्येवं शिवः
3. त्वस्थितं। सर्वध्या (व्या) वि (धि) हरश्चराचरधरः पायात्स वः शङ्करः ।। यं

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वेदान्तविदो वदन्ति मनस [:] शं (सं) कल्पभूतं शिवं। ब्र (ब्र) ह्मैकं परमक्षरं तमजरं तं (?)चामरं तद्विदः। अन्ये तत्सिवमेव बु(बु)द्धममलं त्व—

4. न्ये जिनं वामनं ।। तस्मै सर्व्वमयैक्यकारणपतेः (?) स (श) र्व्वाय नित्यं नमः ।। माहेन्द्रोपेन्द्ररौद्रज्वरविषम महादुष्टकष्टाभिभूताः। भूतैः प्रत्यग्रभूतैः प्रतिदिनमुदितैर्यातुधानैर्गृही—

5. ताः। घृष्टांगुष्ठप्रकोष्टप्रकटितपटिमाटा (टो) पकुण्ठप्रदुष्टा। दृष्ट्वा नश्यन्त्यनिष्टा [:] स्फुटविकटजटायू (जू) ट मेते त्वदीयं ।। आसीदप्रतिमा विमानभवनैराभूषिता भूतले लोकानामधिपेन भू-

6. मिपतिना पद्मोत्थवंशेन या ।। (।) केनापीह निव (वे) शिता कृतयुगत्रेतान्तरे श्रूयते सत्छा(च्छा)स्त्रे पठिता पुरा[ण]पटुभिः पद्मावती प्रोच्यते ।। सौधोत्तुङ्गपतङ्गलंघनपथप्रोतुङ्गमालाकुला शुभ्रा—

7. भ्र कषपाण्डुरोच्चशिखरप्राकारचित्राम्व (म्ब) रा ।। (।) प्रालेयाम (च) लश्रृंगसंन्नि (नि) भ शुभप्रासादसद्मावती···भव्यापूर्वमभूदपूर्वरचना या नाम पद्मावती ।। त्वङ्गतुङ्गतुरङ्गमोद्दमक्षु (खु) रक्षोदाद्रजः प्रो—

8. [द्ध] तं यस्यां जीर्न(र्ण)कठोरवभ्रु(स्त्र?)मकरोत्कूर्मोदराभं नमः ।। (।) मत्तानेककरालकुंभिकरटप्रोत्क्रुष्टवृष्ट्या[द्भु]त [यु]क्त कर्दममुद्रया क्षितितलं तां ब्रू (ब्रू)त किं संस्तुम ।। किं [ब(ब)हु] ना। तस्यां ग्रहपतिवंशस्तं व (ब) क—

9. ˘˘˘˘प्यदूषितो जातः [।] कोटिगुणोन्नतनमितः प्रथितोतियशोव (ब) लः श्रीमां (मा) न् ।। यश्चाभवन्निजभुजा······र्जार्जितचित्रकीर्तिरुत्तंभिता [प्त] कुलमूलतरुप्रकाण्डः [।] भ्रूभंग कार्मुककटाक्षशराभिघातमा [त्त] प्र——······

10. ˘˘˘˘ परिपातितशत्रुदण्डः ।। यः शुभ्रविभ्रमशशाङ्ककरप्रतानकान्त्युज्व (ज्ज्व) लोत्पलजलप्रव (ब) लांस्तडागान्···।। (।) देवालयानपि हिम (मा) चले (ल) शृङ्गतुङ्गांश्चक्रे श [तक्र] तुकृती स यशोव(ब)लाख्य—

11. [:।। तस्म] ादभूदभिमताखिलव (ब) न्धुवर्गो दुर्गतृ (त्रि) वग (र्ग) फलनिर्मललव्ध (ब्ध) सौख्यः ।। (।) सत्कीर्त्ति-कीर्त्तन क [था] परिगद्यमान [माहात्म्य] मोदितजनः किल [मा] हटा [ख्य]: ।। तस्यात्मजः स्वजनसर्वजनात्क-

12. ˘—˘—˘—˘—शङ्कापमान परिमार्जनसज्जकार्यः ।। (।) मर्यादमुद्दृतगभीरिम [या] विध[विध]तुल्यै ˘—˘—˘—भीर ˘—˘—˘ [रा] शिः श्रीमानभूत्सुकृतकृज्जयदे [वना] मा ।। कान्त्या शीतकरात्सभी-

13. [हित] फलावाप्तौ च कल्पद्रुमादालोको दिवसाधिपादिव ततो जज्ञे सुतः

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सेक्कलः [।] विद्वानप्रतिम प्रतापतरणि ख्यातः सतामग्रणी [:] सत्यत्याग पराक्रमैकवसतिर्मानी धनैरन्वि [तः ।।]

14. [स] द्वि रत्वादलंघ्यः प्रथित पृथुककुप्रा (प्प्रा] न्तविश्रान्तकीर्त्तिः त्यागै कर्ण्णोपम (मा) न कटुक पटव-ग [ल्भः] : [।] [स] द्यः सौजन्यजन्य-प्रकटित [महिमारा] तिवर्गस्य दुर्गः श्रीमानु-

15. व ?] ग्गो ˘—˘ हित ˘—˘ [से ?] क्कलोभूत ।।
उद्यद्धोरगभीरराज्य जलधेः प··· दृक्षेन (ण) ?] महीभुजा निजतनुं [यं प्रा ?] प्य पोतं परं। श्री सेक्कल्लमतुल्लय [कु] ल्लय—

16. ˘—˘—˘—˘—˘—रुचिरं किं तत्र वस्तु स्तुभः ।। त स्यानुजोपि [सौं] दर्यमर्या [दौ] दार्यकार्यवान्। यौवनेप्यार्यचरितः श्रीकोक्कल्लेति विश्रुतः (।) ।। यः सत्पात्रे ददा—

17. ˘—˘—˘—˘—˘—नमन्नं वरवसनशतान्यश्वस (श) य्यासनानि। च्छ (छ) त्रोपानद्विचित्रासनभवनमहाधान्यदानान्यजश्रं (स्रं) स श्रीमान्कोक्कला [ख्यो] भवदिह कुमरः की—

18. ˘—[न्ध] र्मकर्मा ।। प्रशस्तसम—˘—˘—˘ तं महार्हगुरुतोरणं शिखरि—शृङ्गतुङ्गालयं। विचित्रमतिभूषणोच्छ्रितलसन्महागोपुरं पुरन्दरपुरप्रभं पुर-मचीकरत्कोक्कलः ।। ते

19. नायं तुहिनाचलामलमहाकूटाग्र [का?]—˘—˘—व्धि (ब्धि) गहनोनारा-थिना कारितः। यस्यात्युच्छ्रितकान्च (ञ्च) नाण्डकलस [म्मा] र्त्तण्डचण्ड-प्रभासंपर्कादभवद्वितानममलं श्रीवैद्यनाथप्र-

20. भो [:।।] [य] स्य द्वा [रे] तिवस्तुप्रततमिव दिवो द्वारमुग्र—˘—˘ [क्तं] ग···समुड्डीय ग [च्छ] द्वि [भानि]। य [न्म] न्ये वैद्यनाथो यदभिनव-भवद्रामसंस्थापितोतस्तस्यार्थे पुष्पकं तत्प्राहित···मिव

21. ˘—स्तोरणीभूय भाति ।। यत्र वेदविदुषां द्विजन्मनां सा [˘—˘ क्रमं। षाडु-कर्मसुरतं व (ब) हुस्र (श्रु) तं तेन वृन्दमनघं निवेशितं ।। उद्दामात्मविवेक-सेकजनितश्रेयोलसत्पल्लवा शश्व—

22. —˘—˘—˘ पोपितद्विजगणा सद्वृत्तपुष्पोज्व (ज्ज्व) ला। यस्येलाविपुलाल-वालवलयात्सत्कीर्त्तिवल्ली मही···[भृ] द्दण्डानिधिरुह्य मण्डपमिव ब्र (ब्र) ह्माण्डमारोहति ।। संवत् १०५८ कार्त्तिक्यां श्रीकोक्कलेन [।।]

अनुवाद

जटा समूह को धारण करने वाले सुंदर वैद्यनाथ को प्रमाण करता हूं, जिनकी जटाएँ चौड़े सर्पों के फुफकार से फैले हुए भयंकर फणों से युक्त हैं, सूर्य से भी

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अधिक गति से चमकने वाले अर्द्धचंद्र से चिह्नित हैं और उनके भयंकर नेत्रों से निकलने वाली ज्वाला के समान पीली हैं ॥१॥

श्मशान भूमि में निवास करने वाले, भूत-प्रेतों के स्वामित्व वाले शरीर पर भस्म रमाने वाले, सृष्टि विनाश में प्रीति रखने वाले, कंठ में हलाहल विष धारण करने वाले, अशिव होने पर भी कल्याण करने वाले, संपूर्ण व्याधियों को हरने वाले तथा चराचर को धारण करने वाले शंकर हमारी रक्षा करें ॥२॥

उस सर्व को सदैव नमस्कार है जो संपूर्ण देवताओं को अपने में ही समाहित कर लेते हैं, जिन्हें वेदांत के ज्ञाता शिव कहते हैं, शुभ विचारों वाले ज्ञानीजन जिन्हें परम ब्रह्म, अविनाशी, अजर, अमर के रूप में जानते हैं और दूसरे उन्हें शुभ बुद्ध, अमल वामन और जिन के नाम से जानते हैं ॥३॥

जो इंद्र और उपेंद्र के क्रोधरूपी ज्वर से कांप रहे हैं, प्रतिदिन भूत-प्रेतों से कष्ट पाते हैं, जिनके हाथ, पैर, अंगुलियों और अंगूठों में कोढ़ फूट पड़ा है, आपकी मनोहर और विलक्षण जटाजूट वाले दर्शन से उनके कष्ट समाप्त हो जाते हैं ॥४॥

पृथ्वी पर महलों से अलंकृत एक नगर था, जिसका निर्माण सत्ययुग और त्रेता के मध्य में प्रजा के स्वामी पद्म वंश के किसी राजा ने किया। सुना जाता है कि सत्शास्त्र के अध्येता, पुराणपटु उसे (नगर को) पद्मावती के नाम से पुकारते हैं ॥५॥

इस अभूतपूर्व निर्मित भव्य पद्मावती नगर में स्वच्छ, ऊंचे महलों की श्रेणियों से पथ खचाखच भरा था, जिसकी गगनचुंबी दीवारें सफेद बादलों को रोकती सी आकाश को स्पर्श करती प्रतीत होती थीं। (उस नगर के) मार्ग में ऊंचे ऊंचे घोड़ों के सरपट चलने से उठी हुई धूल से आकाश ऐसा लगता था, मानो पुराना फटा हुआ वस्त्र हो अथवा कच्छप का पेट हो ॥६॥

अनेक मतवाले हाथियों के गंडस्थलों से प्रवाहित मद से पृथ्वी पंकमय हो गई थी, उस (पद्मावती नगर) को क्या कहें, क्या प्रशंसा करें ? अधिक क्या कहें ? ॥७॥

उसमें (पद्मावती नगर में) ग्रहपति वंश में कीर्तियुक्त करोड़ों गुणों की उन्नति से विनम्र अतिशय वलवान श्रीमान········हुए, जिन्होंने अपनी भुजाओं से अद्भुत कीर्ति अर्जित की। वे कल्पवृक्ष की तरह विशाल, टेढ़ी भौहोंवाले बाणों से ही शत्रुओं का विनाश करने में सक्षम (थे) ॥८॥

इंद्र के समान सुकृती उस यशोवल ने शुभ्र, निर्मल, चंद्रकिरणों के समान उज्ज्वल कांति बिखेरने वाले, चंचल कमलों एवं विशाल जलसमूह से युक्त तालाब और हिमालय की ऊंची चोटियों के समान उत्तुंग देवालय बनवाए ॥९॥

उससे संपूर्ण बंधुवर्ग को अभिमत कठिन त्रिवर्ग के निर्मल फल से सुख प्राप्त करने वाला, उत्तम कीर्तियुक्त, कथाओं से प्रकाशित यशवाला तथा प्रजा का

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

मनोरंजन करने वाला माहटा नाम का पुत्र हुआ ।।१०।।

उसका पुत्र स्वजन और सर्वजन की शंका, अपमान और भय का परिमार्जन करने वाला, सत्कर्म करने वाला, समुद्र के समान गंभीर मर्यादा की गरिमा से युक्त श्रीमान जयदेव हुआ ।।११।।

उसके, कांति में चंद्रमा के समान, मनुष्य की कामनाओं को पूर्ण करने में कल्पवृक्ष के समान प्रकाश में सूर्य के समान सेक्कल नाम का पुत्र हुआ, जो अप्रतिम विद्वान, प्रभावशाली, सज्जनों से अग्रणी, सत्य, त्याग एवं पराक्रम का एकमात्र आश्रय और धनवान था ।।१२।।

बलवान शत्रु का विजेता, चतुर्दिक व्याप्त यशवाला, कर्ण के समान त्यागी, वार्तालाप में चतुर, अपने सौजन्य से शत्रुवर्ग से भी महिमा प्राप्त करने वाला श्रीमान सेक्कल्ल हुआ ।।१३।।

जिस राजा ने अपने परम पोत रूपी शरीर को गंभीर राज्यरूपी समुद्र से उद्धार किया, उस अतुलनीय श्रीसेकल्ल·········क्या प्रशंसा करें ? ।।१४।।

उसका छोटा भाई भी सौंदर्य, मर्यादा, उदार कार्योंवाला, यौवन में भी श्रेष्ठ चरित्र वाला श्री कोकल्ल नाम से विख्यात हुआ । जो सत्पात्रों को दान···।।१५।।

अन्न, सैंकड़ों सुंदर वस्त्र, घोड़े, शय्या, आसन, छत्र, जूते, विभिन्न प्रकार के भवन, प्रचुर महाधान्य आदि का निरंतर दान करने वाला वह श्रीमान कोकल्ल के नाम से प्रसिद्ध था ।।१६।।

(उस) कोकल्ल ने बड़े तोरणों से युक्त, ऊंचे ऊंचे शिखरों वाले महलों से युक्त, विचित्र भूषणों से सुसज्जित, विशाल गोपुरों से युक्त, अमरावती के समान प्रभायुक्त एक नगर का निर्माण कराया ।।१७।।

गहरे समुद्र को पार करने की इच्छा से उसने भगवान वैद्यनाथ का एक मंदिर बनवाया, जिसका अत्यंत ऊंचा शिखर हिमालय पर्वत की ऊंची चोटियों के समान, प्रचंड सूर्य के संपर्क से रक्षा हेतु निर्मल वितान के समान था ।।१८।।

जिसके द्वार के अग्रभाग में फहराती हुई ऊंची पताका ऐसी प्रतीत होती है मानो रामचंद्रजी के द्वारा संस्थापित हो और उसका तोरण पुष्पक विमान की तरह सुशोभित होता हो ।।१९।।

यहां उसने वेदों के ज्ञाता, षटकर्म में रत, बहुस्रुत ब्राह्मण वृंदों को बसाया । उनके विवेकरूपी जल के सिंचन से उत्पन्न श्रेयरूपी लता निरंतर द्विजगणों से पोषित होकर सद्वृत्तरूपी निर्मल पुष्पों से युक्त है ।।२०।।

जिनकी सत्कीर्त्तिरूपी लता पृथ्वी पर फैल रही है······मृत्युरूपी दंडों का सहारा लेकर मंडप की तरह ब्रह्मांड में ऊपर चढ़ती जा रही है । संवत १०५८ कार्त्तिक में श्रीकोकल्ल ने ।।२१।।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

धंग का खजुराहो विश्वनाथ मंदिर अभिलेख

प्रस्तुत अभिलेख 1838 ई० में कप्तान टी० एस० बर्ट को खजुराहो के किसी मंदिर के मलवे में मिला था। अभिलेख अब विश्वनाथ मंदिर के द्वारमंडप की दाईं भित्ति में लगा दिया गया है। इसमें चौंतीस पंक्तियां हैं। लेख का शिलाफलक 5′2″ चौड़ा और 2′10″ ऊंचा है। शिलाफलक के मध्य में ऊपर से नीचे तक एक दरार है जिसके कारण कुछ अक्षर क्षतिग्रस्त हो गए हैं। इस दरार के अतिरिक्त पूरा अभिलेख अच्छी अवस्था में है। अक्षरों की ऊंचाई 3/4″ से 1″ तक है। लिपि नागरी है जिसे सावधानीपूर्वक उत्कीर्ण न किए जाने के कारण ध और व; त, न और ल; च और र तथा र्ग और र्म्म एक से प्रतीत होते हैं। पंक्ति चौंतीस में 'प्रोदलिखत' के स्थान पर 'प्रोल्लिखद' में व्याकरण संबंधी त्रुटि है। 'ब' के स्थान पर सर्वत्र 'व' लिखा गया है, जिससे प्रतीत होता है कि इस युग में 'ब' और 'व' के लिए ही एक चिह्न था। 'सिखरि' पंक्ति एक, 'सुक्ल' और 'सुत्वे' पंक्ति तीन, 'वंस' पंक्ति सात, इक्कीस, सत्ताईस, तीस आदि में तालव्य सकार वर्ण के स्थान पर दंत्य सकार तथा 'प्रशंसा' पंक्ति आठ, 'शंकोचिता' पंक्ति नौ, 'श्रजः' पंक्ति दस आदि में दंत्य सकार वर्ण के स्थान पर तालव्य का प्रयोग किया गया है। 'उज्वल' पंक्ति पांच, दस, पंद्रह, चौबीस और इकतीस में 'ज्ज्व' के लिए 'ज्व' तथा 'अंमयं' पंक्ति चार, 'स्वच्छन्द' पंक्ति सोलह, 'ध्यायन्जपन् जाह्नवी' पंक्ति उंतीस में तालव्य अनुनासिक के स्थान पर दंत्य अनुनासिक का प्रयोग किया गया है। 'वर्ण्ण स्वर्ण्ण' में विसर्ग चिह्न छोड़ दिया गया है तथा 'निःक्रियाय' पंक्ति एक तथा 'वहिःकृत' पंक्ति चौदह और 'रिपोःच्छेत्ता' पंक्ति बाइस में स्वरमाधुर्य के नियमों का पालन नहीं हुआ।

अभिलेख की भाषा संस्कृत है। स्वस्त्ययन तथा पंक्ति बत्तीस-तेंतीस और चौंतीस में अंकित दो तिथियों को छोड़कर पूरा अभिलेख पद्य में है। लेख दो भागों में विभक्त है। पहला भाग पंक्ति तेंतीस में 'प्रशस्ति सिद्धा' के साथ समाप्त होता है। यही प्रलेख का मूल भाग है। दूसरे भाग में लेख का शेष अंश है, जिसकी रचना जयवर्मा चंदेल के शासनकाल में मूल लेख के क्षतिग्रस्त हो जाने पर उसके पुनर्लेखन के समय की गई थी।

लेख में 'ओं नमः शिवाय' के प्रारंभिक नमन के बाद शिव, भारती, गणेश आदि की स्तुतियां की गई हैं। इसमें चंदेलवंश को चंद्रात्रेय से उद्भूत बताने के पश्चात नन्नुक से धंग तक वंशावली का वर्णन है। अभिलेख का प्रयोजन धंग द्वारा भगवान शम्भु के देवप्रासाद के निर्माण का उल्लेख करना है। इस मंदिर में दो शिवलिंग—एक मरकत का और दूसरा प्रस्तर का—स्थापित किए गए थे।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

इसी समय धंग द्वारा मंदिर के निकट ब्राह्मणों के आवास बनवाए गए तथा उन्हें भूमि, धन-धान्य, स्वर्ण और गोदान दिए गए। प्रलेख की रचना सं० 1059 (1002 ई०) में नंदन कवि के पौत्र रामकवि ने की थी जिसे कायस्थ यशपाल ने लिखा तथा सिंह ने उत्कीर्ण किया। सूत्रधार छिच्छ ने मंदिर का निर्माण किया।

पाठ

1. ओं नमः शिवाय ।।
विष्टपविकटवटानामजाय मानायवीजभूताय ।
रुद्राय नमः पालनविलयकृते निःक्रियायापि ।।१।।
तूर्ण्णं घूर्ण्णति यत्र गोत्रसि (शि) खरिव्यूहः समूहः पत—
त्यत्यावर्त्तितमूर्त्तिरार्त्तविरुतं कुर्व्वन्ककुप्कुम्भिनाम् ।
सप्तांभोध्यवधिप्रधूतवसुधाव (ब) न्धः कव (ब) [न्धी] कृत—
स्व
2. [र्ग्गा] द्रिः क्षयकांडतांडवविधिः शैवः शिवायास्तु वः ।।२।।
कस्त्वं द्वारि दिगंव (ब) रः क्षपणकः कस्मादकस्मादहो
वा (बा) ले शूलधरो धिगायुधविधिं व (ब) हास्त्वदाहीननु ।
मां जानीहि महेश्वरं स्फुटमिद वस्त्रेप्यभावादिति
प्रेयस्या परिहासतो विहसितं शंभोः शुभायास्तु वः ।।३।।
पशुपतिवदनच्छद्मनि कृतवसतिः पद्मसद्मनि स—
3. दा या ।
जयति विलक्षणरूपा सु (शु) क्लाभा भारती भ्रमरी ।।४।।
गिरिशशिरसि यच्छन्हस्तमिन्दोः कलायां
मुहुरमलमृणालीग्रासगृध्नुः शिसु (शु) त्वे ।
जयति विधुतमूर्द्धोन्नाललीलांवु (बु) जेन
स्मितकुपितमृडानीताडितो नागवक्रः ।।५।।
निजोपज्ञप्रज्ञाप्रसरपरिविस्फारमुकुरे
पदार्थानां सार्थः प्रतिफलति
4. येशामवितथः ।
गिरां ग्रान्गो येषामधरनधिशेते स्वयमयं
नमस्तेभ्यः सद्भ्र्यस्तिलकितजगद्भ्यः किमपरम् ।।६।।
कल्पादौ किल केवलं खमखिलं ध्वांतावनद्धं ध्रुवं
शून्यं वीक्ष्य सिसृक्षतो जगदभूद्ध [द्रा] दमुद्रोनिलः ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तत्राभूदनलोनलाज्जमभूद्बीजादमोघाज्जले
ज्वालामालि हिरन्म (ण्म) यं महद्भूदंडं विभोर्ब्र (ब्र) ह्मणः ॥७॥
तदंडभांडखंडाभ्यां
5. द्यां भुवं विदधे धिया ।
ब (ब्र) ह्मा ब्र (ब्र) ह्मनिधीन् पूत्रान् मरीच्यां [त्र] मुखान्मुनीन् ॥८॥
मध्ये तेषां प्रहृततमसां मानसानां मुनीनां
श्रीमानत्रिः प्रथितमहिमा नेत्रपात्रे प्रसूतम् ।
यस्य ज्योतिः पटिलजटिलं मंडलं वन्द्यमिन्दो—
श्चन्द्रात्रेयः समजनि मुनिस्तस्य पुत्रः पवित्रः ॥९॥
दूरापास्तसमस्तसंशयविपर्यासप्रकामोज्व (ज्ज्व) ल—
ज्ञानालोकविलो—
6. किताखिलजगत्सर्ग्गापवर्ग्गस्थितेः ।
सर्व्वज्ञप्रतिमस्य त [स्य]कृतिनः कारुण्यपुण्यात्मनः ।
पारं गंतुमनन्तदीपमहसः को वा महिम्नां क्षमः ॥१०॥
नीरंध्रो निर [घो] निसर्गसरलः सारो [त्त] राभ्यान्तरो
निर्ग्रंथि पृथुलाग्रभागसुभग पर्व्वस्वरर्व्वस्थितिः ।
आमलं फलितोप्यसेवितविपत्क्रूरादिदावाग्निना
7. न म्लानिं गमितस्ततः समभवद्वंशोयम-
त्यद्भुत ॥११॥
आचंद्रं चंद्रात्रेयवंस (श) जाः क्षितिभुजः क्षितिम् ।
भोक्ष्यन्त्यक्षतदोर्द्दडचंडिमानोत्रितेजसा ॥१२॥
ये पूर्व्वेत्र पवित्रितक्षितितलाः सत्कर्मस [र्ग्ग] प्रियाः ।
प्राणप्रार्थनयाप्य खिन्नमनसः पर्याप्तसत्यव्रताः ।
निःसिदूरितदुर्व्विनीतव (ब) लवन्सा (त्सा) मन्तसीमन्तिनी—
सीमान्ताः पृथिवीभुजो विजयिनस्तेश्योखिलेभ्यो नमः ॥१३॥
8. कालेनेह महावंशे प्रशंशा (सा) प्रांशुरंशुमान ।
मुक्तामणिरिव श्रीमान्नन्नुकोभून्महीपतिः ॥१४॥
तेन विक्रमधनेन धन्विना क्रामता युधि वधाय विद्विषाम् ।
धुन्वताधनुरधिज्यमर्ज्जुनं स्मारिता दिवि विमानगामिनः ॥१५॥
तस्मादुदारकीर्त्तेरजनि जनानंद सुंदर श्रीमान ।
तनयो विनयनिधानं वाक्पतिरिव वाक्पति क्षितिप ॥१६॥
विद्यावदा—
9. तद्दृदयेन हृदि प्रजानामातंकशंकुमकलंकित विक्रमेण ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तेनापनीयं नयनिर्म्मललोचनेन शं (कोचिताः पृथुककुस्थ (त्स्थ)—
कथार्थकंथा ।।१७।।

तस्य क्ष्मातिलकस्य लोकतिलकः पृथ्वीपतेर्भूपतिः
स श्रीमान्विजयो जयाय जगतां जज्ञे कृतज्ञः सुतः ।
यस्योदात्तमत्ते प्रसूतिसमये धाम्नां
महिम्नां निधेः
10. सानंदं सुरसुन्दरीभिरवनौ क्षिप्ताः सलाजाः श्र (स्र) जः ।।१८।।
किन्नरीभिरधिकंधरं सखीराकलय्य भुजयास्य भूभुजः ।
काकलीकलमगीयत स्फुरत्प्रोथमुत्पुलकमुज्व (ज्ज्व) लं यशः ।।१९।।
विनयनतसुमित्रापत्यसंवाहितांह्रिः
प्रवरहरिचमूभिः क्रान्तपर्यन्तभूमिः ।
सुहृदपकृति—
11. दक्षो दक्षिणाशां जिगीषु
पुनरधित पयोधेर्व (र्ब) न्धवै धुर्यमर्यः ।।२०।।
तस्मान्नृपति समुद्रादुदपादि नरेंद्रचंद्रमाः सूनुः ।
श्रीराहिलनामा विहततमा वंदिता (म्यु] दयः ।।२१।।
प्रसन्ने तत्र भूपाले प्रसरच्चित्रभानवः ।
ना [थ] वन्तोर्थिनां वा [सा]: सरोषे द्विषदालयाः ।।२२।।
कोशपानमसिधा (वा) रयोषि
12. तां नाभिभूतजनरत्नसंपदां ।
पक्षपातभिषुदुष्टभूभृतः प्रापुरस्य न सुहृत्सभासदः ।।२३।।
तस्मात्तीव्रप्रतापज्वलनकवलितोत्तालभूपालतूला—
[न्मू] लाच्छीलद्रुमाणामनणुगुणगणालंकृतेः कीर्त्तिभर्त्तुः ।
श्री हर्षोरिहर्षज्वरहरणमणिः क्षीणनिःशेषदोषः
सन्तोषाय प्रजानामज—
13. नि निजभुजाश्रान्तविश्रान्तकीर्तिः ।।२४।।
यं दृष्ट्वैव कृपाणपाणिमकृत व्यापार भा [रं] युधि
क्रोधाक्रान्तविलोचनौ (नो) त्पलदलभ्रूभंगभीमाननम् ।
उत्साहो हृदयाद्धनुः करतला [द्बा] वो मुखात्कीर्त्तयो
दिग्भ्यः साध्वसवेपमानवपुषां नष्टा परेषां क्रमात ।।२५।।
तेनाच्युतेन भीमेन व (ब) लेन कृतवर्म्म
14. णा ।
समुद्रपरिखा पृथ्वी पुरी सू (शू) रेण रक्षिता ।।२६।।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अपक्षधात्रीधररक्षणक्षमः सदैव दोषाकर संगभंगुरः ।
वहिः कृत क्रूरभुजंगसंगमस्तिरस्करोति स्म स तूर्णमर्णवम् ।।२७।।
दूरा [पा] स्तप्रवरतुरगैर्दूरमुक्तातपत्रै-
र्दूरायातैः सपदि शिरसा [शा] सनं धारयद्भि ।
तस्य द्वारि द्विरदमर्दानः स्वेदपंकां-

कितायां

15. सेधा (वा) हेतोः प्रणतिरपमैराशि (सि) तं भूमिपालैः ।।२८।।
वृतोज्व (ज्ज्व) ला गुणाधारा महार्घा हृदयंगमा ।
हारावलीय तस्यासीत्कंछुकेति प्रियोत्तमा ।।२९।।
वर्ण्ण [:] स्वर्ण्णरुचिर्विलोचनयुगं नीलं सचंद्रापलं
पाणिः शो [ण] मणिद्युतिः सचरणो दन्तच्छदो विद्रुमः ।
सद्यः सु (शु) क्ति विमुक्तमौक्तिकतल-

16. स्वच्छ [न्च (ञ्च) चे] तो यतः
स्त्रीरत्नं भुवनैकभूषणमभूत्तेनेयमेका सती ।।३०।।
तस्यास्तस्य स्मरणविहिताघौघविध्वंसनायाः
सत्तीर्थायास्त्रिदशसरितः शान्तनोः पुण्यकीर्त्तेः ।
धर्म्माधारः पितरि सुतरां साधुरिद्धप्रभावो
भीष्मो प (य) द्वत्समजनि सुतः श्रीयशोवर्म्मदेवः ।।३१।।
तस्य विप्रचरणप्रणामजं

17. शैशवे शिरसिजश्रितं रजः ।
अप्यकालपलिताकृतिं दधत्संदधावधिककामनीयकं ।।३२।।
एकस्मै याचमानाय द्विजाय पलदः शिविः ।
यावदर्थिजनं प्रादात्कोटिं कोटिमसौ नृपः ।।३३।।
नंतु भूमिलितालिकेन सदसि व्यस्तासवे (ने) नासितुं
गंतुं पत्रपुरःसरेण चरणैः स्थातुं च नीचैश्चि

18. रम् ।
वक्तु जीव जयादिशेति नियमं कर्त्तुं विनीतात्मना
तस्मिनाजति (नि) राजकेन जयिनि त्रासादिदं सि (शि) क्षितं ।।३४।।
नित्पो (त्यो) दितेंदुभुजगाधिपधाम नित्य-
मानंदि कुंदकुसुमं गगनांगणं च ।
तेनाद्भुतं द्वयमिदं यशशा (सा) व्यधायि
धा [त्री] तलं शि (सि) तवसुधाधवलत्वचित्रम् ।।३५।।
संभवति

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

19. भुवि मनुष्यः सप्ताकूपारपारदृश्वापि ।
न पुनरिह तस्य नृपतेर्गुणसागरपारगः कश्चित् ।।३६।।
गांधारी भजता प्रहृष्टशकुनिस्वानप्रिया प्रेयसीं
भीष्मद्रोणवचांस्यकर्ण्णसुखदान्याकर्ण्ण्य संमूर्च्छता ।
[नो] धर्म्मप्रभवं विरोधितवता प्राप्यापि वंशक्षयं
[स] प्राप्ता धृतराष्ट्रता [सु] सुहृ
20. दा विद्वेषिणेत्यद्भुतम् ।।३७।।
कष्टात्षष्टिसहस्रसूनुभिरसूनुत्सृज्य खात कृत-
स्तत्पौत्रप्रमुखैः पुनस्त्रिभिरसावंभोभिपूरितः ।
वृत्तान्तं सगरस्य सागरविधावाकर्ण्ण्य तूर्ण्णं सुधीः
स्पर्द्धावानधिक व्यधत्त जलधेर्वै (बैं) ल्वं तडागार्ण्णवम् ।।३८।।
रस्येदं सा (शा) रदेन्दुद्युति [ख] रसि (शि) खरक्षुन्न (ण्णा) नक्ष [त्र] चक्रा
ञ्च [त्रं रक्ष] न्नमु-
21. स्मादपथ (न) यति रथं सारथिः सप्तसप्तेः ।
यत्कुंभः सा (शा) तकुम्भस्तुहिनगिरिसि (शि) रश्चुम्बि (म्ब) वि (बि) म्वा (म्बा) र्क्कतर्क्क
कुर्व्वन्नास्ते समस्तस्तुतमसुररिपोर्व्वेस्म (श्म) वैकुण्ठमूर्त्तेः ।।३९।।
महावंस (श) समुत्पन्ना [धारि] तावनी ।
नर्म्मदेवाभवद्देवी पुष्पा तस्य महीपतेः ।।४०।।
सदानसूया विहितागसेप्यसा-
वरुंधती-
22. जीवितमप्युपासिता ।
व (ब) भौ मदान्धान्दमयन्त्यनिन्दिता
मदालसाभून्न पुनः कथंचन ।।४१।।
सादेवी नरदेवाद्देवाधिपतेः स (श) चीव सच्चरित्रं (तं) ।
तस्मादसूत पूत जयंतमिव [धं] गमंगभुवम् ।।४२।।
यशोदानन्द [भाक्च] क्रे पूतनामा रणक्रियां
जातो वृष्णिकुले कंस रिपोःच्छेत्ता नरोत्तमः ।।४३।।
तस्या [त्स-
23. मुत्थि] त क्रोधान्नृसिंहान्नखलाविनः ।
हिरण्यकशिपुप्राणत्राणां चक्रे न केनचित् ।।४४।।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

देवालोकय कौशलेश्वरभितस्तूर्ण्ण समाकर्ण्यता-
मादेश: क्रथनाथ सिंहलपते नत्वा व (ब) हि: स्थीयताम् ।
त्वं वि [ज्ञा] पय कुन्तलेन्द्र वदने दत्वोत्तरीयांचलम् ।
तस्यास्थानगतस्य
24. वेत्रिभिरिति व्यक्तं समुक्तं वच: ॥४५॥
का त्वं कांचीनृपतिवनिता का त्वमंध्राधिपस्त्री
का त्वं राढापरिवृढवधू: का त्वमंगेंद्रपत्नी (।)
इत्यालापा: समरजयिनोयस्य वैरिप्रियाणां
कारागारे सजलनयनेन्दीवराणां व (ब) भूवु: ॥४६॥
का त्वं कस्य किमर्थमत्र भवती प्राप्ता शशांकोज्व (ज्ज्व) ला
सिद्धा:
25. कीर्त्तिरहं वु (बु) धैक सुहृद श्रीधंगपृथ्वीपते: ।
भ्रांत्वा विस्व (श्व) मशेषमागतवती स्फारीभवत्कौतुका
लोकालोकमहामहीध्रसि (शि) खरश्रेणिश्रियं वीक्षितुं ॥४७॥
मरकतमयं तुंगं लिगं यदर्च्चितमैश्वरं
त्रिदशपतिना तस्माल्लध्वं (ब्धं) प्रसाद्य किरीटिना ।
तदवनितलं तेनानीतं युधिष्ठिरपूजितं
जयति
26 जगति श्रीधंगेन प्रणम्य निवेसि (श) तं ॥४८॥
वेस्म (श्म) न्यस्म (श्म) मयस्तेन भूपालेन प्रतिष्ठित: ।
द्वितीयो द्योतते देव: क्लेशपास (श) हरो हर:॥४९॥
तेनायं स (श) रदभ्रसु (शु) भ्रसि (श) खर: श्रीधंगपृथ्वीभुजा
प्राशा (सा) दस्त्रिदशप्रभोर्भगवत: सं (शं) भो: समुत्तंभित: ।
यस्याभ्रंकषकालधौतकलसप्रान्तस्खलत्स्पं (त्स्यं) दनो
मेरो: सृं (श्रृं)-
27. गमतुंगमेव मनुते चित्रीयमाणोरुण: ॥५०॥
भक्त्या भवस्य नूनं शिल्पिस (श) रीरेषु कृतसमावेश: ।
स्वयमेव विश्वकर्म्मा तोरणरचनामिमां चक्रे ॥५१॥
जयति विकटो [व] टोयं हाटककोटीरत्नेन तुलयित्वा ।
अतुलेन तुलापुरुषा: स (श) तसो (शो) विश्राणितास्तेन ॥५२॥
षट्कर्म्मा [भि] रता रता: परहिते संसु (शु) द्धवंस (श) द्वया-
28. प्रारव्धा (ब्धा) ध्वरधूमधूम्रवपुषोप्येकान्ततो निर्म्मला: ।
तेनैते धनधान्यधेनुवसुधादानेन सम्मानिता:

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सौधेषु स्फटिकाद्रिकूटविकटेष्वारोपिता ब्रा (ब्रा) ह्मणाः ।।५३।।
ब्र (ब्र) ह्मसु ब्र (ब्र) ह्मकल्पेषु येष्वेकत्र निवासिषु।
दक्षिणेन तुषारार्द्रि कल्पग्रामो परोभवत् ।।५४।।
रक्षितत्वा क्षितिमंवु (बु) रासि (श) रस (श) नामेतामनन्यार्यति
29. जीवित्वा स (श) रदां स (श) तं समधिकं श्रीधंगपृथ्वीपतिः।
रुद्रं मुद्रितलोचनः स हृदये ध्यायन्ज (ञ्च) पन् जाह्ववी-
कालिन्द्योः सलिले कलेवरपरित्यागादगान्निर्वृतिं ।।५५।।
धर्म्माधिकारमनुसा (शा) सति सा (शा) स्त्रतोत्र-
मित्रे सतां स्फुरितधामनि धर्म्मवु (बु) [द्धौ]।
श्रीमद्यशोधरपुरोधसि वेधसीव
सिद्धिं जगाम जगतीपति कीर्त्तिरेषा ।।५६।।
तार्क्कारिकः प्र
30 वरसावरवंस (श) जन्मा
श्रीनंदनः कविरभूत्कविचक्रवर्ती ।
तस्यात्मजः समजनि श्रुतपारदृश्वा
श्रीमांस्तपोधिकव (ब) लोव (व) लभद्रनामा ।।५७।।
सूनुः सूनृतगीगिरींद्रमहिमा भ (द्रस्य) तस्याभव-
द्भूपालैर्भुवि पूजितांह्रिरनघः साहित्यरत्नाकरः ।
श्रीरामो रमणीयशू (सू) क्तिरचनाचातुर्यधुर्यः कृती
तेनेयं विहिता प्रशस्तिर [चना]
31. भ [क्त्या] लये शालिनः ।।५८।।
न सकीर्ण्णा वर्ण्णा क्वचिदिह न सापत्न्यकलुषाः
स्थिताः कायस्थेन प्रथितकुलशीलोज्व (ज्ज्व) लधिया ।
यशः पालेनायं विदितपदविद्येन लिखितः प्रशस्ते
विन्याश (स): कृतयुगसमाचारश (स) दृशः ।।५९।।
विज्ञानविश्वकर्त्ता धर्म्माधारेण सूत्रधारेण ।
च्छि (छ) च्छा [भि] धेन विदधे प्राशा (सा) दः प्रमथनाथस्य ।।६०।।
यावत्पृथ्वी स-
32. पृथ्वीधरनगरनगा द्रत्तमुद्रा समुद्रै-
र्यावद्भ्राजिष्णुरुष्णद्युतिरयममृतस्यंदनः शीतरस्मि (श्मि):।
यावदव्र (द्ब्र) ह्मांडभांडस्थितिरियमथवा स्थास्नुतां स्थाणवीयः
प्राशा (सा) दस्तावदेष व्रजतु नरपतेर्द्दत्तकैलाशहासः ।।६१।।
लिपि [ज्ञा] नवि [धि] ज्ञेन प्राज्ञेन गुणसा (शा) लिना ।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

सिंहेनेयं समुत्कीर्ण्णा सद्वर्ण्णा रूपसा (शा) लि [नी] ।।६२।।
संवत (त्) १०५९ श्रीखर्ज्जू

33. र वा [ह] के राजश्री [धं] गदेवराज्ये देवश्रीमरकतेश्वरस्य
प्रस (श) स्तिः सिद्धा ।।
उत्खातोच्चमहीभृतो मसृणिता मत्तद्विपतां पदै-
र्द्धौताः संगरसंगमं [गु] ररिपुत्रस्यत्प्रियाश्रूत्करैः।
दिग्भित्तीर्ज्जयवर्म्मदेवनृपतिः कीर्त्यक्षरैर्योलिख-
त्तेनालेखि पुनः प्रशस्तिरमलैरेषाक्षरैः क्ष्माभुजा ।।६३।।
विद्वद्भिर्ज्जयपालसी (शी)-

34. तकिरणोभून्यादराद्वंदितो
गौड़ः प्रोल्लिखदक्षराणि कुमुदाकाराणि सर्प्पत्करः।
कायस्थो जयवर्म्मदेवनृपतेरीशस्य वि (बि) [भ्र] त्कलाः
साहित्यांवु (बु) धिवं (वं) धुरुद्धततमो रुन्धन्ननिंद्यद्युतिः ।।६४।।
संवत ११७३ वैसा (शा) ख शुद्धि ३ शुक्रे ।।

अनुवाद

शिव को नमस्कार।

संसार रूपी अद्‌भुत वट (वृक्ष) के बीजभूत, कभी न उत्पन्न होने वाले, पालन एवं विनाश करते हुए भी निष्क्रिय रुद्र को नमस्कार है ।।१।।

जिसमें कुलाचल पर्वत का समूह शीघ्र ही ढ़हने लगता है, दिशाओं के हाथियों का अत्यधिक परिवर्तित मूर्तियोंवाला समूह आर्तनाद करता हुआ गिर रहा है, जिसमें सात समुद्र सीमावाली कांपती हुई पृथ्वी के बंध से कटे हुए सिर की तरह सुमेरु पर्वत का पात हो रहा है, वह भगवान शिव का प्रलय के समय होनेवाला तांडवनृत्य आप लोगों का कल्याण करे ।।२।।

द्वार में तुम कौन हो, दिगंबर (वस्त्रविहीन) हूं। अहो! संन्यासी अचानक कैसे आ गए? बाले! त्रिशूलधारी हूं। तुम्हारी अस्त्र धारण की विधि को धिक्कार है, मोरपिच्छ भी सांपों के साथ है। मुझे वस्त्रविहीन होने पर भी महेश्वर समझो। इस प्रकार प्रिया (पार्वती) के हास्य से होनेवाला भगवान शम्भु का विहसित आप लोगों के मंगल के लिए हो ।।३।।

जो निरंतर भगवान शिव के मुख के बहाने पद्मसद्म में निवास करती है, वह विलक्षण रूपवाली, शुक्ल कांतियुक्त सरस्वतीरूपी भ्रमरी विजय को प्राप्त करे ।।८।।

बाल्यकाल में शिव के सिर में स्थित चंद्रकला में हाथ (सूंड) को बढ़ानेवाले,

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

बालभाव से बारंबार निर्मल मृणाली (कमलनाल) के कवल को ग्रहण करने की इच्छावाले, मंद मुस्कान एवं कुछ क्रोध से युक्त पार्वती द्वारा कंपाए गए सिर तक ऊंचे लीलाकमल से ताड़ित (गणेश जी का) (मुख) विजय को प्राप्त करे ।।५।।

जिनकी स्वकीय प्रखर बुद्धि के विस्तार परिविस्कार रूपी दर्पण में पदार्थों का व्यापार सत्य रूप में प्रतिफलित होता है। यह वाणी का समूह स्वयं जिनके अधर में आकर सोता है, उन संसार में तिलक की तरह श्रेष्ठ विद्वानों को नमस्कार है। अधिक क्या ? ।।६।।

कल्प के आदि में केवल अंधकारयुक्त संपूर्ण आकाश निश्चय था, आकाश को देखकर संसार की रचना करने की इच्छा करनेवाले व्यापक ब्रह्मा के भद्र (मुख) से अमुद्र (शरीर रहित) वायु उत्पन्न हुआ। उससे अग्नि पैदा हुई, अग्नि से जल पैदा हुआ, जल में कभी निष्फल न होनेवाले बीज से उसी जल में ज्वालाओं की पंक्ति से युक्त हिरण्मय अंड (पृथ्वी) उत्पन्न हुई ।।७।।

उस ब्रह्मांड खंड से ब्रह्मा ने बुद्धि द्वारा स्वर्ग एवं पृथ्वी का निर्माण किया। ब्रह्मवेत्ता (ब्रह्मज्ञान रूपी धनवाले) मरीचि, अत्रि आदि मुनियों को पुत्ररूप में उत्पन्न किया ।।८।।

उन अंधकार को नष्ट करनेवाले मानसपुत्र मुनियों के मध्य में नेत्ररूपी पात्र में प्रसिद्ध महिमावाले श्रीमान अत्रि उत्पन्न हुए। जिनका चंद्रमा की किरणों के समान जटिल (घनी) ज्योति समूह वंदनीय है, उनसे चंद्रात्रेय नामक पवित्र मुनि-वत पुत्र उत्पन्न हुआ ।।९।।

ज्ञान के प्रकाश से समस्त संसार को देखने वाले, सृष्टि (संसार) एवं मोक्ष की स्थिति को जानने वाले, सर्वज्ञ अनुपमेय करुणायुक्त, पुण्यात्मावाले, सौभाग्य-शाली उन अनंत दीपक (सूर्य) के समान तेजस्वी की महिमा को पार करने में कौन समर्थ हो सकता है ? ।।१०।।

छिद्ररहित, पापरहित, स्वभाव से सरल, तथ्ययुक्त हृदयवाले, ग्रंथि (गांठ) रहित, विशाल अग्रभाग (वक्षस्थल) से सुंदर दिखाई पड़ने वाले, पर्वों में भी असा-मान्य स्थितिवाले, आमूल फलित होने पर (प्रारंभ से ही सुख समृद्धियुक्त होने पर भी) विपत्तियुक्त भयानक शत्रुरूपी दावाग्नि से दुखी न होने वाले उन्हीं से यह अति अद्‌भुत वंश उत्पन्न हुआ ।।११।।

अत्रि (मुनि) के तेज से अक्षत भुजदंडों की प्रचंडता से युक्त चंद्रात्रेय वंश में उत्पन्न होने वाले पृथ्वी का उपभोग करने वाले (राजागण) जब तक चंद्रमा रहेगा तब तक पृथ्वी का उपभोग करेंगे ।।१२।।

यहां पर जो पहले पृथिवी को पवित्र करने वाले, श्रेष्ठ कर्म की सृष्टि करने वाले, प्राण की प्रार्थना करने पर भी (मांगने पर भी) अखिन्न (दुःखरहित) मन

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वाले, पूर्ण सत्य व्रतवाले, धृष्ट बलवान सामंतों की स्त्रियों को सिंदूर रहित करने वाले, सीमा के अंत तक पृथिवी का उपभोग करने वाले, विजयी राजा हुए, उन सभी को नमस्कार है ॥१३॥

समय व्यतीत होने पर इस महान वंश में प्रशंसा में प्राशुः (उन्नत) सूर्य के समान, मुक्तामणि की तरह ऐश्वर्ययुक्त नन्नुक (नामक) राजा हुआ ॥१४॥

पराक्रम के धनी उस धनुषधारी के द्वारा, संग्राम भूमि में शत्रुओं के वध के लिए चढ़ी हुई प्रत्यंचावाले धनुष का टंकार करके स्वर्ग में विमान से चलने वालों (देवताओं) को अर्जुन का स्मरण दिला दिया ॥१५॥

उस उदार कीर्ति वाले राजा से, लोगों को आनंद देने वाला, सुंदर, ऐश्वर्यशाली, बृहस्पति के समान (विद्वान) विनयी वाक्पति नामक राजा हुआ ॥१६॥

विद्या से निर्मल हृदय वाले, निष्कलंक पराक्रम से, नीति से निर्मल नेत्रवाले उस राजा ने प्रजाओं के हृदय में आतंक (भय) के शंकु (कीले) को दूर करके (महाराज) पृथु एवं ककुस्थ की कथा के कंथा (मार्ग) को संकुचित करदिया ॥१७॥

उस पृथ्वी में तिलक के समान राजा से संसार का तिलकभूत कृतज्ञ वह ऐश्वर्यशाली विजय नामक राजपुत्र हुआ। उस उदार बुद्धिवाले राजा की महिमा एवं तेज की निधि के जन्म समय में पृथ्वी मंडल में आनंदपूर्वक सुरसुंदरियों ने खीलों और पुष्पहारों का वर्षण किया ॥१८॥

उस राजा की भुजा से उपार्जित किया गया यश सखी किन्नरियों से सुनकर रोमांचपूर्ण आनंद से मधुर स्वर में गाया गया ॥१९॥

विनम्रता से झुका हुआ सुमित्रापुत्र (लक्ष्मण) के समान सुनिश्चित दिन में प्रकृष्ट घोड़ों की सेना से तट की भूमि का अतिक्रमण करके, मित्रों के उपकार में दक्ष, दक्षिण दिशा को जीतने की इच्छा से पुनः श्रेष्ठ समुद्रबंध (रामेश्वरम) तक पहुंचा ॥२०॥

उस समुद्रवत गंभीर राजा से अज्ञान को नष्ट करनेवाला, वंदनीय, अभ्युन्नति वाला, राजाओं में चंद्रमा के समान ऐश्वर्यशाली राहिल नामक पुत्र हुआ ॥२१॥

सूर्य के समान प्रतापी उस राजा के प्रसन्न होने पर मांगने वालों (भिक्षुकों) के घर नाथवान (धनयुक्त) हो गए तथा क्रोध करने पर शत्रुओं के घर फैली हुई अग्नि से युक्त हो गए ॥२२॥

वेश्याओं के कोष को नष्ट करने वाली तलवार ने लोगों की रत्न संपत्तियों को तिरस्कृत नहीं किया तथा उसके मित्रों और सुहृदों से युक्त सभा में दुष्ट राजाओं का अभाव है ॥२३॥

उस तीव्र प्रतापरूपी अग्नि से रुई की तरह उद्दंड राजाओं को जलाने वाले, शीलरूपी वृक्ष की जड़, महान गुणों के समूह से अलंकृत, कीर्तिरूपी स्त्री के पति

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उस राजा से शत्रुओं के हर्ष को ज्वर के समान नष्ट करने में श्रेष्ठ, समस्त दोषों से रहित, अपनी भुजा में भटकती कीर्ति को विश्राम देने वाले, प्रजाओं के संतोष के लिए श्रीहर्ष नामक (राजा) उत्पन्न हुआ ॥२४॥

जिस राजा को संग्रामभूमि में व्यापार भाररहित (युद्ध न करते हुए) क्रोध से आक्रांत होने से रक्त कमल की तरह (लाल), टेढ़े भ्रूभंग से भयंकर मुखवाले, हाथ में तलवार लिए हुए देखकर ही, भय से कांपते हुए शरीर वाले, शत्रुओं का क्रमशः हृदय से उत्साह, हाथ से धनुष, मुख से भाव, दिशाओं से कीर्ति समूह नष्ट हो गए ॥२५॥

उस कभी च्युत न होने वाले, भयंकर, बलवान वर्म्म (कवच) को धारण करने वाले वीर (राजा) के द्वारा समुद्र परिखा वाली पृथ्वी पुरीवत रक्षित हुई। [उस श्रीकृष्ण, भीमसेन, बलराम, कृतवर्मावत शूर राजा से समुद्र परिखा पृथ्वी पुरीवत रक्षित हुई] ॥२६॥

पंखरहित पर्वतों की रक्षा करने में समर्थ निरंतर ही चंद्रमा का सहवास होने पर क्षुब्ध होने वाले, क्रूर सांपों के संग से युक्त समुद्र को जो पक्षरहित राजाओं की रक्षा में समर्थ निरंतर ही दोषों के आलय व्यक्तियों के संग से रहित क्रूर बिट (वेश्या आदि) के संग से रहित जिसने शीघ्र ही समुद्र को तिरस्कृत कर दिया ॥२७॥

श्रेष्ठ घोड़ों को दूर हटाकर, क्षत्र को दूर रखकर, दूर से आए हुए शीघ्र शिर झुकाकर शासन को माननेवाले, हाथियों के मदजल के प्रवाह से कर्दमयुक्त उसके द्वार में राजाओं के द्वारा सेवा के लिए विनम्रतापूर्वक आज्ञा प्राप्त की गई ॥२८॥

उज्ज्वल वर्णवाली, धागे में गूथीं गई बहुमूल्य, हृदय में धारण की गई मोतियों की हारावली (माला) की तरह, उज्ज्वल चरित्रवाली, दया-दाक्षिण्य आदि गुणों से युक्त, पूजनीय (राजा) के हृदय में निवास करने वाली कंचुका नाम वाली उसकी श्रेष्ठ प्रिया (रानी) थी ॥२९॥

जिसका वर्ण स्वर्ण के समान था, दोनों नेत्र युगल चंद्रमा में स्थित दो नील-कमलों के समान थे, चरण और हाथ रक्तमणि की कांति के समान थे, दंतपंक्ति मूंगे के समान थी और उसी समय सीपी से अलग होने वाले मोती के समान स्वच्छ चित्त था, उसी से यह एक सती भूमंडल की आभूषण के समान स्त्री रत्न हुई ॥३०॥

जिसके स्मरण से सारे पाप समूह नष्ट हो जाते हैं, जो समस्त तीर्थों से श्रेष्ठ है ऐसी गंगा के पुत्र भीष्म पितामह के समान देवभक्त, धार्मिक प्रथित यशवाला यशोवर्मा (नामक) पुत्र हुआ ॥३१॥

बाल्यावस्था में ब्राह्मणों के चरणों में प्रणाम करने से सिर में लगी हुई चरण-धूलि के कारण असमय (वृद्धावस्था के बिना ही) में ही वृद्धावस्था को धारण

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

करते हुए उसने अधिक रमणीयता प्राप्त की ॥३२॥

प्राण की याचना करने वाले एक कपोत पक्षी की राजा शिवि ने अपने शरीर का मांस देकर जिस प्रकार की रक्षा की थी, उसी प्रकार उस वृद्ध राजा (यशोवर्मा) ने भी अपने द्वार पर आने वाले याचकों को भरपूर धन देकर संतुष्ट किया ॥३३॥

राजाओं के समूह विनम्र भाव से पृथिवी तक सिर झुकाकर सभा में विराजमान उसको प्रणाम करते थे, बिना अनुमति उसके समीप कोई नहीं जा सकता था उस विजयी (राजा यशोवर्मा) के भय से मानो जय-जीव लोग कहना सीख गए थे ॥३४॥

उसी राजा के द्वारा, नित्य जिसमें चंद्रमा उदित रहता है इसप्रकार का सांपों के स्वामी (शेष) का भवन, नित्य आनंद देनेवाला, कुंद पुष्प के समान गगनांगण इन दोनों अद्भुत वस्तुओं का निर्माण कराया गया था जिसने अपने यश से पृथ्वीमंडल को चूने के समान धवलता प्रदान की ॥३५॥

सात समुद्रों को पार करनेवाला ऐसा कोई भी मनुष्य पृथिवी पर अवतीर्ण नहीं हुआ जो उस राजा के गुणसमुद्र का पार पा सका हो, अर्थात सात समुद्रों के लंघन से भी उसके गुणसमुद्र का लंघन दुष्कर था ॥३६॥

प्रसन्न शकुनी जिसका हार्दिक स्नेही है, गांधारी जिसकी सखी है ऐसी धृतराष्ट्रता भीष्म, द्रोण और कर्ण से शून्य वचनों को सुनकर तथा पारिवारिक शत्रुओं के द्वारा वंश क्षीणता को प्राप्त मूर्छित नहीं हुई अर्थात यशोवर्मा की राष्ट्रीय स्थिति बड़ी ही सुदृढ़ थी, जो शत्रुओं द्वारा अपराजेय रही ॥३७॥

साठ हजार सगरपुत्रों ने अपने प्राणों की बाजी लगाकर जिस खात (समुद्र) को खोदा उसे उनके तीन पीढ़ियों के पौत्रों ने बड़ी कठिनाई के साथ जल से पूरा किया। सगरपुत्रों के द्वारा सागर निर्माण का वृतांत सुनकर विद्वान यशोवर्मा ने समुद्र से बड़े बिल्व नामक तालाबसमुद्र का निर्माण कराया ॥३८॥

जिस शरदकालीन चंद्रमा की क्रांति के समान ऊंचे शिखर में नक्षत्रों के समूह चूर्ण हो रहे हैं जिससे सप्तसाप्ति (सूर्य) का सारथी चक्रों की रक्षा करता हुआ रथ को ले जाता है; जिसका स्वर्णकलश हिमालय पर्वत की चोटी का स्पर्श करके प्रतिबिंबित होने वाले सूर्य के समान प्रतीत होता है, उस समस्त व्यक्तियों से वंदित, असुरों के शत्रु वैकुंठ भगवान का यह मंदिर है ॥३९॥

उस यशोवर्मा राजा की महारानी उत्तम कुल में उत्पन्न, पृथिवी के समान क्षमाशील एवं गंभीर चित्तवाली पुष्पा नाम की हुई ॥४०॥

वह (पुष्पा) अरुंधती के समान पवित्राचरणशीला, पापियों पर भी क्रोध न करने वाली पतिभक्ता, मदांधों का दमन करने वाली, अनिंदित स्वरूपा, मदन

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

प्रभावान थी ।।४१।।

वह देवी (पुष्पा) शची के समान सच्चरित्रा थी। उसने राजा (यशोवर्मा) से जयंत के समान इस पृथ्वी पर धंग नामक प्रतापी पुत्र उत्पन्न किया ।।४२।।

मनुष्यों में श्रेष्ठ वृष्णिकुल में उत्पन्न कंस नामक शत्रु को नष्ट करने वाले, रणक्रिया में कुशल यशोदानंदन(कृष्ण)के समान वह मनुष्यों में श्रेष्ठ हुआ ।।४३।।

क्रुद्ध नखच्छेदी नृसिंह भगवान से कोई भी हिरण्यकशिपु के प्राणों की रक्षा नहीं कर सका, ठीक उसी प्रकार क्रुद्ध हुए उससे कोई भी किसी की रक्षा नहीं कर सकता ।।४४।।

कोशल, क्रथ, सिंहल और कुंतल के राजा झुककर उसकी आज्ञाएं सुनते थे ।।४५।।

क्या तुम कांचीनृप की वनिता हो, क्या तुम आंध्राधिप की स्त्री हो, क्या तुम राढ़ नृपति की वधू हो, क्या तुम अंग नरेश की पत्नी हो—इसप्रकार जिसके कारागार में सजल नयनवाली युद्ध क्षेत्र से विजित शत्रुओं की स्त्रियां आपस में वार्तालाप करती हैं ।।४६।।

चंद्रमा के समान उज्ज्वल कांति संपन्न तुम कौन हो और यहां क्यों आई हो ? मैं विद्वानों के सुहृद राजा धंग की कीर्ति हूं । मैं समस्त विश्व का भ्रमण कर कौतुकाविष्ट होकर लोकालोक पर्वत शिखर पर वास करने वाली लक्ष्मी को देखने यहां आई हूं ।।४७।।

अर्जुन ने त्रिदशपति ईश्वर (शंकर) की अर्चना कर उनके मरकतमय उत्तुंग-लिंग को प्राप्त किया । पृथ्वी पर आने पर युधिष्ठिर ने जिसकी पूजा की । उसी लिंग को श्रीधंग राजा ने श्रद्धाभक्ति से प्रणाम कर लोक में स्थापित किया ।।४८।।

श्रीधंग राजा ने अपने भवन में समस्त क्लेश-पाश को नष्ट करने वाले भगवान शंकर की एक दूसरी पाषाणमयी मूर्ति की स्थापना की ।।४९।।

श्रीधंग ने पृथ्वी की भुजा के समान, शरतकालीन मेघ की तरह शुभ्र शिखर-वाला देवाधिदेव भगवान शंकर का एक विशाल प्रासाद बनवाया जिसके गगन-चुंबी शिखर में रखे हुए स्वर्णकलश के टक्कर से रथ के स्खलित हो जाने के कारण चकित चित्त अरुण (सूर्य के सारथी) ने उसे मेरु पर्वत सदृश ऊंचा शिखर माना ।।५०।।

भगवान शंकर की भक्ति से शिल्पियों के शरीर में प्रविष्ट होकर स्वयं विश्व-कर्मा ने मंदिर के तोरण द्वार की रचना की ।।५१।।

इस विकटदानी राजा की जय हो जिसने कोटियों स्वर्ण मुद्राओं से सैकड़ों बार तुलादान दिया ।।५२।।

उसने षटकर्मरत, परहित संपादन करने वाले तथा यज्ञधूम से धूम्र शरीर-

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

वाले एवं निर्मलांतः करवाले ब्राह्मणों को स्फटिक गिरि जैसे अपने भवनों में धन, धान्य, धेनु और वसुधा देकर सम्मानित किया ।।53।।

एकत्र वास करने वाले ब्रह्मस्वरूप उन ब्राह्मणों का तुषार पर्वत के दक्षिण एक कल्प ग्राम था ।।54।।

समुद्र परिवेष्टित इस विशाल पृथ्वी की रक्षा करते हुए सौ से अधिक वर्षों तक जीवित रहकर उस श्रीधंग राजा ने गंगा-यमुना के संगम (प्रयाग) के पवित्र जल में निमीलित नेत्रों से भगवान शिव का हृदय में जप और ध्यान करते हुए अपना शरीर त्यागकर निवृत्ति प्राप्त की ।।55।।

सज्जन समुदाय में स्फुरित तेज वाले, शास्त्र-समवाय को ही मित्र माननेवाले धर्मबुद्धि विधाता के समान धर्माधिकार आसन पर बैठनेवाले यशोधर की कीर्ति समस्त पृथ्वी पर फैल गई ।।56।।

तक्कारिका के श्रेष्ठ सावर वंश में, कवि चक्रवर्ती नंदन नाम का कवि हुआ। श्रीमान के तपस्या के बल प्रभाव से वेदों में पारंगत उसका पुत्र बलभद्र हुआ ।।56।।

उस बलभद्र कवि का मधुरभाषी हिमालय जैसे गौरवशाली भूलोक में राज-समूह से पूजित, रमणीय सूक्ति रचना करने में दक्ष, साहित्य रत्नाकर श्रीराम नामक पुत्र हुआ, जिसने भक्तिपूर्वक इस प्रशस्ति की रचना की ।।58।।

वर्णों की संकीर्णता और पंक्ति दोष से सर्वथा मुक्त, प्रथितकुलवाले, निर्मल बुद्धिवाले, पद रचना में निष्णात कायस्थ यशपाल ने सत्ययुग के समाचार के समान इस प्रशस्ति का लेखन किया ।।59।।

विज्ञान विश्वकर्ता (विशेष ज्ञाता) धर्माधिकार छिच्छा नाम के सूत्रधार (शिल्पी) से प्रमथनाथ का मंदिर बनवाया ।।60।।

जव तक शेषनाग नगरों, पर्वतों, समुद्रों सहित पृथ्वी तथा प्रखर किरणवाले भगवान सूर्य एवं अमृतबिंदुओं की वर्षा करनेवाले सुधाकर (चंद्र) और ब्रह्मांड एवं चिर स्थिर रहनेवाले पदार्थों की स्थिति है तब तक कैलाश का उपहास करने वाले राजा का यह मंदिर स्थित रहे ।।61।।

लिपिविज्ञ विद्वान गुणीसिंह ने सद्वर्ण विशिष्ट सर्वांक पूर्ण प्रशस्ति उत्कीर्ण की ।।62।।

संवत 1059 श्री खज्जूरवाहक (नगर) में राजा श्रीधंगदेव के राज्य में मर-कतेश्वर की यह प्रशस्ति सिद्धि हुई ।।62।।

उत्कीर्ण किया गया यह लेख या तो मत्त हाथियों ने पैरों से कुचल डाला या फिर किसी युद्ध में शत्रुओं द्वारा नष्ट कर दिया गया। अतः फिर से राजा जयवर्म-देव ने कीर्ति की स्थापना के लिए प्रशस्ति को सुंदर अक्षरों में लिखवा दिया ।।63।।

साहित्य सागर में मज्जन करनेवाले अनिंद्य कांति से युक्त विद्वानों में प्रशंसित

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

शीघ्र लेखनकला में कुशल गौड़ कायस्थ जयपाल ने कुमुदों के समान (गोल गोल) स्पष्ट अक्षरों में राजा जयवर्मदेव की इस कलासंपन्न प्रशस्ति को लिखा ।।64।।

संवत 1173 वैशाख शुक्ल पक्ष 3 शुक्रवार को ।

तिथिविहीन खजुराहो जैन मूर्तिलेख

एक पंक्ति का यह अपूर्ण लेख एक मूर्ति के सिंहासन पर 5¼″ लंबे स्थान पर उत्कीर्ण है। अक्षरों की ऊंचाई 5/8″ है। लिपि नागरी और भाषा संस्कृत है।

पाठ

1. [ग्र] हपत्यन्वये श्रेष्ठि श्रीपाणिधर [।।]

अनुवाद

1. ग्रहपति अन्वय में श्रेष्ठि श्रीपाणिधर ।

संवत 1205 का खजुराहो जैन मूर्तिलेख

मंदिर क्रमांक 27 के आदिनाथ मंदिर में मूल प्रतिमा के अतिरिक्त एक और श्याम पाषाण की पद्मासन प्रतिमा है। लांछनविहीन होने से उसका अभिज्ञान नहीं हो सका। इस मूर्ति के सिंहासन में दो फीट लंबा एक पंक्ति का लेख है। उसके अक्षरों की ऊंचाई ½″ है। लिपि नागरी तथा भाषा संस्कृत है। लेख संवत 1205 (1148 ई०) में अंकित है।

पाठ

1. ओं ।। ग्रहपत्यन्वये श्रेष्ठिपाणिधरस्तस्य सुत श्रेष्ठिति (त्रि) विक्रम तथा आल्हण । लक्ष्मीधर ।। संवत् 1205 । माघ वदि 5 ।।

अनुवाद

1. ओं । ग्रहपति वंश में श्रेष्ठि पाणिधर, उसके पुत्र श्रेष्ठि विक्रम, अल्हण तथा लक्ष्मीधर । संवत 1205, माघ वदि 5 ।।

संवत 1215 का खजुराहो जैन मूर्तिलेख

मंदिर क्रमांक 27 में मूलनायक आदिनाथ की दूसरी ओर श्याम पाषण से निर्मित, पद्मासन मुद्रा में तीर्थंकर संभवनाथ की एक मूर्ति है, जिसके सिंहासन पर एक पंक्ति का एक लेख है। यह लेख दो भागों में विभक्त है। पहला भाग बीस इंच

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

तथा दूसरा अठारह इंच लंबा है। अक्षरों की ऊंचाई 3/4" है। लिपि नागरी तथा भाषा संस्कृत है। मूर्तिलेख संवत 1215 (1159 ई०) में अंकित है। लेख से ज्ञात होता है कि यह मूर्ति मदनवर्मा चंदेल के शासनकाल में गृहपति वंश के श्रेष्ठि देदू, उसके पुत्र पाहिल्ल, उसके वंशज साधु साल्हे द्वारा निर्मित कराई गई थी। अंत में मूर्तिकार रामदेव का भी नाम उत्कीर्ण है। इस मूर्तिलेख का पाहिल्ल तथा वर्ष 1011 के खजुराहो जैन मंदिर अभिलेख का पाहिल्ल एक प्रतीत होते हैं।

पाठ

ओं ।। संवत 1215 माघ सुदि 5 श्रीमन्दनवर्म्मदेवप्रवर्द्धमानविजयराज्ये ।। गृह-पतिवंसे (शे) श्रेष्ठिदेदू तत्पुत्रपाहिल्ल :। पाहिल्लां गगरुहसाधुसाल्हे [ति] नेद (यं) प्रतिमा कारितेति ।। तत्पुत्रा महागण। महीचंद्र। सि [रि] चंद्र। जिनचंद्र। उदयचंद्र प्रभृति। संभवनाथ प्रणंमति नित्यं ।। मंग [ल] × × ×
रूपकाररामदेव [:] ।।

अनुवाद

ओं। संवत 1215 माघ, सुदि 5, श्रीमान् मदनवर्मादेव के विजयों द्वारा बढ़ते राज्य में। ग्रहपति वंश में श्रेष्ठि देदू के पुत्र पाहिल्ल के वंश में साधु साल्हे ने इस प्रतिमा का निर्माण कराया। उसके पुत्र महागण, महीचंद्र, सिरिचंद्र, जिनचंद्र, उदयचंद्र आदि संभवनाथ को नित्य प्रणाम करते हैं। मंगल × × × ×
रूपकार रामदेव।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

8

उपसंहार

खजुराहो नगर चंदेलों का धार्मिक और सांस्कृतिक केंद्र था। उनके आदिपुरुष अनुश्रुतियों में विख्यात राजा चंद्रवर्मा ने इसकी आधारशिला रखी। प्राचीनकाल में यह स्थान विभिन्न भौगोलिक इकाइयों से संबद्ध रहा है जिनमें चेदि, दशार्ण, चंद्रावती, डहाल या डभाला और जेजाकभुक्ति प्रमुख हैं। इसमें से अंतिम इकाई जेजाकभुक्ति के समय यह स्थान खर्जूरवाहक कहलाता था। इसी का अपभ्रंश रूप आजकल का खजुराहो है। यद्यपि यह सुंदर मार्गों से एक एक मनोरम नगर था, तथापि भरहुत या विदिशा के समान किसी महापथ पर स्थित न होने के कारण भारत के अन्य वाणिज्यिक और सांस्कृतिक नगरों से इसका सीधा संपर्क नहीं रहा। इसका एक लाभ भी हुआ कि नगर सदैव विदेशी आक्रांताओं से सुरक्षित रहा।

यहां के शासक समकालिक नरेशों में सर्वाधिक शक्तिमान थे। उन्होंने अपने बाहुबल और सूझ-बूझ से चंदेल साम्राज्य को न केवल सुदृढ़ किया अपितु एक लंबे समय तक उत्तरभारत की राजनीति को सक्रिय रूप से प्रभावित किया। यही कारण है कि इस राजवंश के एक शासक ने कन्नौज नरेश महीपाल को पुन: सिंहासनारूढ़ कराया, तो एक अन्य शासक धंग ने यवन आक्रांता सुबुक्तगीन के विरुद्ध शाही नरेश जयपाल की सहायता की। ऐसे शक्तिशाली नरेशों के सुशासन में खजुराहो का चरम उत्कर्ष हुआ। विपुल श्रम लगाकर और प्रचुर संपदा व्यय कर इस नगर को गगनचुंबी देवप्रसादों से अलंकृत किया गया। इन उत्तुंग देवालयों की सज्जापंक्तियों तथा रथिकाओं पर उत्कीर्ण मूर्तियों से चंदेलकालीन सामाजिक जीवन, वेशभूषा, केशविन्यास, वस्त्राभूषण, मनोरंजन, घरेलू उपकरण तथा आर्थिक जीवन के विविध पक्ष उजागर होते हैं। इस प्रकार बिना बोले ही ये प्रतिमाएं बहुत कुछ बताती हैं।

मंदिर देवताओं के भौतिक आवास हैं जिनसे तत्कालीन धार्मिक अवस्था आलोकित होती है। इस समय चंदेल साम्राज्य में सबसे अधिक जोर ब्राह्मण धर्म या पौराणिक हिंदू देवताओं की उपासना थी। इन देवताओं में सबसे प्रमुख थे विष्णु और शिव जो विविध नामों से ज्ञात थे। इस देवसमूह में इनके साथ ब्रह्मा, सूर्य, गणेश, कार्तिकेय, इंद्र, अग्नि, यम, वरुण, मरुत आदि का समावेश था। देवियों में लक्ष्मी, दुर्गा, पार्वती, भगवती, महिषासुर मर्दिनी आदि विशेष

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

उल्लेखनीय हैं। इनके अतिरिक्त बहुत से छोटे-मोटे देवी-देवता भी थे। प्राय: ये सभी आज भी श्रद्धा के पात्र हैं। इस प्रकार कहा जा सकता है कि आधुनिक हिंदू धर्म ने इस काल में अपना स्वरूप ग्रहण कर लिया था। जैनधर्म की लोकप्रियता भी उन दिनों कम न थी। इसका अन्य धर्मों के साथ असाधारण सद्भाव रहा। किंतु बौद्धधर्म निश्चय ही अवनति की ओर था। विभिन्न मतों में धार्मिक कलह न थी। सभी धर्मों में व्याप्त आश्चर्यकारी समन्वय की भावना इस समय की एक महान उपलब्धि मानी जा सकती है। ऐसा प्रकट होता है मानो लोगों को यह अनुभव हो चुका था कि ब्राह्मण, जैन तथा अन्य अनेक संप्रदायों में कोई मौलिक भेद न था। इसीलिए कोकल्ल के खजुराहो प्रस्तर अभिलेख में उस परम शक्ति को ही वामन, बुद्ध और जिन कहा गया है। इसी प्रकार हिंदू धर्म के विभिन्न देवताओं को एक समाहित हरि-हर, हरि-हर-पितामह, हरि-हर-हरिण्यगर्भ और अर्धनारीश्वर आदि की मूर्तियां बनाकर उनमें सामजंस्य बनाए रखने का प्रयत्न किया गया। यद्यपि ऐसे भी अनेक उदाहरण हैं कि अपने अपने विश्वासों की मान्यता अधिकाधिक लोगों द्वारा स्वीकृत कराने के कार्य में लगे हुए कठोर संप्रदायवादियों में तीखे आपसी वाग्युद्ध और एक दूसरे को नीचा दिखाने के प्रयत्न भी यदा-कदा चलते रहते थे तथापि राजागण प्राय: इस प्रकार की प्रवृत्तियों से अलग ही रहते थे।

वर्ण आज की ही भांति तब भी फौलादी ढांचे का काम करता था। हिंदुओं के बीच ब्राह्मणों की महत्ता पूर्णरूपेण प्रतिष्ठित हो चुकी थी। चंदेल अभिलेखों से ज्ञात होता है कि वेद-वेदांग में पारंगत ब्राह्मण छः धर्मों के पालन में तत्पर रहते थे। ये ब्राह्मण अपने गोत्र तथा शाखा से प्रसिद्ध होते थे।

नागर शैली के श्रेष्ठ मंदिरों के लिए खजुराहो विश्व में प्रसिद्ध है। आकार-सौंदर्य और मूर्ति संपदा की दृष्टि से ये भारत में विद्यमान पुरावशेषों में अद्वितीय हैं। वास्तु के समान खजुराहो का शिल्प वैभव भी असाधारण है। यहां की मूर्तिकला ने प्राचीन परंपरा से बहुत कुछ ग्रहण किया है, किंतु वह मुख्य रूप से पूर्व मध्ययुगीन है। खजुराहो मध्यदेश के बीच में स्थित है, जिस पर पूर्व और पश्चिम की कला का प्रभाव पड़ा है। इसीलिए यह कला पूर्वी और पश्चिमी भारतीय कला विधाओं के मनोरम समन्वय के रूप में विकसित हुई। भव्यता, अनुभूति की गहनता और शिल्पी की आंतरिक भावाभिव्यक्ति यद्यपि यहां की कला अपनी पूर्ववर्ती गुप्तकालीन शास्त्रीय कला से श्रेष्ठ नहीं है तथापि उसमें मानवीय सजीवता का आश्चर्यकारी स्पंदन है। खजुराहो में मूर्तियों की बहुलता एवं उन पर प्रदर्शित भावोद्रेक से दर्शक अनुभव करता है जैसे मंदिरों पर उभरी मूर्तियों का साकार सौंदर्य मनभावन स्वर लहरी के समान उसकी आत्मा की अनंत गहराइयों में उतरता जा रहा है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

यद्यपि मूर्तियों में सुडौलता का अभाव नहीं है तथापि परवर्ती मूर्तियां रूढ़िगत हैं जिनमें शिल्पी के धैर्य का अभाव परिलक्षित होता है। कोरकर बनाई गई तथा प्रतिरूपित मूर्तियों का स्थान नुकीली कोणवाली मूर्तियों ने ले लिया है जिनमें अंकन की सुकुमारता के स्थान पर समतल, लंबवत और त्रिभंग पर अधिक बल दिया गया है। तो भी, यह कला अपनी समकालिक कलाशैलियों से मानवीय भावों और जीवन के क्रियाकलापों के विविध अंकन में कहीं अधिक श्रेष्ठ है। सुरति से शिथिल तथा कामोत्तेजक हाव-भाव इसकी वे विशेषताएं हैं जिससे खजुराहो कला समकालीन कलाओं में श्रेष्ठ है।

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

संदर्भ ग्रंथ सूची

मूल-ग्रंथ (संस्कृत, प्राकृत, हिंदी)

ऋग्वेद : अनुवादक मैक्समूलर सै० बु० जिल्द 32 (आक्सफोर्ड 1891) और एच० ओल्डेनवर्ग, जिल्द 47 (आक्सफोर्ड 1897).

गौतम धर्मसूत्र : आनंदाश्रम संस्कृत सीरीज, पूना, अनुवाद सै० बु० खं० 2.

अंगुत्तरनिकाय : पालि पब्लिकेशन बोर्ड विहार, 1960.

महाभारत : भंडारकर ओरियंटल रिसर्च इंस्टीट्यूट, पूना, 1923-1966.

ब्रह्मांडपुराण : बंबई, 1913.

भागवतपुराण : सं० बी० एल० पन्सीकर, बंबई, 1920, गोरखपुर, वि० सं० 2008.

मत्स्यपुराण : पूना, 1907.

वायुपुराण : पूना, 1908.

वामनपुराण : बंबई

विष्णुधर्मोत्तर पुराण : वेंकटेश्वर प्रेस, बंबई.

आदिपुराण (जैन) : भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 1951.

कादंबरी : वाराणसी, वि० सं० 2018.

प्रबोध चंद्रोदय : कृष्ण मिश्र, बनारस, 1955.

परमाल रासो : चंदबरदाई, सं० डा० श्यामसुंदर दास, वाराणसी, 1919.

हिंदी-ग्रंथ

अग्रवाल, वासुदेवशरण : पाणिनिकालीन भारतवर्ष (बनारस, वि० सं० 2012).

अवस्थी, रामाश्रय : खजुराहो की देव प्रतिमाएं (आगरा, 1967).

उपाध्याय, वासुदेव : प्राचीन भारतीय मूर्तिविज्ञान (वाराणसी, 1970).

काले, दा० न० : खर्जूरवाहक अर्थात वर्तमान खजुराहो, प्रयाग, वि० सं० 2014.

घोष, अमलानंद (सं०) : जैनकला एवं स्थापत्य (नई दिल्ली, 1975).

जैन, नीरज : खजुराहो के जैन मंदिर (सतना, 1977).

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

जोशी, नीलकंठ : हिंदू मूर्तिविज्ञान (पटना).
धामा और चंद्रा : खजुराहो (देहली, 1958).
बाशम, ए० एल० : अद्‌भुत भारत (आगरा).
भंडारकर, आर० जी० (अनु० माहेश्वरी प्रसाद) : वैष्णव, शैव और अन्य धार्मिकमत, (वाराणसी, 1967).
मानव, महेंद्रकुमार (सं०) : कलातीर्थ खजुराहो (छतरपुर, 1968).
मिश्र, रमानाथ : भारतीय मूर्तिकला (नई दिल्ली, 1978).
मिश्र, जयशंकर : ग्यारहवीं सदी का भारत (वाराणसी, 1968).
मिश्र, इंदुमती : प्रतिमा विज्ञान (भोपाल, 1972).
मोतीचंद्र : सार्थवाह (पटना, 1953).
वाजपेयी, कृष्णदत्त : मल्हार (सागर, 1978).
वाजपेयी, कृष्णदत्त : भारतीय वास्तुकला का इतिहास, (लखनऊ, 1972).
संपूर्णानंद : गणेश, (बनारस, वि० सं० 2001).
संपूर्णानंद : हिंदू देव परिवार का विकास (इलाहाबाद, 1964).

महत्वपूर्ण लेख (हिंदी)

अमर, गोपीलाल : खजुराहो का घंटई मंदिर, अनेकांत, खंड 19, पृ० 229 तथा आगे.
— खजुराहो का पार्श्वनाथ मंदिर, मध्यभारती (सागर विश्व०) 1 65-67 अंक 8-10, पृ० 20-25.
— खजुराहो का आदिनाथ जिनालय, अनेकांत, खंड 24, पृ० 122-130.
जैन, नीरज : खजुराहो का आदिनाथ जिनालय, अनेकांत, खंड 17, पृ० 375 तथा आगे.
— खजुराहो का जैन संग्रहालय, वही, खंड 18, पृ० 18 तथा आगे.
— खजुराहो का पार्श्वनाथ जिनालय, वही, खंड 16, पृ० 150 तथा आगे.
— जैन पुरातत्व में गंगा-यमुना, वही, खंड 16, पृ० 40 तथा आगे.
तिवारी, मारुतिनंदन प्रसाद : खजुराहो के आदिनाथ मंदिर के प्रवेश द्वार की मूर्तियां, अनेकांत, खंड 24, पृ० 218-21
— खजुराहो के पार्श्वनाथ मंदिर की रथिकाओं में जैन देवियां, अनेकांत, खंड 24, पृ० 251-54

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

पाठक, वि० श० : वैकुंठ का विकास, राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त अभिनंदन ग्रंथ, कलकत्ता, 1959.

वाजपेयी, कृष्णदत्त : भारतीय साहित्य और कला में गणेश तथा उनका प्रतीकत्व, कल्याण (गणेश अंक), वर्ष 49, पृ० 417-18.

— भारतीय पुरातत्व में सूर्य, कल्याण (सूर्य अंक) वर्ष 53, पृ० 423-25.

शर्मा, ब्र० ना० : मूर्तिकला में गणेश, कल्याण (गणेश अंक) वर्ष 49, पृ० 413-16.

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

चित्र सूची

1. विश्वनाथ मंदिर
2. पार्श्वनाथ मंदिर
3. धरणेन्द्र—पद्मावती, शांतिनाथ मंदिर
4. वराह, खजुराहो संग्रहालय
5. नृत्त-गणेश, खजुराहो संग्रहालय
6. पार्श्वनाथ, जैन संग्रहालय
7. पार्वती, खजुराहो संग्रहालय
8. नर्तकी, आदिनाथ मंदिर
9. आदिनाथ मंदिर
10. वाह्यभित्ति, पार्श्वनाथ मंदिर
11. घंटई मंदिर
12. कंदरिया महादेव मंदिर
13. वेणुवादन, कंदरिया मंदिर
14. अंविका मंदिर, क्र० 27
15. वैकुंठ, खजुराहो संग्रहालय
16. यम, पार्श्वनाथ मंदिर
17. सप्तमातृका, खजुराहो संग्रहालय
18. कौल गुरू, लक्ष्मण मंदिर

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

1

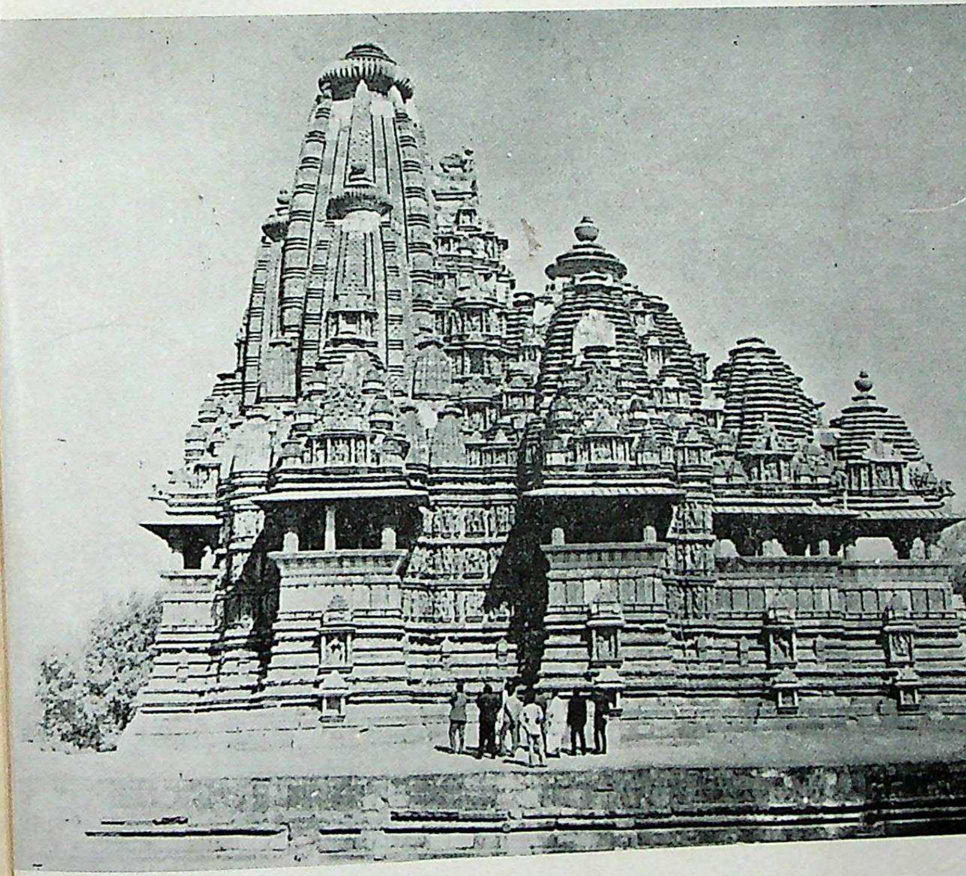

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

2

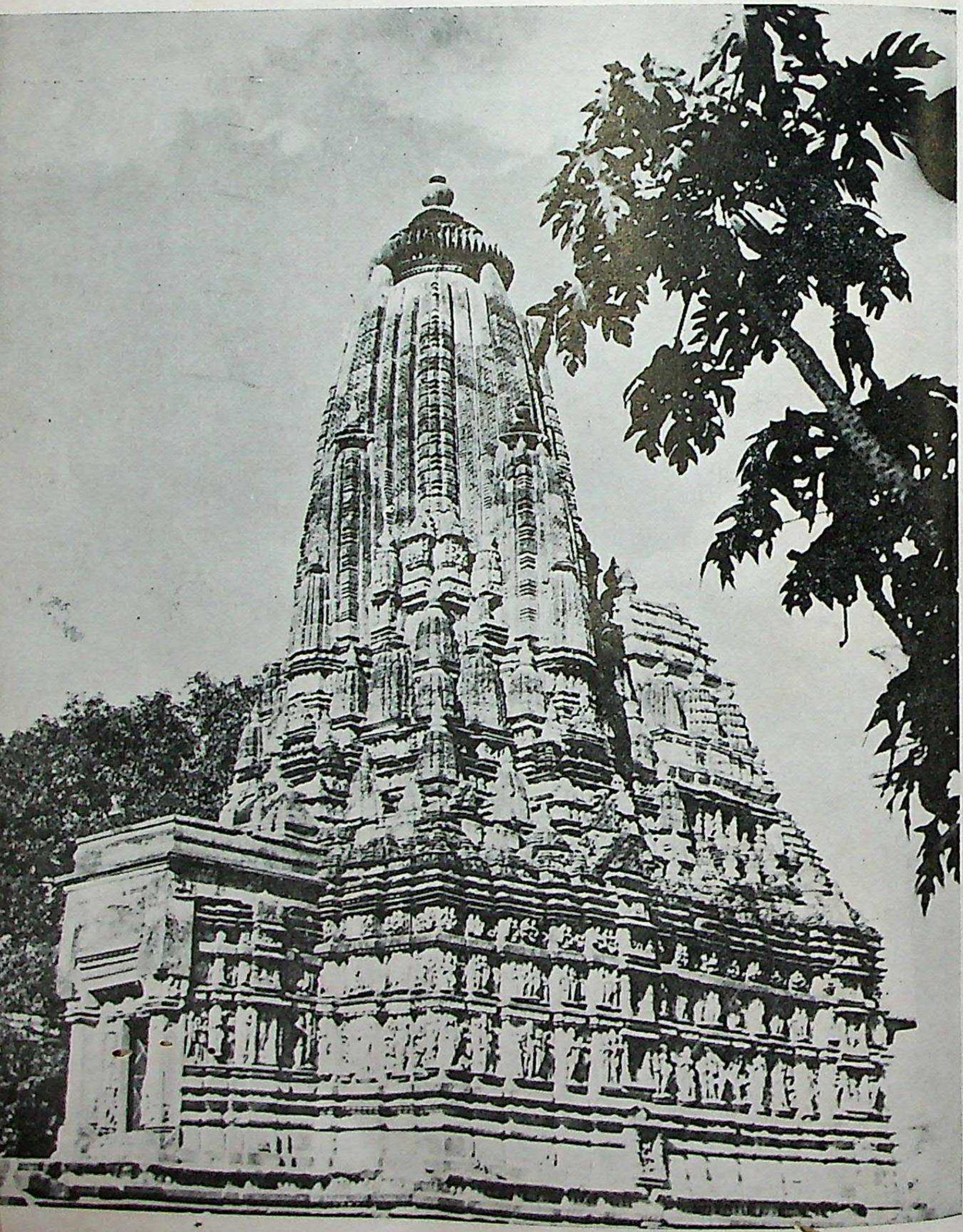

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

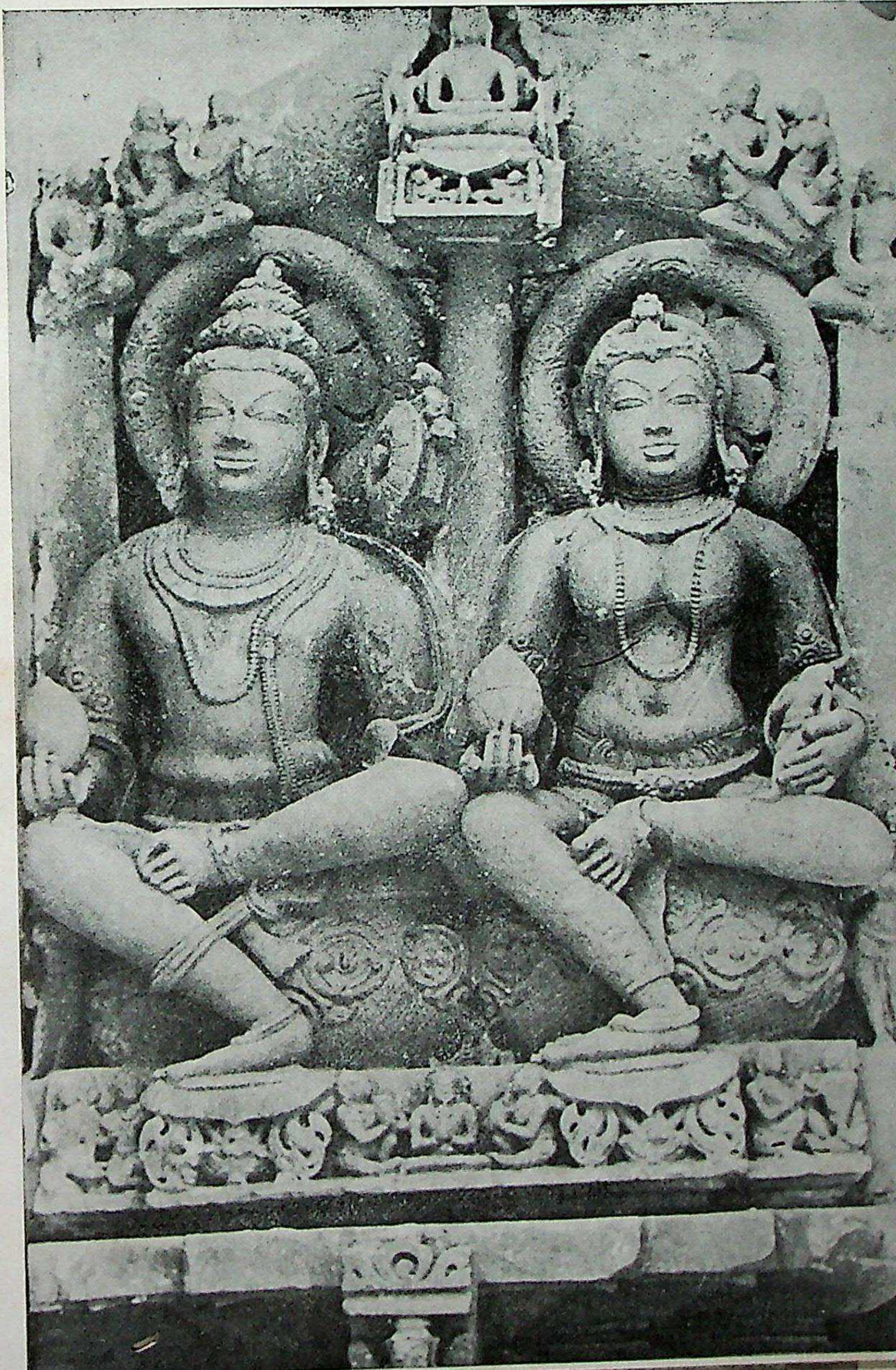

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

4

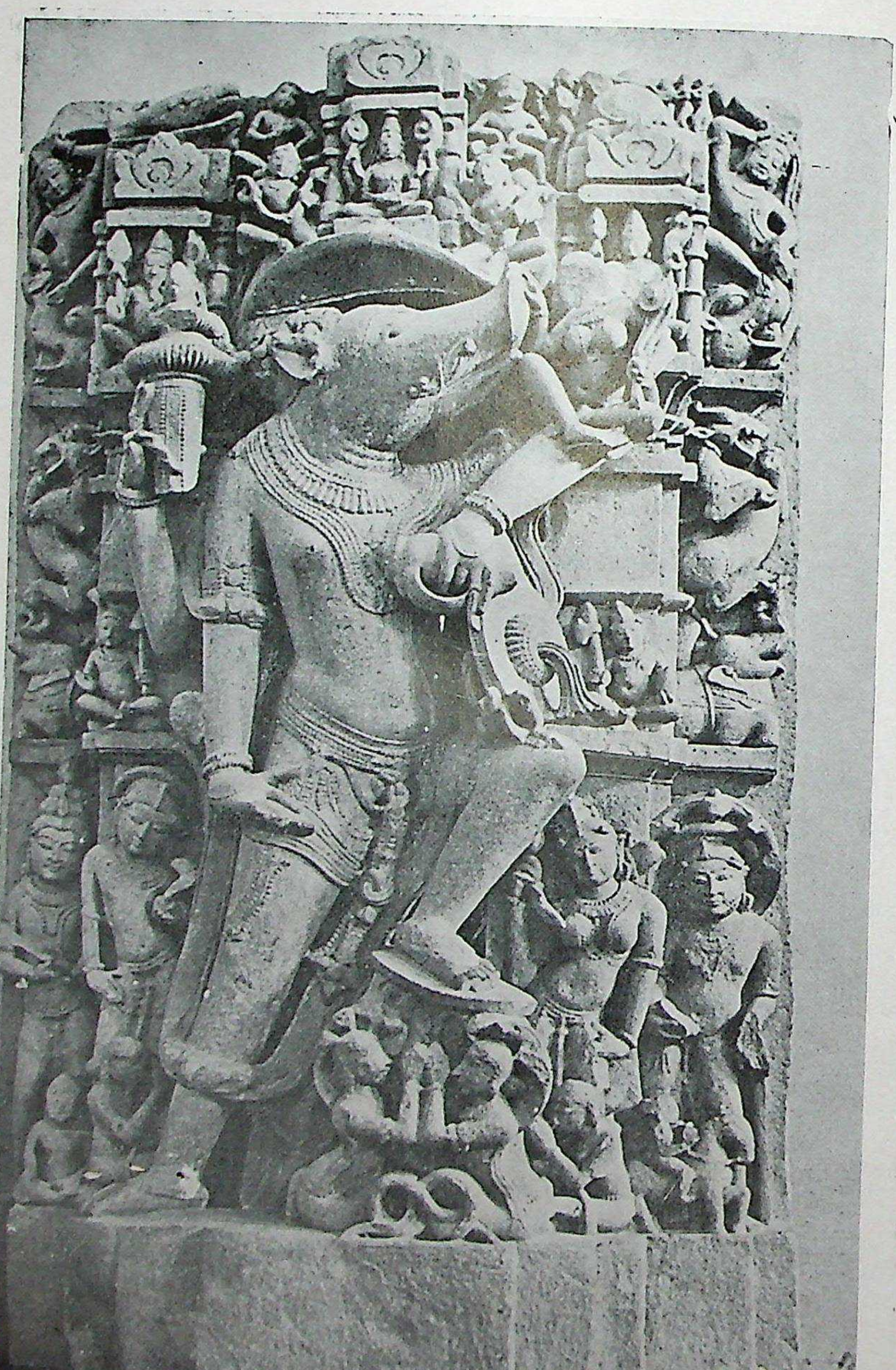

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

5

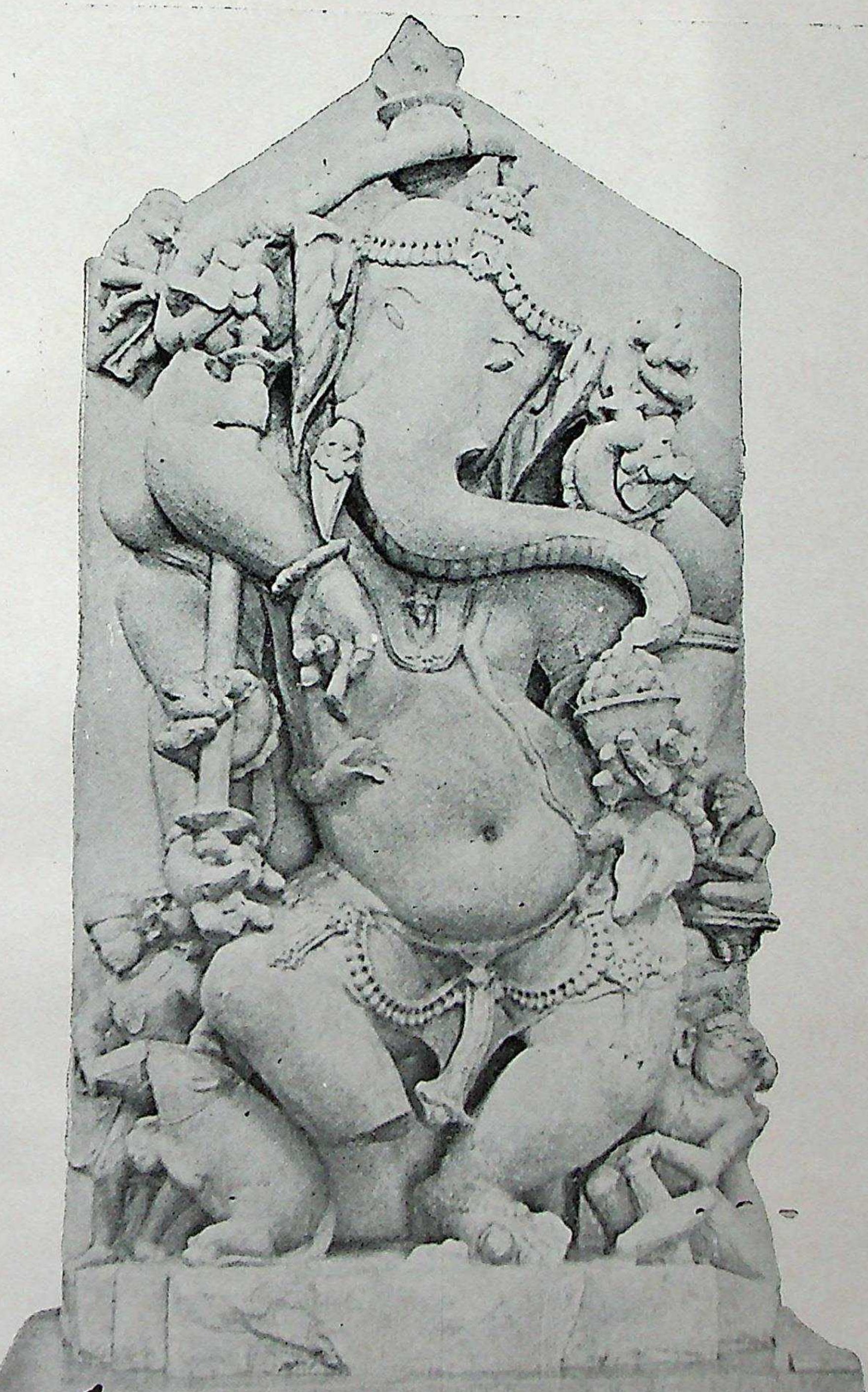

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

6

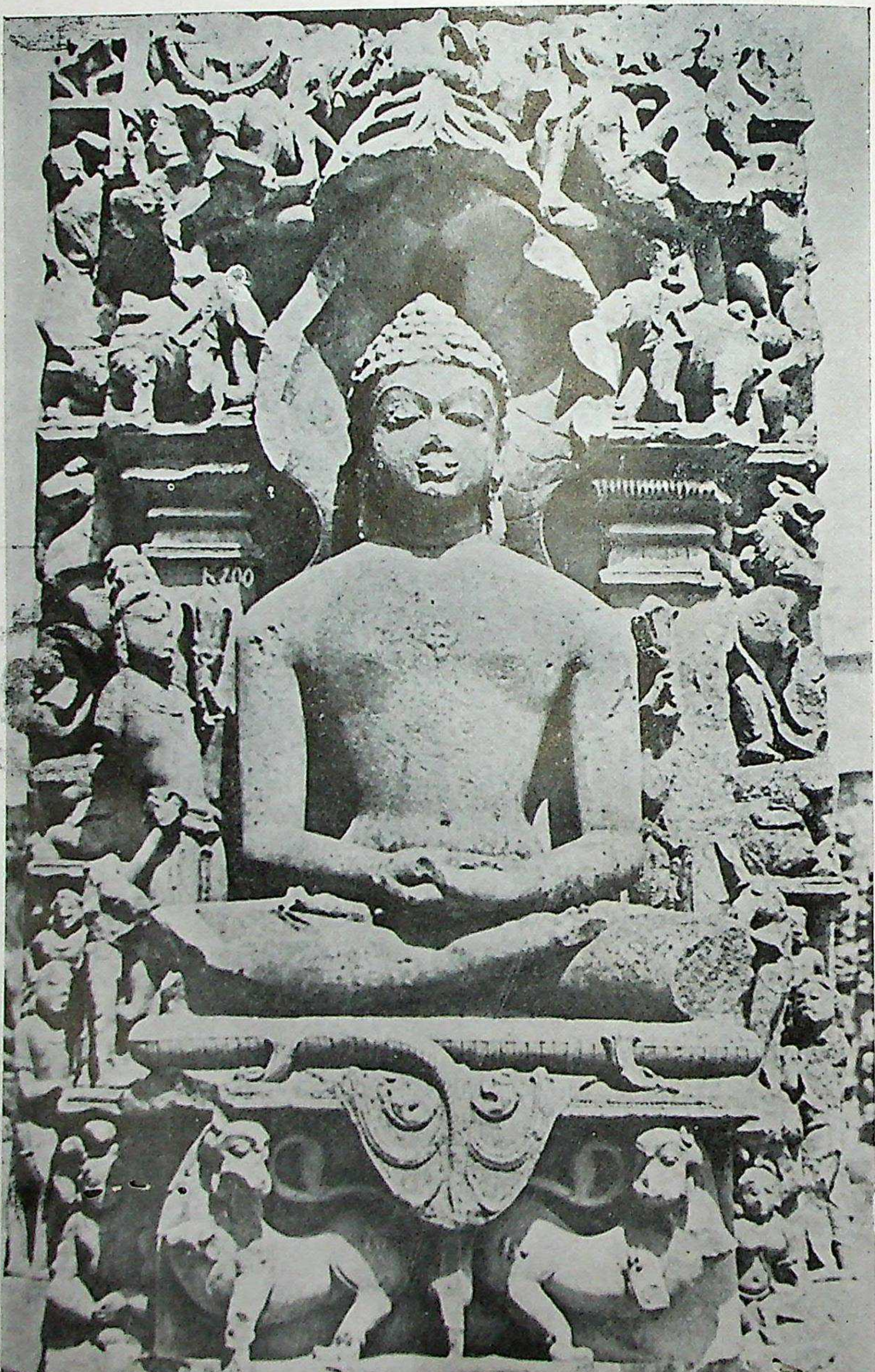

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

7

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

8

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

9

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

10

11

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

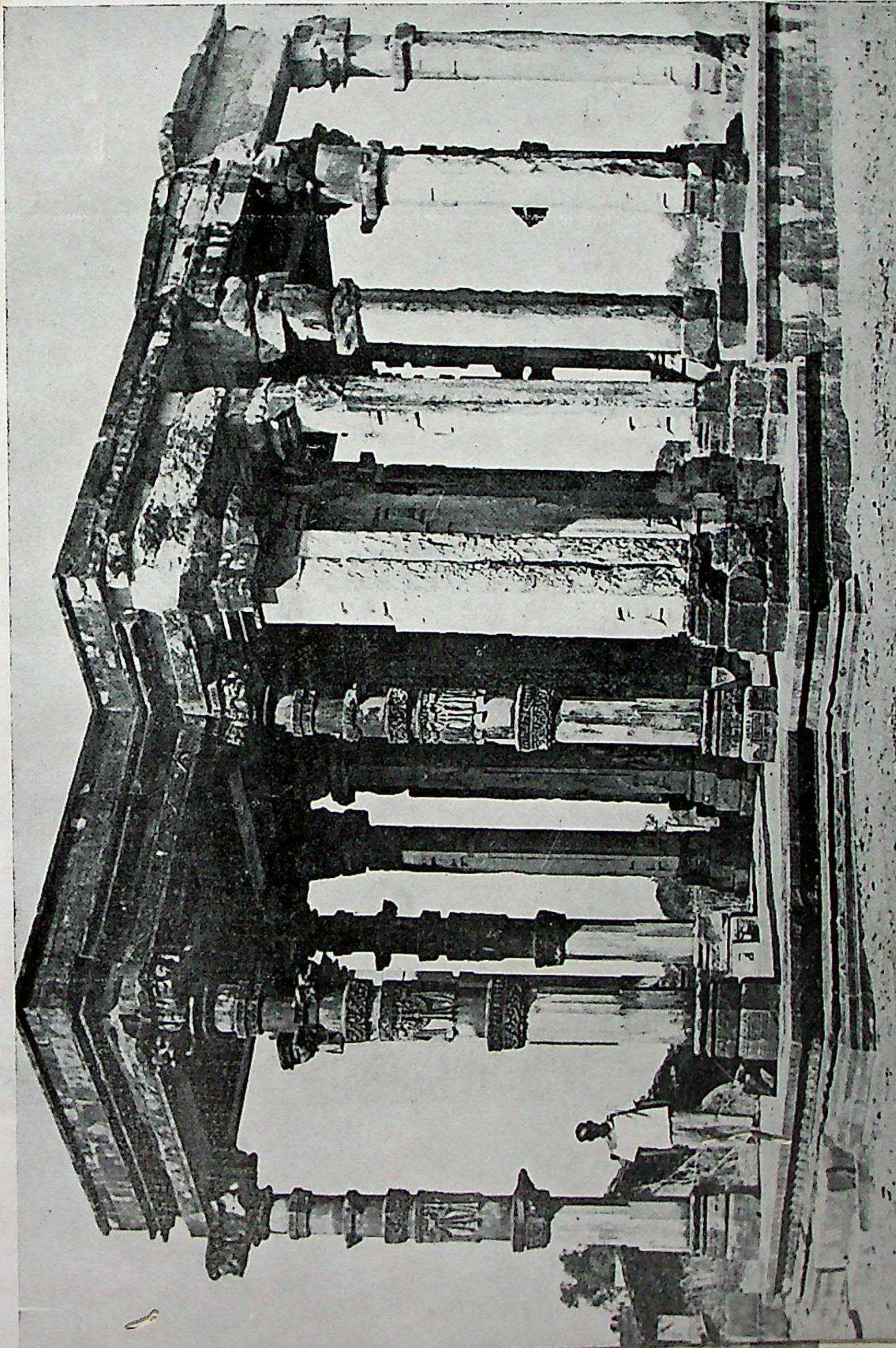

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

12

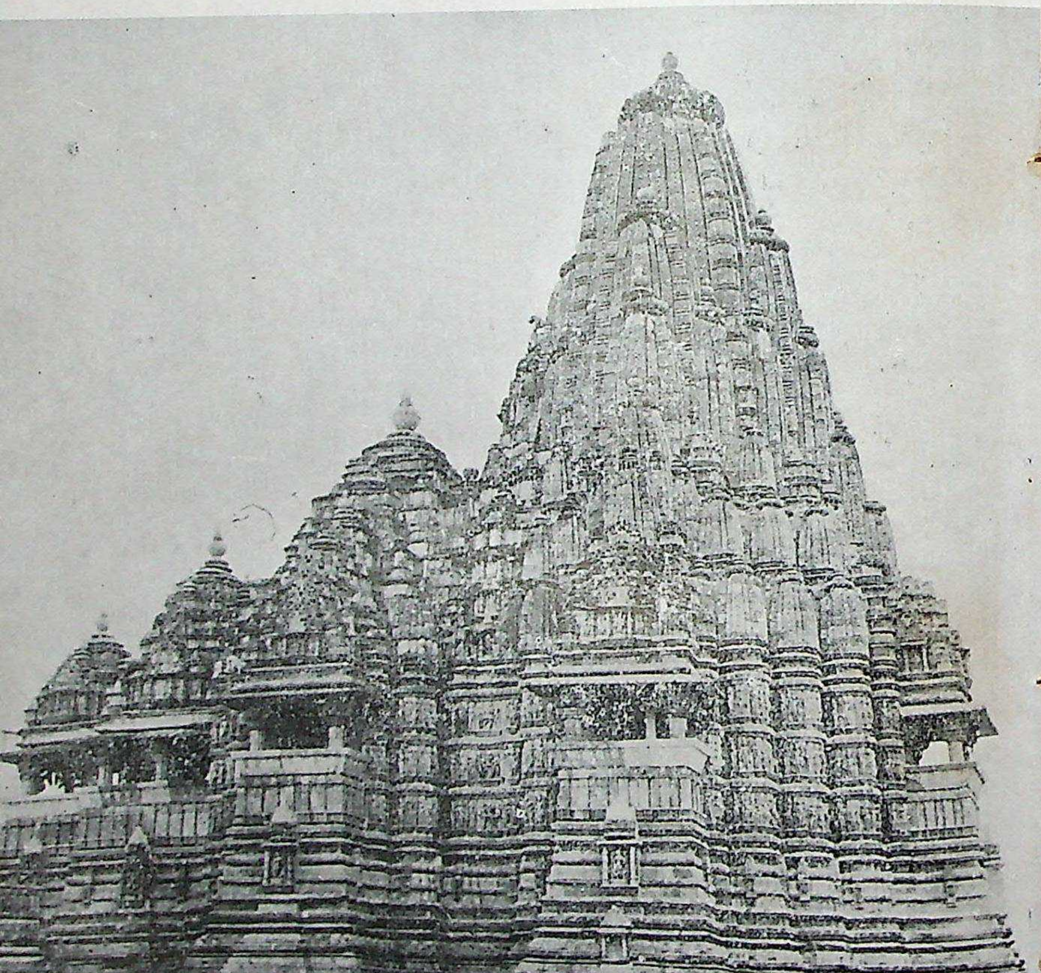

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

14

13

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

15

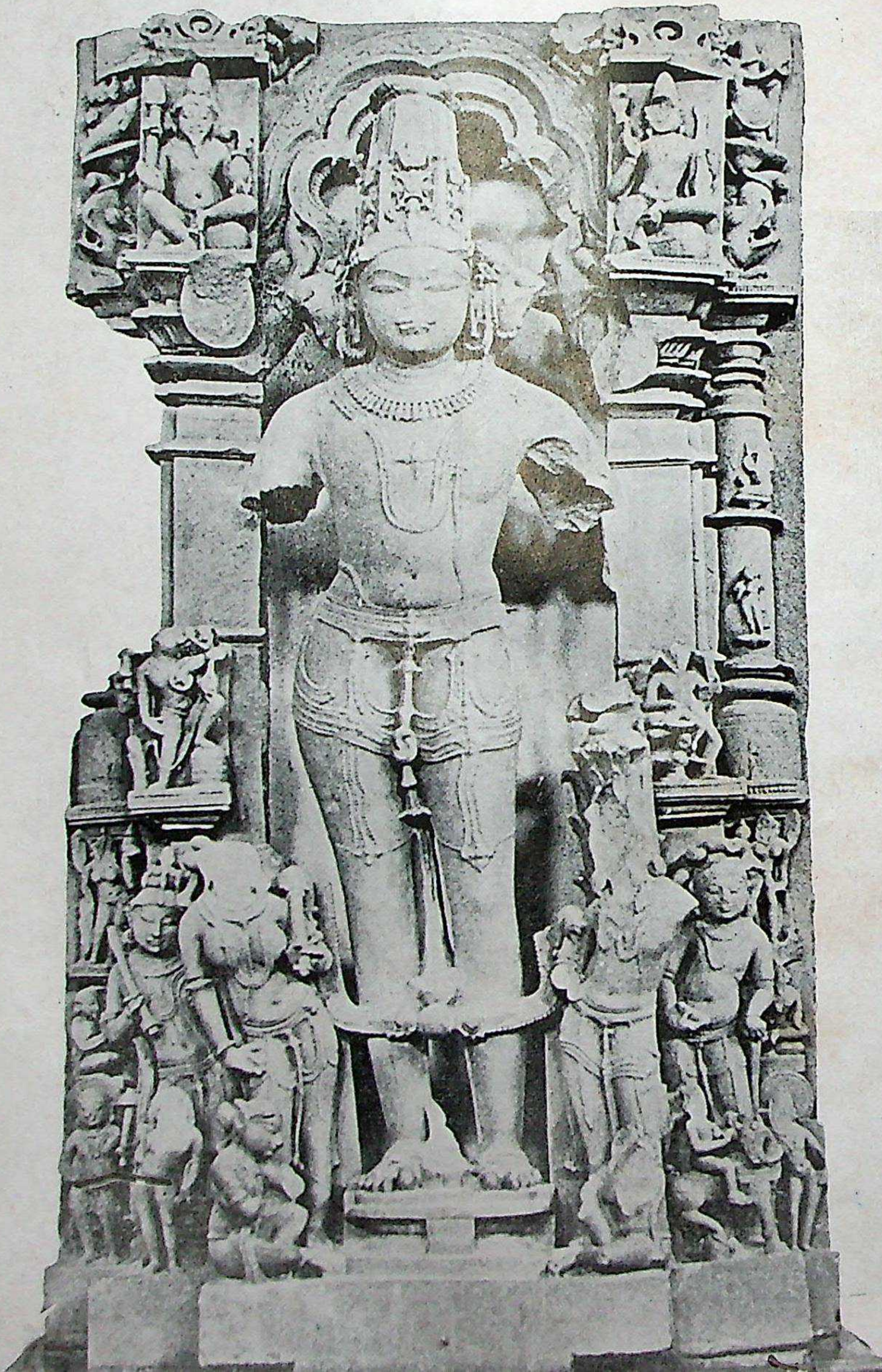

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

16

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

17

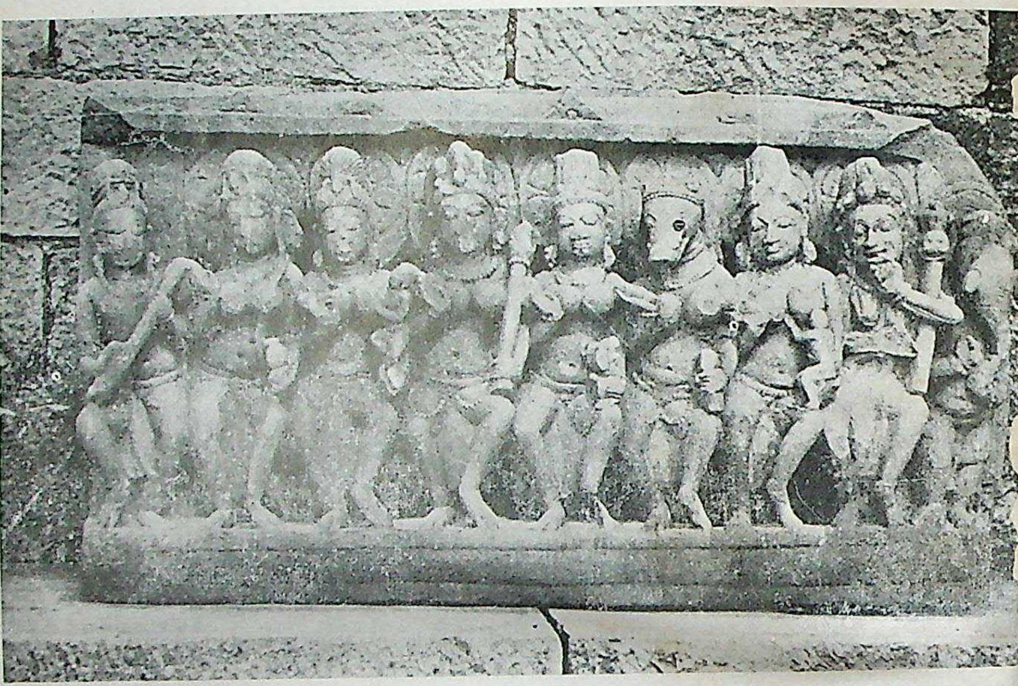

18

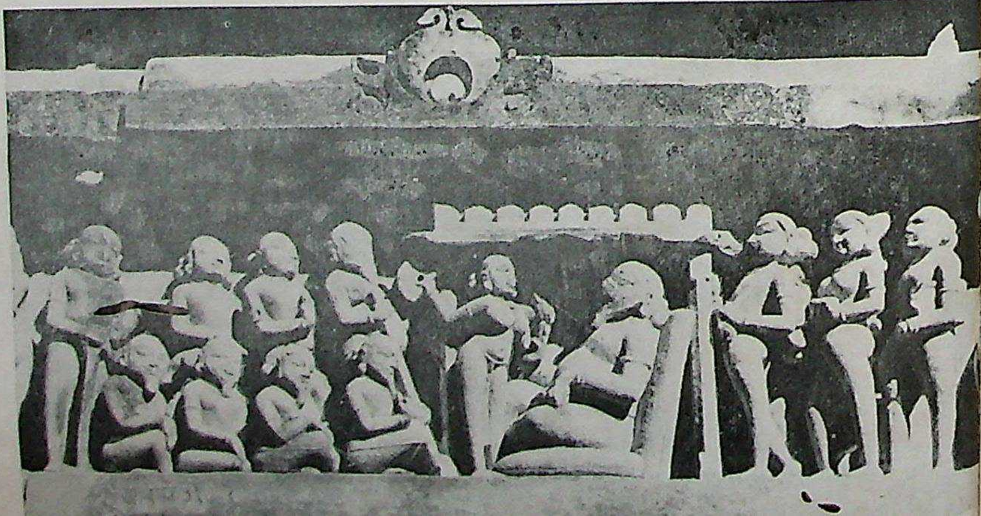

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अनुक्रमणी

अग्रवाल, (डा०) उर्मिला, 27
अजयदेव, 13
'अर्थशास्त्र', 1
अभिलेख/लेख/स्तंभलेख
—कालिंजर स्तंभ, 122
—कोकल्ल के (वि० सं० 1058) खजुराहो, 3, 11, 141
—खजुराहो जैन मूर्ति, 40
—खजुराहो लक्ष्मण मंदिर, 3, 7, 8, 9, 34, 36, 40, 51, 53, 127, 128
—खजुराहो विश्वनाथ मंदिर, 7 10, 35, 39
—चंदेल, 17, 25, 28, 29
—चंदेल शासक परमर्दिदेव का कालिंजर, 1
—देवगढ़ प्रस्तर, 35, 37
—धंग का वि० सं० 1059 का, 127
—धंग के खजुराहो विश्वनाथ मंदिर, 3, 147
—परमर्दि के बटेश्वर, 26
—बंधुवर्मा के मंदसौर शिला, 91
—बटेश्वर, 37
—भोजवर्मा के अजयगढ़ प्रस्तर, 3, 35, 37
—मदनवर्मा के मरु प्रस्तर, 10, 26, 37
—मदनवर्मा के कालिंजर, 28
—मदनपुर, 37
—महोबा प्रस्तर, 2, 35
—वर्ष 1011 का खजुराहो/पार्श्व जैन मंदिर, 26, 40, 53, 126
—वि० सं० 1093 के सास-बहू, 10
—शांतिनाथ मूर्ति, 26, 40
—हर्ष का खजुराहो प्रस्तर, 125
—हर्षदेव के खंडित प्रस्तर, 8
'अभिज्ञान शाकुंतल', 82
अलबेरूनी, 2, 4, 21
अली, (प्रो०) एस० एम०, 1
'अष्टाध्यायी', 1
आल्हू, 3
इब्न-उल-अतहर, 11
इब्नबतूता, 2
ऐबक, कुतबुद्दीन, 5, 13
कनिंघम, 2, 28, 39, 63, 64, 95
'कर्पूरमंजरी', 121
कला
—खजुराहो, 28, 29, 73, 117
—चंदेल, 25, 27, 29, 48, 49
—जैन मूर्ति, 114
—मथुरा, 94
—वास्तु, 28, 44
'कादंबरी', 29

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

कीर्तिराज, 12
कीर्तिवर्मा, 10, 12, 26, 35, 122
कीलहार्न, 127
कुमारगुप्त प्रथम, 91
कूर्मपुराण, 85
कृष्णदेव, 8, 11, 12, 47, 53
कौटिल्य, 1
क्षितिपालदेव, 125
क्षेमेंद्र, 70
खजुराहो/खर्जुरवाहक/खजूरपुर, 1, 2, 3, 11
खजुराहो के जैन संग्रहालय, 100, 101, 102, 103
खजुराहो संग्रहालय, 19, 23, 24, 41, 47, 71, 72, 73, 75, 76, 78, 81, 83, 84, 85, 89, 91, 95, 96, 99, 102, 103, 112
खजुराहो शिल्प, 17, 18, 19, 20, 23, 24, 27, 28, 30, 36, 38
गंड, 11
गजनवी, महमूद, 4, 5, 10, 11
गांगुली, 87
गांगेय, 4, 12
गाहडवाल, गोविंद्र चंद्र, 12
गीता, 69, 79
गोरी, शाहबुद्दीन मुहम्मद, 13
गौड, करणिक जद्द, 128, 141
'चिचिटो', 2
चौहान, पृथ्वीराज, 5, 13
छतरपुर, 1, 125
छिच्छ (सूत्रधार), 148
जयगण, 128
जयदेव, 70, 146
जयपाल, 10
जयपुर दुर्ग (अजयढ़), 3
जयवर्मा, 12, 35
जयशक्ति, 2, 7, 137
जयसिंह सिद्धराज (चालुक्य), 12
जिनसेन, 99
जैन, नीरज, 102
टामस, 122
टाल्मी, 2
डहाल/डभाला, 2
डाही दानपत्र, 17
'तंत्रवार्त्तिक', 70
ताम्रपत्र
—चरखारी, 17, 28, 35
—पछार, 25
—महोबा, 35
—सागर, 25, 26
—सेमरा, 35
देव, श्रीप्रतापसिंह जू, 125
देववर्मा, 12
देवी, पुष्पा, 9, 159, 160
देवीपुराण, 90
धंग, 9, 10, 11, 14, 26, 35, 40, 43, 57, 127, 141, 147, 160
नंदन कवि, 148
नन्नुक, 7, 8, 147, 157
'निनोराताल'/खजुराहो सागर, 1
परमर्दि/परमर्दिदेव, 13, 25, 40
पाणिनि, 1
पार्जिटर, 1
पृथ्वीवर्मा, 12
'प्रबोध चंद्रोदय', 17, 122
फर्गुसन, 64

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

फरिश्ता, 10
फ्लीट (डा०), 2
बर्ट, (कप्तान) टी० एस०, 147
बाशम, (प्रो०) ए० एल०, 119, 120
बाहुबली, 103
बोस, डा० निमाइसदन, 17
ब्राउन, पर्सी, 44, 45
भंडारकर, आर० जी०, 82
भट्ट, कुमारिल, 70
भट्टाचार्य, बी० सी०, 87, 88
भट्टाचार्य, (डा०) तारापद, 120
'भरतनाट्यशास्त्र', 84
'भागवतपुराण', 69, 70, 74, 75, 76, 77, 79, 81, 86
भोज द्वितीय, 8
भोजवर्मा, 14
भोटनाथ (तिब्बत, भूटान का राजा), 9
मंदिर
—आदिनाथ, 60, 62, 64, 108, 114, 115, 116
—कंदरिया महादेव, 12, 19, 23, 27, 38, 44, 48 58, 83, 84, 88, 90, 108, 117, 119
—ककरामठ, 35
—घंटई, 54, 64, 102
—चतुर्भुज, 35, 37, 48, 63, 71 108, 112, 113
—चित्रगुप्त, 11, 18, 21, 39, 48, 58, 83, 93, 108
—चौंसठ योगिनी, 47, 48, 49
—जवारी, 35, 48, 62, 63, 108, 112
—देवी जगदंबी 11, 19, 35, 48, 57, 89, 90, 108
—दूलादेव, 23, 37, 38, 47, 48, 63, 85, 94, 108, 112
—नंदी, 57
—पार्श्वनाथ, 21, 22, 24, 28, 48, 52, 53, 54, 56, 77, 78, 80, 86, 103, 110, 114, 116, 117, 126
—प्रमथदेव (शिव मंदिर), 37
—ब्रह्मा, 37, 47, 48, 49, 50, 51, 60
—मातंगेश्वर, 8, 37, 47, 50
—लक्ष्मण, 9, 19, 20, 21, 23, 28, 35, 36, 39, 42, 47, 48, 50, 51, 52, 53, 54, 75, 77, 78, 79, 80, 83 92, 93, 95, 108, 109, 112, 117, 119, 129
—लालगुंआ महादेव, 37, 38, 47, 48, 49, 50
—वराह, 35, 47, 50
—वामन, 35, 48, 60, 109, 125
—विश्वनाथ, 19, 21, 22, 23, 28, 37, 38, 48, 56, 57, 59, 79, 87, 88, 108, 119, 141
—वैकुंठनाथ (लक्ष्मण), 10
—शांतिनाथ, 23, 41, 100, 101, 113
मदनवर्मा, 12, 13, 40

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

महाभारत, 1, 21, 69, 70, 73, 82, 87, 94
महापुराण, 98
महीपाल (क्षितिपाल देव), 8
महोबा, 1, 5, 10, 13
माधव कवि, 128, 141
मिश्र, कृष्ण, 17
मौर्य, चंद्रगुप्त, 2, 113
यशोवर्मा (द्वितीय), 13
यशोवर्मा (लक्ष्मवर्मा), 89, 35, 36, 37, 51, 53, 125
युग
—चंदेल, 27, 122
—मौर्य, 1
राजशेखर, 121
राजाभोज, 4
राम कवि, 148
राहिल चंदेल, 8, 34, 137, 157
राष्ट्रकूट इंद्र तृतीय, 8
रे, (डा०) हेमचंद्र, 7, 28
लेवी, (प्रो०) सिल्वां, 122
वंश
—गृहपति, 26, 37, 40, 145
—चंदेल, 12, 51, 147
—चेदि, 1
—पद्म, 145
वराहपुराण, 85
वाक्पति, 7, 137, 157
वासेक, 3
विजयपाल, 12
विजयशक्ति, 7, 8, 137, 157
विनायकपाल देव, 141
विद्याप्रकाश (डा०), 119
विष्णुपुराण, 88, 91
विष्णुधर्मोत्तर पुराण, 83, 86, 90
वीरवर्मा, 17
वेद
—अथर्व, 81
—ऋग्, 83, 94
संद्रावतीज, 2
सतना, 1
सरस्वती, (प्रो०) सरसीकुमार, 47
सल्लक्षण वर्मा, 12
सांकलिया, (डा०) एच० डी०, 26
सिकंदर महान, 2
सुबुक्तगीन, 10
स्कंदपुराण, 2
स्मिथ (डा०), 64
हटापति देवपाल, 9
हम्मीरवर्मा, 14
हरपालपुर, 1
हर्ष/हर्षवर्धन, 3, 8
हर्षराज (श्री), 137, 138, 158
ह्वेनसांग, 2, 3, 4
हेरंबपाल, 9
होडीबाला, 4

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

CC-0. Agamnigam Digital Presevation Foundation, Chandigarh

अन्य महत्वपूर्ण प्रकाशन

नीहाररंजन राय
मौर्य तथा मौर्योत्तर कला

नीहाररंजन राय
भारतीय कला का अध्ययन

रमानाथ मिश्र
भारतीय मूर्तिकला

द्विजेंद्र नारायण झा तथा अन्य
प्राचीन भारत

रामशरण शर्मा
प्राचीन भारत में राजनीतिक विचार और संस्थाएं

रामशरण शर्मा
शूद्रों का प्राचीन इतिहास

ओमप्रकाश
प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास

सुवीरा जायसवाल
वैष्णव धर्म का उद्भव और विकास

दामोदर धर्मानंद कोसंबी
मिथक और यथार्थ

रोमिला थापर
अशोक तथा मौर्य साम्राज्य का पतन

M

दि मैकमिलन कंपनी आफ इंडिया लिमिटेड
नई दिल्ली बंबई कलकत्ता मद्रास